

आर्यजगत
विशेषांक

भारत को
हिन्दूराज्य
घोषित करो



नए भारत का निर्माण करें

जो भारत की आजादी के लिए लड़े, आओ ! उनके स्वप्नों का भारत निर्माण करें ! एक ऐसे भारत का—

—जिसमें खेतों और कारखानों के श्रमिक राष्ट्र को ही सर्वोपरि समझें और उत्पादन-वृद्धि में योगदान दें

—जिसमें राष्ट्र के अर्धभाग महिलाओं को सत्ता और दायित्व में उनका पूरा भाग मिले और उनका दासी-स्वरूप समाप्त हो,

—जिसमें हमारी सन्तान खुशहाल बने, गर्व का अहसास करे,

—जिसमें ज्ञान, साहस और आत्म-संयम का विकास हो और जीवन के नए मूल्य बनें।

हां, ऐसे गतिशील और शक्तिशाली भारत का निर्माण करें जिसमें हर इन्सान न सिर्फ अपने धर्म, भाषा और प्रान्त की बात सोचे, वरन् पूरे भारत का ध्यान करे।

—इन्दिरा गांधी

भारत को हिन्दू (आर्य) राज्य घोषित करो

सम्पादक
क्षितीश वेदालंकार

आर्य प्रादेशिक सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-१

भारत को हिन्दू राज्य घोषित करो

आर्य जगत् (विशेषांक)

वर्ष ४४] [अङ्क ३९, ४०, ४१

सृष्टि संवत् १९७२९४९०८२

दयानन्दाब्द १५७

विक्रम संवत् २०३८

१८ अक्तूबर, १९८१

इस पुस्तक-विशेषांक का मूल्य—१० रु०

वार्षिक मूल्य—१५ रु०

प्रकाशक :

आर्य प्रादेशिक सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-१

मुद्रक :

एस० नारायण एण्ड सन्स,

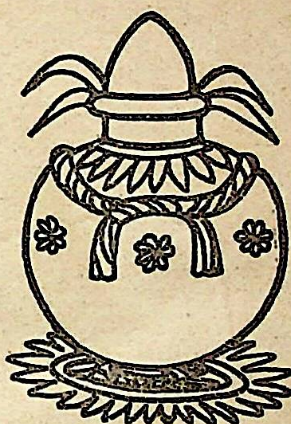
७११७/१८, पहाड़ी धीरज, दिल्ली



हिन्दवी राज का देश में शंख बाजे



विराट् हिन्दू समाज को
संगठित कर आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य के स्वप्नद्रष्टा
महर्षि दयानन्द सरस्वती



अपनी बात



"तुम्हारे जैसा सुशिक्षित, प्रखर राष्ट्रवादी और देशभक्त व्यक्ति भी हिन्दुत्व, हिन्दू राज्य और प्राचीन दकियानूसी परम्पराओं की वात करने लगे, तो देश का उद्धार हो चुका ?"

जब एक अत्यन्त घनिष्ट और सदाशयी मित्र ने इस प्रकार की बात कही, तब आश्चर्य उतना नहीं हुआ, जितना क्षोभ हुआ। हम जानते हैं कि राजनीति में किसी को सब से बड़ी गाली देनी हो, तो उसके लिए केवल तीन शब्द काफी हैं—सम्प्रदायवादी, साम्राज्यवादी और प्रतिक्रियावादी। प्रायः राजनीतिज्ञ लोग अपने से इतर दलों से सम्बद्ध लोगों को उक्त तीन अपशब्दों से सम्बोधित कर के ही समझते हैं कि उन्होंने मैदान मार लिया।

इन लोगों की दृष्टि में हिन्दू शब्द ही साम्प्रदायिकता का वाचक है, हिंदूराज्य शब्द का प्रयोग विशुद्ध साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का परिणाम है और औद्योगिक क्रान्ति तथा विज्ञान-प्रधान आधुनिक युग में जब कोई प्राचीन परम्पराओं की वात करता है, तो वह सिवाय प्रतिक्रियावादी के और कुछ नहीं हो सकता।

पर क्या वस्तुस्थिति यही है ?

हम जोर देकर कहेंगे—नहीं, हरगिज नहीं । न तो हिन्दू शब्द साम्प्रदायिक है, न ही हिन्दू राज्य शब्द साम्राज्यवाद या विस्तारवाद का परिचायक है, और न प्राचीन परम्पराओं की बात करना प्रतिक्रियावाद है ।

संक्षेप से एक एक बात को लें । सबसे पहले, हमारा निवेदन यह है कि हिन्दू शब्द किसी सम्प्रदाय, पंथ या मजहब का द्योतक नहीं । सच तो यह है कि आजकल जिसे मजहब या Religion कहा जाता है, उस अर्थ में धर्म शब्द का प्रयोग ही गलत है । 'धर्म' शब्द का शास्त्रीय अर्थ है—धारण करने वाला ('धारणाद् धर्म इत्याहु:') जिसने मानवता को धारण किया हुआ है, जिसके कारण मानवता टिकी हुई है, उसका नाम धर्म है। इसका सम्बन्ध न किसी व्यक्ति-विशेष के साथ है, न किसी सम्प्रदाय-विशेष के साथ । संसार के सभी मानव परस्पर भ्रातृत्व और मानवता के बन्धन से बंधे हैं । मानवता एक है, तो उसका धर्म भी एक ही है । उस धर्म का नाम भी है मानव धर्म अर्थात् मनु-प्रतिपादित धर्म । क्या गाय का धर्म गोत्व के सिवाय कुछ और हो सकता है ? या वृक्ष का धर्म वृक्षत्व के सिवाय कुछ और ? वह मानव धर्म सार्वत्रिक, सार्वभौमिक और सार्वकालिक होना चाहिए । स्वयं मनु ने उस धर्म का प्रतिपादन इन शब्दों में किया है—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।

श्लोक की शब्दावली इतनी सरल है कि अलग से इसका अर्थ करने की आवश्यकता नहीं । हम पूछते है कि बाइबिल के 'सरमन आन द माउण्ट' में, या योग-दर्शन के यम और नियम में, या बौद्धों के पंचशील और 'चत्वारि आर्यसत्यानि' में, अथवा जैनियों के पांचों अणुव्रतों में, और इस्लाम के रोजा-जकात-नमाज आदि में क्या अन्तर है ? निस्संदेह, संसार के सब मतों की सब बातें आपस में नहीं मिलतीं, पर कुछ बातें अवश्य मिलती हैं, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता । इसलिए सार्वभौम मानव धर्म का पता लगाने के लिए सब से सरल उपाय यह है कि इन सब मतों में जितनी भी समान बातें हैं उन सबको एकत्र कर लें, तो हम देखेंगे कि उन सबका समावेश मनु प्रतिपादित दस लक्षणों में हो जाता है । इसलिए मानव धर्म की कसौटी यह है कि सब मतों में जो महत्तम समापवर्तक है—Highest common factor है, वही मानव धर्म है । हिन्दू भी यदि धर्म है, तो उससे भिन्न

नहीं है। ऐसे धर्म में साम्प्रदायिकता की शंका करना स्वयं मानवता में और मानव बुद्धि में शंका करना है।

पर हम तो यहां इससे भी आगे बढ़कर एक और स्थापना करना चाहते हैं और वह स्थापना यह है कि हिन्दू नाम का धर्म नहीं, देश है। धर्म के लिए 'हिन्दू' का प्रयोग गौण है, मुख्य रूप से उसका वाचक देश ही है। अगर यह स्थिति स्वीकार कर ली जाये, तो न केवल हिन्दू शब्द से साम्प्रदायिकता का आरोप स्वतः हट जाएगा, उसका स्वरूप भी व्यापक हो जाएगा, अनेक समस्याओं का अनायास समाधान हो जाएगा और यह शब्द भी एक नई आभा से मंडित हो उठेगा। इस पुस्तक (विशेषांक) के अनेक लेखों में सुधी विद्वानों ने इसी दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया है। हम जानते हैं कि आज तक हिन्दू शब्द की जितनी परिभाषाए की गई हैं उनमें अव्याप्ति या अतिव्याप्ति का दोष रहा है और वे सर्वमान्य नहीं हो पाई हैं। पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण यही है कि जिस मान्यता से अधिकतम समस्याओं का अधिकतम समाधान हो सके, उसे मान लेना चाहिए।

सन् १९६५ की बात है। उस समय समस्त संसार में भारतीय दर्शन और भारतीय संस्कृति के सब से प्रबल प्रवक्ता डा० सर्वेपल्ली राधाकृष्णन भारत के राष्ट्रपति थे। २६ जनवरी के गणराज्य दिवस की पूर्व संध्या को (२५ जनवरी की रात को) उन्होंने सारे राष्ट्र के नाम जो संदेश आकाशवाणी से प्रसारित किया था, उसमें उन्होंने संस्कृत के एक श्लोक का उच्चारण किया था, जिसे सुनकर हम तो हर्ष-विह्वल हो उछल पड़े थे। यदि सारा राष्ट्र अपने राष्ट्रपति की उस चिन्तन-शैली को स्वीकार करले, तो न जाने राह के कितने कांटे स्वयं साफ हो जाएं। वह श्लोक इस प्रकार था—

हिमालयं समारभ्य यावदिन्दु सरोवरम्।
हिन्दुस्थानमिति ख्यातमाद्यन्ताक्षरयोगतः॥

- हिमालय से लेकर इन्दु सरोवर (कन्या कुमारी) पर्यन्त, हिमालय के आदि अक्षर (हि) और इन्दु के अन्तिम अक्षर (न्दु) को मिलाकर बना हिन्दु शब्द हिन्दुस्थान का वाचक है।

यह श्लोक कुलार्णव तंत्र का बताया जाता है। इसी प्रकार का एक अन्य श्लोक कुछ पाठ भेद के साथ बार्हस्पत्य शास्त्र का भी दृष्टिगोचर होता है—

हिमालयं समारभ्य यावदिन्दु सरोवरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते ।।

—हिमालय से इन्दु सरोवर पर्यन्त इस देवनिर्मित देश को हिन्दुस्थान कहते हैं।

हिन्दुस्थान देवनिर्मित देश क्यों है ? इसलिए कि न तो हिमालय मनुष्य-निर्मित है और न ही हिन्द महासागर मनुष्य-निर्मित हैं। दोनों देव-निर्मित अर्थात् प्रकृति-प्रदत्त अथवा ईश्वर-निर्मित हैं। जिसकी सीमाएं स्वयं देव-निर्मित हों, ऐसा सौभाग्य और कितने देशों को प्राप्त है ? विष्णु पुराण में तथा श्रीमद्भागवत पुराण में इस भारतभूमि की प्रशंसा में जो कुछ कहा गया है, उसके उद्धरण हम यहां जान बूझकर नहीं दे रहे हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि हिन्दु नाम का देश है, यह हमारी कोरी कल्पना नहीं, बल्कि इसका शास्त्रीय आधार है।

अगली वात हम यह कहेंगे कि न केवल इस देश का नाम हिन्दू है, प्रत्युत इसके निवासियों का नाम भी हिन्दू है। यहां हम साहित्य शास्त्र की तात्स्थ्योपाधि का उल्लेख करेंगे। काव्य-शास्त्र के मर्मज्ञों को समझाने की आवश्यकता नहीं कि जव वक्ता को यह अभीष्ट होता है कि 'मंच पर बैठे लोग पुकार रहे हैं' (मंचस्थाः क्रोशन्ति), तव वह केवल इतना ही कह कर अपनी वात को भली भांति प्रकट कर देता है कि 'मंच पुकार रहे हैं' (मंचाः क्रोशन्ति)। जैसे 'मंच पर बैठे हुए लोगों' को केवल 'मंच' शब्द से अभिहित कया गया, वैसे ही हिन्दुस्थान में स्थित लोगों को भी केवल 'हिन्दू' शब्द से सम्वोधित किया गया। इसलिए हिन्दू शब्द का अभिप्राय हुआ– भारतीय।

सीधा प्रश्न होगा कि तो क्या भारत में रहने वाले किसी भी धर्माव-लम्वी को 'हिन्दू' कहा जाएगा ? हमारा उत्तर है—'क्यों नहीं।' प्रत्येक भारतवासी को, फिर चाहे वह इस्लाम, ईसाइयत या किसी भी मत का मानने वाला क्यों न हो, किसी भी जाति, कुल, वंश, वर्ण रंग और प्रदेश का हो, उसे अपने आपको स्वाभाविक रूप से, जन्मना, भारतीय अर्थात् हिन्दू कहने का अधिकार ही नहीं, विशेषाधिकार है। हिन्दू अर्थात् भारतीय। पर हां भारत का प्रत्येक निवासी हिन्दू तो है, पर भारत का निवासी होने मात्र से

उसे इस देश की नागरिकता का या वोट का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। नागरिकता की पहली शर्त है: – जिस देश के आप नागरिक हैं उसके प्रति पूर्ण वफादारी। यदि भारत के प्रति आपकी वफादारी दूसरे दर्जे पर है, पहले दर्जे पर वफादारी मक्का-मदीना, बैतुलहम या जेरुसलम के प्रति है, तो यह नागरिकता की शर्त का उल्लंघन है। और जव नागरिकता नही, तो वोट का अधिकार कैसा ?

आज तक स्वतंत्र भारत के जितने प्रधान मंत्री हुए हैं, वे सव १५ अगस्त के स्वाधीनता-दिवस पर लाल किले की प्राचीर से सदा विशाल जन समुदाय से 'जय हिन्द' का नारा लगवाते रहे हैं। जव 'जय हिन्द' हमारा राष्ट्रीय नारा है, तव 'जय हिन्दू' में अराष्ट्रीयता कैसे हो सकती है ? गुलगुले खायें और गुड़ से परहेज ? यह सरासर आत्मवंचना है। भाषाशास्त्र, साहित्य शास्त्र, समाज शास्त्र, इतिहास, भूगोल और परम्परा—इन सभी दृष्टियों से हिन्द, हिन्दू, हिन्दी—ये तीनों परस्पर अविनाभाव रूप से जुड़े हैं, इन्हें अलग नहीं किया जा सकता। वीर सावरकर ने यदि हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान का नारा लगाया था, या महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यावर्त, आर्य-भाषा और आर्य शब्द के गौरव को जगाया था, या आधुनिक राजनीति-शास्त्र-विचक्षण जिसे भारत, भारती और भारतीय कहना पसंद करेंगे—उन सवका एक ही अर्थ है, उनमें कही कोई अन्तर नहीं है। तो यह समीकरण यों बनेगा—

आर्यभाषा, आर्य, आर्यावर्त
भारती, भारतीय, भारत
हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान (हिन्द)

यदि आर्य भाषा और भारती के स्थान पर हिन्दी शब्द अपने लोकानुसारी प्रयोग के बल से सर्वस्वीकृत हो गया और उसे राष्ट्रभाषा और राज-भाषा का पद प्राप्त हो गया, और हिन्द शब्द 'जयहिन्द' में प्रतिष्ठित होकर राष्ट्रीय जयघोष बन गया, तव फिर हिन्दू शब्द को अराष्ट्रीय और साम्प्रदायिक कहने वाले व्यक्ति की बुद्धि के लिए क्या कहा जाए ?

रही वात हिन्दू राज्य की। जव हिन्दू शब्द भारतीय का वाचक हो गया, तव इस वात में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है कि भारत में भारतीयों का राज्य हो। शर्त यही है कि भारत देश, भारतीय धर्म, भार-

तीय संस्कृति और भारतीय पूर्वजों की उदात्त परम्परा से अपने आपको जोड़ना होगा। हिन्दुत्व में सदियों के ऐतिहासिक काल-प्रवाह में जो कड़ा-कर्कट जमा हो गया है, उसे निकाल फेंको, तुम्हारी वैज्ञानिक बुद्धि, राष्ट्र-भक्ति से ओत प्रोत अन्तःकरण और राजनीतिक अभिनिवेश से परे लोक-कल्याणकारी दृष्टि जिसे सही समझती है, वही हिन्दुत्व है, वही आधुनिक धर्म है और उसी की स्थापना के लिए हिन्दू राज्य का औचित्य है।

अब प्रश्न यह है कि हम जिस हिन्दू राज्य की वकालत कर रहे हैं, वह कोई धार्मिक राज्य (Theocratic State) होगा या धर्म-निरपेक्ष राज्य (Secular State)। इस प्रश्न का उत्तर यह है कि केवल हिन्दू राज्य ही सही अर्थों में सम्प्रदाय-निरपेक्ष राज्य ('धर्म-निरपेक्ष' शब्द का प्रचलन गलती से हो गया है, इसके स्थान पर 'सम्प्रदाय-निरपेक्ष' शब्द चलना चाहिए) हो सकता है। क्योंकि **'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्'** और 'शृण्वन्तु सर्वे अमृतस्य पुत्राः' जैसी सार्वभौम और असाम्प्रदायिक भावना सिवाय हिन्दुत्व के और कहां है? और जिस प्रकार हिन्दुओं ने अपने देश में पारसियों, यहूदियों ईसाइयों और मुसलमानों को ससम्मान स्थान दिया है, वैसा आज तक संसार के और किस देश ने किया है?

हिन्दुओं को छोड़कर अन्य सब मत-मतान्तर अपने धर्म में अक्ल के दखल को स्वीकार नहीं करते। केवलमात्र हिन्दू ही हैं जिनका धर्म डिण्डिम घोष के साथ कहता है—**'यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मं वेद नेतरः'**—तर्क से अनुसन्धान करने वाला ही धर्म को जानता है। एक तरफ ऐसे धर्म हैं जो ज्ञान-वृक्ष के फल के आस्वादन को पाप मानते हैं, दूसरी तरफ हिन्दू हैं जो कहते हैं कि वेद का अर्थ ही ज्ञान है। 'धीः' तथा 'विद्या'—अर्थात् बुद्धि और उसके विकास द्वारा प्राप्त ज्ञान-विज्ञान को धर्म के दस मौलिक लक्षणों में गिनने वाले हिन्दुओं के सिवाय और कौन हैं?

इसलिए हमारा कहना यह है धर्म-निरपेक्षता का विचार संसार को हिन्दुओं की ही देन है। हिन्दू राज्य धर्म-विहीन नहीं, किन्तु सम्प्रदाय-निरपेक्ष अवश्य होगा। इसका सबसे बड़ा प्रमाण स्वयं भारतवर्ष है। यह देश तभी तक धर्म-निरपेक्ष है, जब तक यह हिन्दू-बहुल है। जिस दिन इस देश में अपने-आपको हिन्दू कहने वाले अल्पसंख्यक हो जाएंगे, उस दिन यह देश धर्मनिरपेक्ष भी नहीं रहेगा। हम पूछते हैं कि मलयेशिया में केवल ५१ फीसदी

मुसलमान हैं, फिर भी उसे मुस्लिम देश घोषित कर दिया गया है। जबकि भारत में ८५ फीसदी हिन्दुओं का निवास है (हिन्दू का अर्थ देश मान लेने पर तो यहां १०० फीसदी हिन्दू ही रहते हैं), फिर भी इसे हिन्दूराज्य घोषित नहीं किया जाता। अपने आपको धर्म-सापेक्ष और साम्प्रदायिक कहलाने का यह भय धर्म-निरपेक्षता की अनुचित पराकाष्ठा है।

संक्षेप में हम कहता चाहें, तो यह कह सकते हैं कि महात्मा गांधी जिसे रामराज्य कहते थे, उसे ही हम हिन्दू राज्य कहते हैं।

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज काहू नहिं व्यापा॥

यह रामराज्य का आदर्श था, तो हिन्दू राज्य का भी आदर्श यही है। पर रामराज्य को यदि कोई 'यूटोपिया' ही कहने पर ही आमादा हो, तो हम कहेंगे कि इस पुस्तक के आवरण के अन्दर के पृष्ठ पर श्रीमती इन्दिरा गांधी ने जिस नए भारत के निर्माण के संकल्प की वात कही है, हमारे हिन्दू राज्य का आदर्श भी वही है।

और भी आधुनिक मानस वालों के लिए कहेंगे कि हम जिसे हिन्दू-राज्य कह रहे हैं उसका आदर्श विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'चित्त जेथा अभय' शीर्षक गीत में उभर कर सामने आया है। उस गीत का अनुवाद (श्री सुधीन्द्र द्वारा बंगला से अनूदित) इस प्रकार है—

स्वतंत्रता-स्वर्ग में पिता हे, जगे जगे देश यह हमारा!
अशंक मन हो, उठा हुआ शिर,
स्वतंत्र हो पूर्ण ज्ञान जिसमें
जहां घरों की न भित्तियां ये करें जगत् खण्ड खण्ड न्यारा!
सदैव ही सत्य के तले से
जहां पिता, शब्द-शब्द निकले
छुए वढ़ा हाथ पूर्णता को जहां परिश्रम अथक हमारा!
छिपे भटक कर सुबुद्धि-धारा
न रूढ़ियों के दुरन्त मरु में

विशाल विस्तृत विचार-कृति में लगे जहां चित्त, पा सहारा।
स्वतंत्रता-स्वर्ग में पिता हे, जगें जगे देश यह हमारा ।।

हिन्दुत्त्व के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालने वाली सामग्री प्रयत्नपूर्वक खोजकर और सुधी लेखकों से लिखवा कर हमने इस पुस्तक (विशेषांक) में दी है। हिन्दू शब्द को साम्प्रदायिकता, संकीर्णता तथा दकियानूसीपन की लांछना से निकाल कर गौरव के उच्च सिंहासन पर विठाना होगा। जव सुदूरस्थ कोनों में भी वस्तुस्थिति की परिचायक यह हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान के त्रित की ध्वनि हमें कहीं सुनाई नहीं दी, तो हमने जनता के सामने इस विचारधारा को नारेवाजी के स्तर से निकाल कर वौद्धिक स्तर पर रखने का विनम्र प्रयास किया है। जिनके हाथ में शासन की वागडोर है और जिनके मन में देश के कोटि-कोटि जन-समुदाय के कल्याण की कामना है, वे यदि हिन्दूराज्य की स्थापना की दिशा में रंचमात्र भी सक्रिय हो सकें, तो इस लघु प्रयास की सार्थकता है।



अनुक्रम

भारत को हिन्दू राज्य घोषित करने के लाभ

दो राष्ट्रों के सिद्धान्त के आधार पर देश विभाजन होने पर पाकिस्तान के मुस्लिम राज्य चोषित होने के वाद उसका यह तर्कसंगत परिणाम था कि भारत को हिन्दू राज्य घोषित क्रिया जाता। अव भी उस भूल को सुधार कर भारत को हिन्द राज्य घोषित कर दिया जाए तो उसके निम्न-लिखित लाभ होंगे—

(१) साम्प्रदायिक उपद्रव तुरन्त समाप्त हो जाएंगे।

(२) देश की ८५ प्रतिशत जनता में आत्मगौरव की भावना पैदा होगी।

(३) भारसीय संस्कृति, कला, शिल्प और साहित्य की रक्षा होगी।

(४) विदेशों में वसे भारतीयों के लिए भारत आशा-केन्द्र वनेगा, जो और कोई देश नहीं वन सकता।

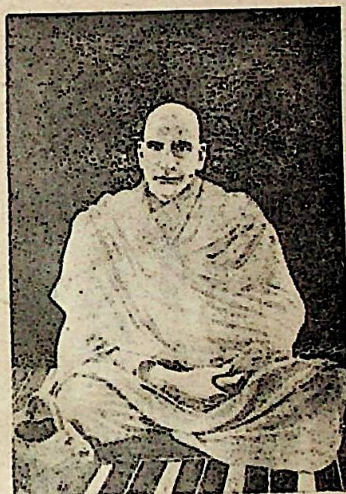
(५) संसार में सर्व-धर्म-समभाव के प्रचार में सुविधा होगी।

(६) शासन के धर्म-निरपेक्ष रहने की गारंटी होगी।

(७) भारतीय सेना में नया उत्साह पैदा होगा।

(८) अन्य देश इस महान् हिन्दू शक्ति का सम्मान करेंगे और और इससे अपनी मित्रता वढ़ाना चाहेंगे।

इसके अलावा भारत के पड़ौसी देशों और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का भी तकाजा है कि भारत को हिन्दू राज्य घोषित किया जाए।



हिन्दू संगठन ही एकमात्र उपाय

—अमरहुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

अब से ५७ वर्ष पहले सन् १९२४ में, स्वामी श्रद्धानन्द जी ने 'हिन्दू संगठन—सेवियर आफ ए डाइंग रेस' नामक पुस्तक अंग्रेजी में लिखी थी। उसी दुर्लभ पुस्तक का एक अंश हम यहां दे रहे हैं। शुरू में भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की ओर उसके प्रधान को हैसियत से उन्हों जो अपील निकाली थी, वह दी गई है। बाद में हिन्दू-संगठन के उपायों का उल्लेख है।

"आजकल वह प्राचीन महान् आर्य जाति मृतक सी समझी जाती है। यह भावना इस कारण नहीं है कि इसकी संख्या घट रही है, अपितु यह सम्पूर्णरूप से असंगठित है। व्यक्तिशः इस जाति का प्रत्येक व्यक्ति बौद्धिक और शारीरिक दृष्टि से अद्वितीय है, मानव जाति की कोई भी अन्य शाखा इस जाति का नैतिकता में मुकाबला नहीं कर सकती, तो भी यह जाति अपने विभिन्न उपवर्गों के कारण और अपनी एकांगी प्रवत्ति के कारण नितान्त दुर्बल सिद्ध हो रही है।

"हमारी जाति के चुने हुए लाखों व्यक्तियों को वाधित हो कर इस्लाम स्वीकार कर लेना पड़ा है, और हजारों ईसाइयत को स्वीकार करने को वाधित हुए हैं, परन्तु थोड़ा सा भी यह प्रयत्न नहीं किया गय। कि इस निकासी को रोका जाय अथवा हिन्दुओं से पृथक हुए भाइयों को पुनः अपने में सम्मिलित कर लिया जाय। नौ मुस्लिम ब्राह्मण, वैश्य, राजपूत, जाट

वहुत वड़ी संख्या में गत दो शताब्दियों से वल्कि इससे भी अधिक समय से अपने हिन्दू भाइयों की ओर इस विश्वास और उत्कण्ठा से देखते रहें हैं और अपने प्राचीन हिन्दू भावनाओं और विश्वासों को इस आशा से जीवित रखते आये हैं कि किसी दिन उन्हें पुनः उनकी प्राचीन विरादरी में वापिस ले लिया जायेगा। केवलमात्र एक घटना ने हिन्दुओं की आंखें खोल दीं। राजपूत महासभा ने पूर्ण वाजे-गाजे के साथ यह घोषणा कर दी कि ४॥ लाख मुसलमान राजपूत हिन्दू होने को तैयार हैं। यह भ्रमात्मक और नाटकीय घोषणा करने के वाद राजपूत महासभा पता नहीं कहां जा के सो गई। इस घोषणा को मैं भ्रमात्मक इसलिये कहता हूं क्योंकि मलकाना राजपूतों के प्रवल वहुमत ने व्यवहार और विश्वास में कभी इस्लाम को स्वीकार नहीं किया। हां, हिन्दू तो सो गये, परन्तु मुसलमान एक जीवित जाति होने के कारण एकदम क्रियाशील हो उठे हैं और उनके प्रचारकों के झुण्ड के झुण्ड इस कार्य में जुट गये हैं और उनकी आजीविका तथा प्रचार के लिए रुपया पानी की तरह वहाया जा रहा है।

"अन्ततोगत्वा, इसने हिन्दू जनता को जागृत कर दिया है और अव सभी स्थानों से यही ध्वनि सुनाई देती है कि हमारे उन पीड़ित भाइयों को वैदिक धर्म की शरण में ले लिया जाय तथा उन्हें हिन्दुओं में सम्मिलित कर लिया जाय। इसलिए 'भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा' के नाम से एक संस्था संगठित की गई है और उसका यह उद्देश्य है कि जो लोग हिन्दू धर्म में पुनः लौटना चाहते हैं उन्हें लौटा लिया जाय। इस संस्था की प्रवन्ध समिति में हिन्दुओं की सभी जातियों में से प्रमुख व्यक्ति लिये गये हैं।"

उपर्युक्त अपील २३ फरवरी (१९२३) से दैनिक पत्रों में प्रकाशित होनी शुरू हुई और २५ फरवरी को मलकानों का प्रथम जत्था शुद्ध किया गया, ये मलकाने ग्राण्ड ट्रंक रोड पर स्थित 'रैभा' गांव के थे जो आगरा से १३ मील पर है। यह मेरा भाग्य था कि अकस्मात् मुझे प्रथम वार उन तथाकथित मुस्लिम राजपूतों के सच्चे हिन्दू घरों को देखने का सौभाग्य मिला और उनके रहन सहन की हिन्दू पद्धति मेरे हृदय पर अंकित हो गई।

वाहर से आये हुए हजारों अभ्यागतों की उपस्थिति में मलकानों को उनके हिन्दू भाइयों ने पुनः हिन्दू जाति में ले लिया, और इन अभ्यागतों ने शुद्ध किए मलकानों द्वारा तैयार भोजन भी ग्रहण किया। मेरे सामने

यह तथ्य पुनः मूर्त रूप में आ कर खड़ा हो गया कि ये वही वीर और शुद्ध आत्माएं हैं जिन्हें शताब्दियों तक जाति-वहिष्कृत रखा गया है और आज उन्हीं आत्माओं से प्रायश्चित्त कराय जा रहा है। उसी दिन सायंकाल एक और गांव कुठाली के मलकाने शुद्ध किये गये और हजारों तथाकथित नौ मुस्लिम पुनः हिन्दु धर्म में वापस ले लिये गये।

शुद्धि का यह कार्य आगरा तथा निकटस्थ जिलों तक ही सीमित नहीं था, परन्तु भारत के अन्य प्रान्तों में भी यह कार्य सुचारू रूप से चल रहा था। विभिन्न प्रांतों में शुद्ध होने वालों की जाति आदि का नाम भेद अवश्य था, परन्तु उनका अपने हिंदू भाइयों से जो सम्वन्ध था वह ठीक एक ही प्रकार का था। मलकाने, मूले, मूल-इ-इस्लाम अध्वर्य आदि नौ-मुस्लिमों का चाहे जो नाम भेद रहा हो, परन्तु उनके आचार-व्यवहार और रीति-रिवाज विल्कुल उनके हिन्दू भाइयों जैसे ही थे। मेरे अनुमान से प्रारम्भिक शुद्धि से लेकर फरवरी १६२३ के अन्तिम सप्ताह तक दो लाख से कम व्यक्ति शुद्ध नहीं किये गये थे, परन्तु अभी तो एक करोड़ से भी अधिक नौ मुस्लिम हिन्दू जाति के क्षेत्र से वाहर पड़े हैं। इनके अतिरिक्त लगभग ४० लाख नौ ईसाई ऐसे हैं जो कि नामतः तो ईसा के अनुयायियों में गिने जाते हैं परन्तु जो कि वस्तुतः आचार व्यवहार और धार्मिक संस्कारों की दृष्टि से पूर्णरूप से हिन्दू हैं और केवलमात्र उन दिनों की प्रतीक्षा कर रहे हैं जव कि कट्टर हिन्दू अपने द्वार खोल देंगे और वे हिन्दू क्षेत्र में प्रवेश कर जायेंगे। दक्षिण भारत में ऐसे ब्राह्मण ईसाई देखे जा सकते हैं जो कि यज्ञोपवीत धारण करते हैं, माथे पर टीका लगाते हैं, आयरों और आयंगरों की भांति वड़ी वड़ी चोटियां रखते हैं, और मांसाहारी ईसाइयों के साथ कभी भोजन नहीं करते। उनके ईसाई होने का केवलमात्र चिन्ह यह है कि वे प्रत्येक रविवार को रोमन कैथोलिक गिरजों में जाते हैं। ये सभी प्रकार के लोग अभी अपनी पुरानी विरादरियों में लिये जाते हैं।

हिंदू महासभा के आदेश के अनुसार प्रत्येक ईसाई, मुसलमान और यहूदी विना किसी वाधा के हिंदुत्व में दीक्षित हो सकता है। हिंदू जाति की इस प्रकार सामूहिक रूप से नैतिक स्वीकृति देने के वाद शेष कार्य सुधारकों का है, परन्तु कार्य बहुत दुश्कर है। पर्याप्त आर्थिक सहायता और उत्साही कार्यकर्त्ताओं के बिना कार्य मन्दगति से हो रहा है। इसलिये, इसका प्रथम उपचार यह है कि भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा को एक जीवित संस्था बनाया जाय और कार्य को सभी दिशाओं से प्रेरणा द्रुतगति देने के लिए एक लाख रुपया इकट्ठा किया जाये तथा विशद्ध

विचारों के एवं निस्वार्थ व्यक्तियों को इस संस्था में लाया जावे जो कि हिन्दुओं को यह प्रेरणा दें कि वे अपने पीड़ित भाइयों को अपने हृदयों में स्थान देकर पुन: अपने में मिला लें।

दूसरा उपचार यह है कि प्राचीन आश्रम धर्म को सुदृढ़ आधार पर पुनर्जीवित किया जाये। हिन्दू सभा ने पुरुषों की विवाह योग्य न्यूनतम आयु १८ वर्ष निर्धारित की है और लड़कियों की १२ वर्ष। यह आंशिक सुधार अपर्याप्त है। विवाह योग्य आयु पुरुषों के लिये न्यूनतम २५ वर्ष और कन्याओं के लिये १६ वर्ष ही होनी चाहिये और हिन्दू समाज को इस वैज्ञानिक नियम के पालन के लिये कठोरता से व्यवहार करना चाहिये। उच्च तीन वर्णों के विधुरों का विवाह कदापि किसी कुमारी से नहीं होना चाहिये, कोई विधुर प्रथम पत्नी की मृत्यु के बाद ब्रह्मचर्य का जीवन नहीं व्यतीत कर सकता तो उसे किसी विधवा से विवाह कर लेना चाहिये।

हिन्दू संगठन की ओर प्रथम पग

स्वभावत: अब यह प्रश्न उठता है कि हिन्दू संगठन की ओर प्रवृत्त होने के लिये प्रथम पग क्या उठाया जाय ? मैंने अपने सम्पूर्ण भारत के भ्रमण में यह अनुभव किया है कि आज के शिक्षित एक दूसरे से मिलने के लिए नितान्त उदासीन रहते हैं। उसका प्रमुख कारण यह है कि उनके पास मिलने के लिये तथा सभा आदि के आयोजन के लिये कोई सार्वजनिक स्थान नहीं है। उनके जातिगत मन्दिरों में इतना भी स्थान नहीं है कि वहां सौ या दो सौ व्यक्ति इकट्ठे बैठ जायें। दिल्ली में जामा मस्जिद और फतहपुरी मस्जिद को छोड़कर, जहां कि २५ से ३० हजार मुस्लिम श्रोता एक साथ बैठ सकते हैं, और भी यहां पुरानी मस्जिदें विद्यमान हैं जहां कि हजारों की संख्या में लोग एक साथ बैठ सकते हैं। परन्तु हिन्दुओं के लिए एक, केवलमात्र एक ही लक्ष्मीनारायण की धर्मशाला है जहां पर कि कठिनाई से ८ सौ व्यक्ति बैठकर बन्द स्थान में अपनी सभा कर सकते हैं। इस पर भी विशेषता यह है कि मुसलमानों की प्रत्येक सभा नितान्त शब्द शून्य होती है जब कि धर्मशाला में यात्रियों के शोर के कारण वक्ताओं की आवाज कठिनाई से सुनाई देती है।

इस कारण मेरा सर्व प्रथम सुझाव यह है कि प्रत्येक नगर और शहर में एक हिन्दू-राष्ट्र मन्दिर की स्थापना अवश्य की जानी चाहिए जिसमें एक साथ २५ हजार व्यक्ति एक साथ समा सकें। इन स्थानों पर प्रतिदिन भगवद्गीता, उपनिषद्, रामायण व महाभारत की कथा होनी चाहिये। इन

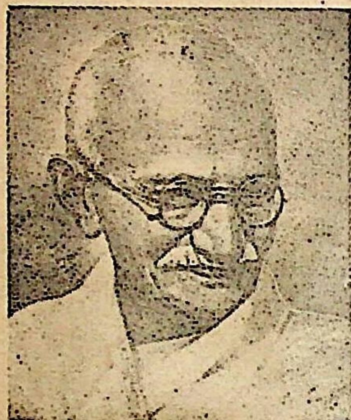
राष्ट्र-मन्दिरों का प्रवन्ध स्थानीय सभा के हाथ में रहना चाहिये और वह इन स्थानों के अन्दर अखाड़े, कुश्ती, गतका आदि खेलों का भी प्रवन्ध करे। जव कि हिन्दुओं के विभिन्न साम्प्रदायिक मन्दिरों में उनके इष्ट देवताओं की पूजा होगी, इन उदासीन हिन्दू मन्दिरों में तीन मातृशक्तियों की पूजा का प्रवन्ध होना चाहिये और वे हैं :

(i) गोमाता (ii) सरस्वती माता और (iii) भूमि माता

वहां कुछ जीवित गौएं रखी जानी चाहियें जो कि हमारी संस्कृति की द्योतक हैं। उस मन्दिर के प्रमुख द्वार पर गायत्री मंत्र लिखा जाना चाहिये जो कि प्रत्येक हिन्दू को उसके कर्त्तव्य का स्मरण करायेगा तथा अज्ञान को दूर करने का संदेश देगा। मन्दिर के वहुत ही प्रमुख स्थान पर भारतमाता का एक सम्पूर्ण नक्शा वनाना चाहिये। इस नक्शे में उसकी विशेषताओं को विभिन्न रंगों द्वारा प्रदर्शित किया जाय और प्रत्येक भारतीय प्रतिदिन मातृभूसि के सम्मुख खड़ा होकर उसे नमस्कार करे और इस प्रतिज्ञा को दोहराये कि वह अपनी मातृभूमि को प्राचीन गौरव के उस स्थान पर पहुंचाने के लिए प्राणों तक की वाजी लगा देगा जिस स्थान से उसका पतन हुआ था।

मैंने स्नेह और नम्रतापूर्वक जो दिशा वताई है यदि उसका श्रद्धा और विश्वास के साथ अनुगमन किया जाय तो मैं समझता हूं कि सभी सुधार धीमे-धीमे हो जायेंगे और मानव समाज के कल्याण के लिए एक वार फिर प्राचीन आर्यों की सन्तान सामने आकर खड़ी हो जायगी।





धर्म-परिवर्तन अहितकर

—महात्मा गांधी—

धर्म-परिवर्तन के सम्बन्ध में राष्ट्रपिता के मननीय विचार

मेरी राय में मानव-दया के कार्यों की आड़ में धर्म-परिवर्तन करना ज्यादा नहीं तो कम से कम अहितकर तो है ही। यहां के लोग इसे नाराजी की दृष्टि से देखते हैं। आखिर तो धर्म एक गहरा व्यक्तिगत मामला है, उसका सम्वन्ध हृदय से है। कोई ईसाई डाक्टर मुझे किसी वीमारी से अच्छा कर दे तो मैं अपना धर्म क्यों वदल लूं, या जिस समय मैं उसके असर में होऊं उस समय वह डाक्टर मुझ से इस तरह के परिवर्तन की आशा क्यों रखे या ऐसा सुझाव क्यों दे? क्या डाक्टरी सेवा अपने आप में ही एक पारितोषिक और सन्तोष नहीं है? या जव मैं किसी ईसाई शिक्षा संस्था में शिक्षा लेता होऊं तव मुझ पर ईसाई शिक्षा क्यों थोपी जाय? मेरी राय में ये सव वातें ऊपर उठाने वाली नहीं हैं, और अगर भीतर ही भीतर शत्रुता पैदा नहीं करतीं तो भी सन्देह तो उत्पन्न करती ही हैं। धर्म-परिवर्तन के तरीके ऐसे होने चाहियें जिन पर सीजर की पत्नी की तरह किसी को कोई शक न हो सके। धर्म की शिक्षा लौकिक विषयों कीतरह नहीं दी जाती। वह हृदय की भाषा में दी जाती है। अगर किसी आदमी में जीता-जागता धर्म है, तो उसकी सुगन्ध गुलाव के फूल की तरह अपने आप फैलती है। सुगन्ध दिखाई नहीं देती, इसलिए फूल की पंखुड़ियों के रंग की प्रत्यक्ष सुन्दरता से उसकी सुगन्ध का प्रभाव कहीं अधिक व्यापक होता है।

मैं धर्म-परिवर्तन के विरुद्ध नहीं हूं, परन्तु मैं उसके आधुनिक उपायों के विरुद्ध हूं। आजकल और वातों की तरह धर्म-परिवर्तन ने भी एक

व्यापार का रूप ले लिया है। मुझे ईसाई धर्म-प्रचारकों की एक रिपोर्ट पढ़ी हुई याद है, जिसमें वताया गया था कि प्रत्येक व्यक्ति का धर्म वदलने में कितना खर्च हुआ, और फिर 'अगली फसल' के लिए वजट पेश किया गया था।

हां, मेरी यह राय जरूर है कि भारत के महान धर्म उसके लिए सव तरह से पर्याप्त है। ईसाई और यहूदी धर्म के अलावा हिन्दू धर्म और उसकी शाखाएं, इस्लाम और पारसी धर्म, सव सजीव धर्म हैं। दुनिया में कोई भी एक धर्म पूर्ण नहीं है। सभी धर्म अपने मानने वालों के लिए समान रूप से प्रिय हैं। इसलिए जरूरत संसार के महान धर्मों के अनुयायियों में सजीव और मित्रतापूर्ण संपर्क स्थापित करने की है, न कि हर सम्प्रदाय द्वारा दूसरे धर्मों की अपेक्षा अपने धर्म की श्रेष्ठता जताने की व्यर्थ कोशिश करके आपस में संघर्ष पैदा करने की। ऐसे मित्रतापूर्ण सम्वन्ध के द्वारा हमारे लिए अपने अपने धर्मों की कमियां और बुराइयां दूर करना संभव होगा।

मैंने ऊपर जो कुछ कहा है उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस प्रकार का धर्म-परिवर्तन मेरी दृष्टि में है उसकी हिन्दुस्तान में जरूरत नहीं है। आज की सव से वड़ी आवश्यकता यह है कि आत्म शुद्धि, आत्म-साक्षात्कार के अर्थ में धर्म-परिवर्तन किया जाय। परन्तु धर्म-परिवर्तन करने वालों का यह हेतु कभी नहीं होता। जो भारत का, धर्म-परिवर्तन करना चाहते हैं, उनसे क्या यह नहीं कहा जा सकता कि 'वैद्यजी, आप अपना ही इलाज कीजिये?'

यंग इंडिया, २३-४-३१

जव मैं जवान था उस समय की एक हिन्दू के ईसाई हो जाने की वात मुझे याद है। सारे नगर ने समझ लिया था कि एक अच्छे कुल के हिन्दू ने ईसा मसीह के नाम पर गो मांस और मदिरा का सेवन शुरू कर दिया है और अपनी राष्ट्रीय पोशाक छोड़ दी है। वाद में मुझे मालूम हुआ और मेरे अनेक पादरी मित्रों ने भी वताया कि धर्म वदलने वाले लोग बंधन के जीवन से निकलकर आजादी के जीवन में, गरीवी से निकल कर आराम के जीवन में प्रवेश करते हैं। जव मैं भारतवर्ष के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूमता हूं, तो मुझे ऐसे वहुत से भारतीय ईसाई मिलते हैं, जिन्हें अपने जन्म से और अपने वाप-दादाओं के धर्म से शर्म आती है। एंग्लो-इंडियन लोग यरोपियनों की जो नकल करते हैं वह काफी

बुरी है, परन्तु भारतीय ईसाई जिस तरह उनकी नकल करते हैं वह तो अपने देश के प्रति और मैं यहां तक कहूंगा कि अपने नये धर्म के प्रति भी द्रोह है। 'न्यू टेस्टामेंट' में एक वचन है जिसमें ईसाई को यह आदेश दिया गया है कि मांसाहार से तुम्हारे पड़ोसियों को बुरा लगे तो उसे छोड़ दिया जाय। मेरा ख्याल है कि यहां मांस में मदिरा-पान और पोशाक भी आ जाती है। पुराने रिवाजों में जितनी भी बुराइयां हैं उन सब का कठोर वन कर त्याग कर दिया जाय, तो मैं उसे समझ सकता हूं। परन्तु जहां किसी बुराई का प्रश्न ही न हो, वल्कि प्राचीन रिवाज इष्ट हो, वहां तो उसे छोड़ना पाप ही है; क्योंकि हमें निश्चित रूप से मालूम रहता है कि उसके त्याग से इष्ट मित्रों को गहरो चोट पहुंचेगी। धर्म-परिवर्तन का अर्थ राष्ट्रीयता का त्याग कभी नहीं होता। धर्म-परिवर्तन का अर्थ निश्चित रूप से यह होना चाहिये कि पुराने धर्म की बुराई छोड़ दी जाय, नये धर्म की सारी अच्छाई ले ली जाय और नये धर्म में जो भी बुराई हो उससे पूरी तरह वचा जाय। इसलिए धर्म परिवर्तन का यह नतीजा होना चाहिये कि हम अपने देश के प्रति अधिक भक्ति का, ईश्वर के सामने अधिक समर्पण का और अधिक आत्म शुद्धि का जीवन व्यतीत करें . . . क्या यह सचमुच दुःखद वात नहीं है कि वहुत से भारतीय ईसाई अपनी मातृभाषा को छोड़कर अपने वच्चों को अंग्रेजी में ही वोलने की शिक्षा देते हैं? क्या ऐसा करके वे अपने वच्चों को जिस प्रजा के वीच में उन्हें रहना है उससे पूरी तरह अलग नहीं कर लेते?

यंग इंडिया, २०-८-२५

जैसे मैं अपना धर्म वदलने की कल्पना नहीं कर सकता, वैसे ही किसी ईसाई या मुसलमान या पारसी या यहूदी को अपना धर्म वदलने के लिए कहने की कल्पना भी नहीं कर सकता। इसलिए मुझे जितना अपने धर्म के अनुयायियों की गंभीर मर्यादाओं का ध्यान है, उतना ही दूसरे धर्मों के अनुयायियों की मर्यादाओं का भी ध्यान है; और जव मैं यह देखता हूं कि मुझे अपने आचरण को अपने धर्म के अनुसार वनाने में और उसे अपने सहधर्मियों को समझाने में अपनी सारी शक्ति खर्च कर देनी पड़ती है, तब मुझे दूसरे धर्मों के अनुयायियों को उपदेश देने का तो ख्याल भी नहीं आता। मनुष्य के आचरण के लिए यह सुन्दर नियम है: 'दूसरों के काजी न वनो, नहीं तो दूसरे तुम्हारे काजी वनेंगे।' मेरे मन पर यह विश्वास दिनों दिन जमता जा रहा है कि महान और सम्पन्न ईसाई मिशन भारत की सच्ची सेवा तभी करेंगे, जव वे अपने को इस बात के लिए तैयार कर

लेंगे कि वे दया के कामों तक ही अपने को सीमित रखेंगे और उसमें भारत को या कम से कम उसके भोले भाले ग्रामीणों को ईसाई वनाने की भावना न रखेंगे तथा इस तरह उनकी सामाजिक रचना को नष्ट न करेंगे। क्योंकि उसमें अनेक दोष होते हुए भी वह वाहरी और भीतरी हमलों के सामने अनन्त काल से टिकी हुई है। ईसाई धर्म प्रचारक और हम चाहें या न चाहें, फिर भी हिन्दू धर्म में जो सत्य है वह टिका रहेगा और जो असत्य है वह नष्ट हो जायगा। किसी भी सजीव धर्म को यदि जीवित रहना है, तो स्वयं उसके भीतर जीवन-शक्ति होनी चाहिये !

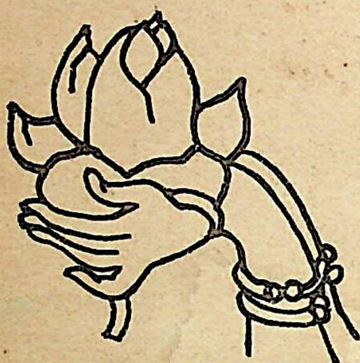
हरिजन, २८-९-'३५

राजनीति और धर्म

मेरी सत्यनिष्ठा मुझे राजनीति के मैदान में खींच लाई है : और मैं जरा भी संकोच किये विना और फिर भी पूरी नम्रता के साथ कह सकता हूं कि जो लोग यह कहते हैं कि राजनीति से धर्म का कोई वास्ता नहीं, वे नहीं जानते कि धर्म का अर्थ क्या है ? **आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृष्ठ ६१५**

मेरे लिए धर्म रहित राजनीति विल्कुल गन्दी चीज है, जिससे हमेशा दूर रहना चाहिये। राजनीति का राष्ट्रों के हित से सम्वन्ध है। और जिस चीज का सम्बन्ध राष्ट्रों के हित से है, उसके साथ उस मनुष्य का सम्वन्ध होना ही चाहिये, जिसकी धार्मिक वृत्ति हो या दूसरे शब्दों में जो ईश्वर और सत्य का शोधक हो। मेरे लिए ईश्वर और सत्य समानार्थक शब्द हैं। और अगर कोई मुझ से कहे कि ईश्वर असत्य या अत्याचार का ईश्वर है, तो मैं उसकी पूजा करने से इन्कार कर दूंगा। इसलिए राजनीति में भी हमें स्वर्ग का राज्य स्थापित करना होगा।

यंगइंडिया, १८-६-'२५



किसको नमन करूं मैं ?

—स्व० राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'—

तुझको या तेरे नदीश-गिरी-वन को नमन करूँ मैं ?
मेरे प्यारे देश ! देह या मन को नमन करूँ मैं ?
किसको नमन करूं मैं भारत ! किसको नमन करूँ मैं ?
भू के मानचित्र पर अंकित त्रिभुज, यही क्या तू है ?
नर के नभश्चरण की दृढ़ कल्पना नहीं क्या तू है ?
भेदों का ज्ञाता, निगूढ़ताओं का चिर ज्ञानी है;
मेरे प्यारे देश ! नहीं तू पत्थर है, पानी है।
जड़ताओं में छिपे किसी चेतन को नमन करूँ मैं ?

तू वह, नर ने जिसे बहुत ऊँचा चढ़कर पाया था;
तू वह, जो संदेश भूमि को अम्बर से आया था।
तू वह, जिसका ध्यान आज भी मन सुरभित करता है;
थकी हुई आत्मा में उड़ने की उमंग भरता है !
गन्ध-निकेतन इस अदृश्य उपवन को नमन करूं मैं ?

वहां नहीं तू जहां जनों से ही मनुजों को भय है;
सबको सबसे त्रास सदा सब पर सबका संशय हैं;
जहां स्नेह के सहज स्रोत से हटे हुए जन गण हैं;
झंडों या नारों के नीचे बंटे हुए जनगण हैं।
कैसे इस कुत्सित, विभक्त जीवन को नमन करूँ मैं ?

तू तो है वह लोक, जहां उन्मुक्त मनुज का मन है;
समरसता को लिए प्रवाहित शील-स्निग्ध जीवन है।
जहां पहुंच मानते नहीं नर-नारी दिग्बन्धन को;
आत्म-रूप देखते प्रेम में भरकर निखिल भुवन को।
कहीं खोज इस रुचिर स्वप्न पावन को नमन करूँ मैं ?
भारत नहीं स्थान का वाचक, गुण विशेष नर का है;
एक देश का नहीं, शील यह भूमंडल भर का है।
जहाँ कहीं एकता अखंडित, जहाँ प्रेम का स्वर है;
देश-देश में वहां खड़ा भारत जीवित भास्वर है।
निखिल विश्व को जन्म भूमि-वन्दन को नमन करूँ मैं ?
खंडित है यह मही शैल से, सरिता से, सागर से;
पर, जब भी दो हाथ निकल मिलते आ द्वीपान्तर से,
तब खाई को पाट शून्य में महा मोद मचता है;
दो द्वीपों के बीच सेतु यह भारत ही रचता है
मंगलमय इस महासेतु-बन्धन को नमन करूँ मैं।
दो हृदयों के तार जहां भी जो जन जोड़ रहे हैं;
मित्र भाव की ओर विश्व की गति को मोड़ रहे हैं।
घोल रहे हैं जो जीवन-सरिता में प्रेम रसायन,
खोल रहे हैं देश-देश के बीच मुंदे वातायन!
आत्मबन्धु कह कर ऐसे जन-जन को नमन करूं मैं ?
उठे जहां भी घोष शान्ति का, भारत, स्वर तेरा है,
धर्म दीप हो जिसके भी कर में, वह नर तेरा है !
तेरा है वह वीर, सत्य पर जो अड़ने जाता है,
किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है।
मानवता के इस ललाट-चन्दन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूँ मैं भारत ! किसको नमन करूँ मैं ?

—'नील कुसुम' से



हिन्दुत्व का सार—कर्म-विधान

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य—

शरीर एक उपकरण, सुन्दर उपकरण, जादू भरा उपकरण है, जिसके साथ उसका स्वामी आत्मा विलक्षण रीति से अभिन्न हो जाता है। उसी प्रकार आत्मा भी परमात्मा का उपकरण है। परमात्मा उसके अन्दर निवास करता है और उसका उपयोग करता है—किस हेतु से और क्यों, सो हम न जान सकते हैं और न कह सकते हैं। यह एक रहस्य-मय संवन्ध है, जिसमें उपकरण और उसका उपयोगकर्ता दोनों अविलग रूप से आवद्ध हैं। शरीर और उसकी सूक्ष्म इन्द्रियों को अपने स्वामी आत्मा के प्रति निष्ठाहीन नहीं होना चाहिए, वरन् अच्छे उपकरणों के रूप में उसके काम आना चाहिए। इसी भांति, व्यक्ति को भी परमात्मा का, जो उसके अन्तस् में निवास करता है, अच्छा और विश्वस्त उपकरण बनना चाहिए और प्रत्येक कर्म, विचार और वाणी उसे समर्पित करनी चाहिए।

कर्म शरीर, वाणी और मन से किए जाते हैं। प्रत्येक कर्म का नियत परिणाम होता है। कारण-कार्य-विधान अपरिवर्त्तनीय है। परिणाम कारण में वैसे ही निहित रहता है, जैसे वीज में वृक्ष। पानी को सूर्य सुखा देता है। यह अन्यथा नहीं हो सकता। उष्णता और पानी के मिलने से परिणाम होगा ही। यही वात सबके साथ है। परिणाम कारण के गर्भ में रहता है।

यदि हम गंभीरता से विचार करें, तो सम्पूर्ण जगत् अपने विविध अंगों में कर्म के अपरिवर्त्तनीय नियमों के अनुसार विकसित होता दिखलाई पड़ेगा। वेदान्त में कर्म के इसी सिद्धांत का निरूपण किया गया है। कर्म पर भाग्यवाद की दृष्टि से विचार करना गलत है। वेदान्त में भाग्य का

जैसा विवेचन किया गया है, उसके अनुसार, उसमें कर्म-त्याग और प्राकृतिक नियमों पर श्रद्धा का भंग निहित नहीं है। कर्म पूर्व कारणों का परिणाम है, वह परिणाम का अटल नियम है। पश्चिम के मूर्तिपूजामूलक दर्शनशास्त्रों से जिस भाग्यवाद का उदय हुआ है, उसमें और वेदान्त में यही अन्तर है।

जब कोई हिन्दू भाग्य-लेख की बात करता है, तो उसका अर्थ यह होता है कि मनुष्य को केवल अपने कर्मों के फल की अपेक्षा करनी चाहिए। कोई कर्म व्यर्थ या परिणामहीन नहीं हो सकता। कर्म करना और उसके परिणाम से बच जाना, या किसी ऐसे परिणाम की आशा करना जो किसी दूसरे कर्म से हो सकता है, सम्भव नहीं है। निश्चित कर्मों का उनके अनुरूप परिणाम होना अनिवार्य है। इस प्रकार, कर्म के विधान से सच्चा कर्म-स्वातंत्र्य उत्पन्न होता है।

हम मन, वाणी और शरीर से कर्म करते हैं। हमारे विचार, वाणी और कर्म—सब अपना-अपना फल देते हैं। उनके फल से बचा नहीं जासकता।

जब कोई वेदान्ती कहता है कि प्रत्येक घटना कर्म के अनुसार होती है तो उसका अर्थ यह नहीं होता कि ज्ञान और मानवीय प्रयत्न व्यर्थ हैं और मानवीय कर्मों का कोई महत्त्व नहीं है। कहा है, "हां, मैं मानता हूं कि यह विधि है। यह न्याय की विधि है कि अज्ञानी को आनन्द प्राप्त नहीं होता। यह न्याय की विधि है कि आरोग्य के नियमों की उपेक्षा करने से रोगों की यातनाएं सहनी पड़ती हैं।" उद्योग और आचार का पुरस्कार मिलेगा ही और कर्म-विधान रूपी अधिकार-पत्र इस पुरस्कार को सुरक्षित रखता है।

प्रत्येक घटना का कारण तो होता ही है, परन्तु किसी घटना के कारण को न समझने पर हम उसे भाग्य का फेर अथवा संयोग परिणाम मानने लगते हैं। परन्तु इस नामकरण का अर्थ परिणाम से दुःखी होने और कारण खोज निकालने में अपने बुद्धि-प्रयोग की असफलता स्वीकार करने के अतिरिक्त कुछ नहीं है। भाग्य के लिए साधारणतः उपयोग में आने वाले शब्द 'अदृष्ट' का अर्थ, जो दिखलाई नहीं पड़ता, होता है। वास्तव में, उसके बारे में इतना ही बस है। उनका यह अर्थ नहीं होता कि वह नियम के अधीन नहीं है, वह केवल पहले देखा नहीं गया।

हम किसी सिद्धांत की सहायता के बिना भी समझ सकते हैं कि प्रत्येक अच्छे या बुरे विचार अथवा कर्म का हमारे ऊपर तुरन्त परिणाम होता है। यह परिणाम दूसरों पर अथवा बाह्य जगत् पर होने वाले परिणाम के अतिरिक्त होता है। कोई चाहे या न चाहे, उनके मन की प्रत्येक

वृत्ति उसके चरित्र पर अमिट छाप डाल देती है और उसके चरित्र का विकास उसी के अनुसार अच्छा या बुरा होता है। यदि मैं आज बुरा विचार करूं तो कल अधिक तत्परता और आग्रह से वैसा करूंगा। यही वात अच्छे विचारों के वारे में भी है। यदि मैं आत्म-निग्रह करता हूं या शान्त होने का प्रयत्न करता हूं तो अगली वार यह क्रिया अधिक स्वयं-स्फूर्त, अधिक सरल, हो जाएगी। यह क्रम उत्तरोत्तर प्रगतिपूर्वक जारी रहता है।

हिन्दू विचारधारा के अनुसार, इस जीवन में मनुष्य के विचारों, कार्यों और पश्चात्ताप से उसका जो चरित्र वन जाता है वह शरीर का अंत होने पर आत्मा के साथ संलग्न रहता है और उसकी दूसरी जीवन-यात्रा में आरम्भ से ही उसका साथी होता है। पूर्वजन्मों के कर्म, विचार और आसक्तियों के फलस्वरूप हम कुछ निश्चित स्वाभाविक वृत्तियों के साथ नया जन्म ग्रहण करते हैं। भूत और भविष्य के जीवनों के और अनेक जीवनों में विकास का क्रम जारी रहने के सिद्धांत पर विश्वास ही कर्म के सम्वंध में भ्रम उत्पन्न करने वाला है।

बुद्धिवादी दृष्टिकोण से, कार्य के संबंध में कोई स्पष्टीकरण अथवा उपपत्ति कठिनाइयों या आपत्तियों के परे नहीं हो सकती; परन्तु अमर आत्मा को व्यक्तित्त्व का आधार मानने पर हिन्दू कर्म-सिद्धांत की अपेक्षा प्रकृतियों के नियमों के अधिक अनुकूल कोई अन्य उपपत्ति स्थापित नहीं की जा सकती। मनुष्य ठीक अपने कर्मों के अनुसार ही अपना विकास करता है। विकास का क्रम मृत्यु से भंग नहीं होता, वह दूसरे जीवन में जारी रहता है। हिन्दू धर्म का यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत शक्तिसंचय-नियम के नैतिक क्षेत्र में कार्यान्वित है। वास्तव में इन दोनों को एक ही नियम के दो अंग मानना चाहिए। कर्म आध्यात्मिक जगत में संचय का नियम है। कारण और कार्य समान होना ही चाहिए। मृत्यु से शरीर का, न कि आत्मा का, अंत होता है। अतएव, जहां तक आत्मा का संवंध है, कारण और कार्य का नियम शरीर का अंत हो जाने के वाद भी कार्यान्वित रहता है। शरीर को मृत्यु से मनुष्य दिवालिया नहीं वनता। पुराना हिसाव आगे के जीवन में जारी रहता है।

छोटे से छोटा कंकड़ फेंकने से भी पानी में लहर उठ आती है। वह लहर गोल-गोल घेरों में बरावर फैलती जाती है। हमारे सब विचारों और कार्यों का भी ऐसा ही परिणाम होता है। मन में उत्पन्न हुआ अत्यंत सूक्ष्म और गुह्य विचार भी विश्वशांति को प्रक्षुब्ध कर देता है और उस क्षोभ को शान्त करना आवश्यक होता है।

मनुष्य जिस प्रकार अपना जीवन व्यतीत करता है, उसके अनुसार उसके पूर्वकर्मों के बंधन घटते या वढ़ते हैं; परन्तु आत्मा स्वाभाविक वृत्तियों पर विजय पाने और मुक्ति के लिए प्रयत्न करने में समर्थ है।

"मन ! विजय निश्चित है, मिथ्या भय को त्याग दे। भक्ति अवश्य फल देगी। हमारे कंधे किसी भी काम के लिए सुविशाल और सुपुष्ट हैं। हमारी बुद्धि उचित इच्छापूर्ति के साधन निर्मित ओर एकत्र करने में समर्थ है। अपरिवर्त्तनीय नियम अपना काम करता ही है। इसलिए, तू मिथ्या भय को त्याग दे।"

आधुनिक तमिल कवि ने वेदान्त में प्रतिपादित मोक्षामार्ग के संबंध में उपर्युक्त आशय का अनुपम गीत गाया है। नियम मोक्ष को सुरक्षित करता है, न कि उससे वंचित करता है।



हिन्दू कोई सम्प्रदाय नहीं सत्य के खोजियों का भ्रातृसंघ है

—भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० सर्वेपल्ली राधाकृष्णन—

हिंदू जाति के विभिन्न सम्प्रदायों में जो भेद दिखाई पडते हैं वे कम या अधिक रूप में ऊपरी हैं। हिंदू जाति स्पष्टतः एक सांस्कृतिक इकाई के रूप में रही है जिसका एक ही इतिहास, साहित्य और सभ्यता है। विनसेंट स्मिथ का कहना है—"निःसन्देह भारत में एक आधार भूत एकता है। यह एकता भौगोलिक पृथक्ता या राजनीतिक श्रेष्ठता से पैदा होने वाली एकता से कहीं अधिक गम्भीर है। यह एकता असंख्य परस्पर विरोधी रक्त, रंग, भाषा, पोशाक, रीति-रिवाज तथा सम्प्रदाय के घेरे से बहुत ऊपर उठी हुई है।" इन विरोधी तत्त्वों को एक में मिलाकर उन्हें सुखशान्ति से रहने योग्य वनाने में हिन्दू धर्म ने अपने ढंग से काम किया है। इस दिशा में उसे इतिहास से नहीं के वरावर या नाममात्र का ही सहयोग और मार्ग-दर्शन मिला है। आज संसार जाति गत, सांस्कृतिक तथा धार्मिक भ्रान्तियों का घर हो रहा हैं। हम लोग अंधेरे में टटोल रहे हैं ताकि संहारात्मक संघर्ष से वचने का कोई मार्ग मिल सके। शायद धार्मिक संघर्ष सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाने में हिन्दू धर्म हमें कुछ न कुछ अवश्य शिक्षा दे सकेगा।

धर्म के प्रति हिन्दू दृष्टिकोण अत्यन्त विवेकपूर्ण है जहां कुछ बौद्धिक विश्वासों तक अपने को सीमित रखने के कारण कतिपय धर्म एक दूसरे से पृथक हो गये हैं, वहां हिन्दू धर्म ने अपने लिए ऐसी सीमाओं को नहीं बनाया। इसमें बुद्धि अन्तर्दृष्टि के, मतवाद अनुभूति के तथा वाह्याचार आन्तरिक अनुभूति के अधीन है। व्यवहार-विच्छिन्न शास्त्रीय विचार और कर्मकाण्ड धर्म नहीं है। धर्म एक तरह का जीवन और अनुभव है।

वेदों के प्रति हिन्दुओं की आस्था हैं। परन्तु उनके विश्वास के साथ तर्क की भावना रहती है। विश्वास इसलिए करते हैं कि जिन विश्वासों

तथा कर्मकाण्डों से पूर्वजों ने लाभ उठाया है वे संभवतः उनके लिए भी उपयोगी हो सकते हैं। विश्वास के साथ तर्क की भावना इसलिए बनी है कि अतीत की चीजें चाहे कितनी ही अमूल्य क्यों न हों, वे आधुनिक युग को समालेचना के अधिकार से वंचित नहीं कर सकती। पूर्वपुरुषों की आत्मा में प्रतिध्वनित अपौरुषेय वाणी की अमोघता पर विश्वास रखते हुए हमें इस सत्य को स्वीकार करना ही चाहिए कि परम पिता परमात्मा द्वारा ज्ञान और प्रेम का निस्सरण कभी शेष नहीं होता।

हिन्दू धर्म केवल वेदों का धर्म नहीं है अपितु रामायण, महाभारत और पुराणों का भी धर्म है। इस धर्म में भारत में रहने वाले विभिन्न प्रजातियों के तत्त्वज्ञान तथा उनके विभिन्न भागों के महत्त्व को स्वीकार किया गया है। अतः यह नाना रंगों से अंकित चित्रपट के समान हो गया है।

'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'

"ऋषियों ने उस एक को वहुत नामों से कहा है।" ऋग्वेद १-१६४-४६। ईश्वर के वहुत से रूपों को मानना वहुदेववाद कोस्वीकार करना नहीं है। जब ऋषि याज्ञवल्क्य से देवताओं की संख्या वताने को कहा गया तो उन्होंने प्रचलित संख्या ३३०६ से प्रारम्भ किया और घटते-घटते अन्त में केवल एक ब्रह्म को माना। "इस अप्रमेय ध्रुवतत्त्व को अद्वैतरूप में देखना चाहिए।" (बृहदारण्यक उपनिषद्, ४. ४. २०) ईश्वर के विभिन्न लक्षणों से यही पता चलता है कि हम लोग उसे किस रूप में देखते हैं; पर यह पता नहीं चलता कि वह स्वतः क्या है।

हिन्दू विचार धारा इस बात पर विश्वास करती है कि ईश्वर संबंधी हमारा ज्ञान विकसित होता रहता है। हमें अपनी ईश्वर संबंधी धारणाओं में तब तक सतत परिवर्तन करना होगा जब तक हम सभी धारणाओं को पार कर स्वयं तत्त्व का साक्षात्कार न कर लें। आधुनिक काल में ऐसा कोई सुव्यवस्थित और दृढ़ प्रयत्न नहीं हुआ है कि जन साधारण के मानसिक स्तर को ऊंचा उठाया जाय और संपूर्ण हिन्दू जाति को ऊंचे अध्यात्मिक स्तर पर लाया जाय। हिन्दू नेताओं के लिए यह आवश्यक है कि वे परमात्मा सम्वन्धो सर्वोच धारणा का प्रतिपादन करें और हिन्दू धर्म के अनुयायियों के मन को ऊंचा उठाने के लिए दृढ़तापूर्वक कार्य करें ताकि वे अपनी ईश्वर सम्वन्धो धारणाओं में सुधार कर सकें। समस्त राष्ट्र में

फैले हुए मंदिरों और मठों का उपयोग केवल पूजा प्रार्थना के लिए नहीं होना चाहिए अपितु उन्हें ज्ञान और शास्त्र चर्चा का केन्द्र वनाना चाहिए ताकि हिंदूओं की अध्यात्मिक उन्नति हो।

शुद्धि का विधान

विभिन्न देवताओं की उपासना करने वाले और विभिन्न कर्मकाण्डों का अनुसरण करने वाले हिन्दू धर्म में मिला लिये गए है। तांडय ब्राह्मण में व्रात्यसोम नामक प्राचीन पद्धति का पूर्ण विवरण है जिससे ज्ञात होता है कि केवल व्यक्तिगत रूप से कुछ ही लोग नहीं, अपितु समूचे कवी ले हिन्दू धर्म में आत्म सात् कर लिये गए थे। देवल स्मृति में विधान है कि जवरदस्ती दूसरे धर्म में दीक्षित किए लाग, दूषित या वर्षों से कैद में रही स्त्रियां और यहां तक की सांसारिक लाभ की दृष्टि से दूसरे धर्म को अपनाने वाले भी, केवल प्रायश्चित्त से शुद्ध हों हिन्दू धर्म में आ सकते हैं।

हिन्दू धर्म आध्यात्मिक शक्ति पर विश्वास करता है जो आत्मा के विकास को अवरुद्ध करने वाले वंधन को तोड़ देती है। मानव प्रकृति को वदलने में जल्दी नहीं की जा सकती। हिन्दू धर्म इस वात पर विश्वास नहीं करता कि जिन वातों का सामंजस्य मत-विशेष से नहीं वैठता उन सव वातों को वलपूर्वक मिटाकर धार्मिक विश्वासों और उपासना विधियों में यांत्रिक चीजों की तरह समानता लाई जाए। यह मुक्ति की किसी विधिवद्ध पद्धति पर भी विश्वास नहीं करता। ईश्वर या मनुष्य के प्रति ऐसा सोचना ठीक नहीं है कि अमुक जाति के कर्म को केन्द्रीय स्थान प्राप्त है तथा अन्य जातियों को उससे धार्मिक प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए अन्यथा वे आध्यात्मिक दृष्टि से अकिंचन रहेंगे। यह सव होते हुए भी जिस वात पर विशेष ध्यान दिया जाता है वह धर्म मत नहीं, प्रत्युत चरित्र और आचार है। किसी को आप उसके कार्यों से जान सकेंगे; उसके विश्वास से नहीं। कर्म कोरे विश्वास का नाम नहीं है, अपितु वह सदाचार युक्त जीवन है।

"अपने धर्म के अतिरिक्त अन्य सभी धर्मों को नष्ट कर देना धर्म के क्षेत्र में संहारवाद है जिसे हमें अवश्य रोकना चाहिए। पर यह हम तभी रोक सकते हैं जव हिन्दू धर्म में वताई गई विधि के सदृश किसी विधि को अपनाएं जिस में धर्म-ऐक्य किसी एक वात पर विश्वास लाने पर नहीं, अपितु एक समान लक्ष्य की प्रति पर स्थापित हो। मुझे निश्चित सा

लगता है कि भविष्य में धार्मिक संघर्ष सम्वन्धी समस्याओं का समाधान करने में हिन्दू पद्धति अपनाई जाएगी। अर्द्ध धार्मिक तथा अधार्मिक मनुष्य ही मतवादों के चक्कर में पड़कर लड़ते झगड़ते है न कि वे जो सचमुच धार्यिक हैं। अंग्रेज विचारक जोनेयन स्विफ्ट के मार्मिक शब्दों में कहें तो हम मनुष्यों के पास परस्पर घृणा फैलाने वाले धर्मों की कमी नहीं है। कमी है तो परस्पर प्रेम वढ़ाने वाले धर्म की। हम जितने अधिक धार्मिक होते जायेंगे, विभिन्नता के प्रति उतनी ही अधिक सहिष्णुता की भावना हममें वढ़ती जायेगी।"

सब हिन्दू हैं

जो भी हिन्दू संस्कृति तथा हिन्दू जीवन पद्धति अपनाते हैं वे चाहे आस्तिक हों या नास्तिक, संशयवादी हो या जड़वादी, सवके सव हिन्दू हैं। हिन्दू धर्म धार्मिक विश्वासों पर नहीं, अपितु जीवन को आध्यात्मिक तथा नैतिक दृष्टि पर वल देता है। इस या उस मत में विश्वास करने वाला नहीं, प्रत्युत सत्कार्य करने वाला कभी दुर्गति को प्राप्त नहीं होता—न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति। (भगवद्गीता ६.४०) पारमार्थिक जीवन दृष्टि में आचार प्राथमिक है। हिंदू धर्म नैतिक जीवन पर वल देता और उन सभी वर्गों में भ्रातृत्व स्थापित करना चाहता है जो नैतिक नियम अथवा धर्म द्वारा निर्धारित मार्ग पर चलना अपना कर्तव्य समझते हैं। हिन्दू धर्म कोई सम्प्रदाय नहीं है, प्रत्युत उन सभी का एक महान् भ्रातृ सघ है जो सत्य को मानते हैं ओर निष्ठापूर्वक सत्य को खाज करते हैं।

हिन्दू धर्म द्वैत के कारण उत्पन्न इस विचार का घोर खंडन करता है कि मेरे उद्यान के पौधे ईश्वर द्वारा रोपे गये हैं परन्तु मेरे पड़ौसो के वगीचे में केवल घास-फूस है जिसे शैतान ने उगाया है और हमें जैसे-तैसे उसे नष्ट कर देना चाहिए। हिंदू धर्म इस सिद्धांत को मानकर चलता है कि उत्तम का शत्रु सर्वोत्तम नहीं होता वह समस्त विश्वासों को स्वीकार करता है और उन्हें उच्चस्तर पर ले जाता है। भूल सुधार का मार्ग सूली, निर्मम वल प्रयोग अथवा दंड देना नहीं है, प्रत्युत शनैः शनैः ज्ञान का प्रकाश प्रसारित करना है।

हिंदू धर्म गतिशील है, स्थिति शील नहीं। यह प्रक्रिया है, परिणाम नहीं। यह वृद्धि शील तथा सजीव परम्परा है, कोई स्थायी जड़ तत्त्वज्ञान

नहीं। इसका गौरवपूर्ण अतीत इतिहास इस बात का विश्वास दिलाता है कि भविष्य में होने वाली किसी भी आकस्मिक घटना का सामना करने में अपने आपको सक्षम सिद्ध कर पायेगा।

शताब्दियों की चिर निद्रा के अनतंर हम आज हिंदू धर्म के सृजनात्मक युग में स्थित हैं। हमने अपने धर्म को नूतन दृष्टि से देखना प्रारंभ कर दिया है। हम यह अनुभव करते है कि हमारा समाज असंतुलन की अवस्था में है। काफ़ी कुछ मत तथा रोगाक्रान्त हैं। उन्हें साफ करने की आवश्यकता है। समय की मांग यह नहीं कि हिंदू धर्म के शाश्वत आधारभूत सिद्धान्तों को तिलंजलि दी जाए, प्रत्युत आवश्यकता इस वात की है कि परिवर्तित उन सनातन सिद्धान्तों की नूतन व्याख्या प्रस्तुत की जावे। ऐसा करना कोई नया प्रयास न होगा, अपितु हिंदू धर्म के इतिहास में कितनी ही वार किए गये प्रयासों की पुनरावृत्ति होगी। जब जड़ें गहरी होती हैं तो विकास भी शनैः शनैः होता है। परन्तु जो भी निरविड़ अंधकार को दूर दूर करने के लिए एक छोटा दीया भी जलावेंगे वे संपूर्ण आकाश को ज्योतिर्मय वनाने में निश्चित सहायक सिद्ध होंगे।



भारत माता की जय



राष्ट्रनायक
श्री जवाहरलाल नेहरू

भारतमाता के सही अर्थ को समझने के लिए एक मार्मिक विश्लेषण

सभा और जलूसों के मारे हम दिन भर बेहद परेशान रहे। अम्बाला से चलकर हम करनाल पहुंचे। वहां से पानीपत, फिर सोनीपत और अन्त में रोहतक। खूब जोश और भीड़-भाड़ रही और आखिरकार पंजाब का दौरा खत्म हुआ। एक शान्ति की भावना मेरे भीतर उठी। कितना बोझ सिर पर था और कितनी थकान थी! अब तो ऐसे लम्बे आराम की जरूरत थी जिसमें जल्दी ही कोई विघ्न-बाधा आकर न पड़े।

रात हो गई थी। हम तेजी से रोहतक-दिल्ली रोड की ओर बढ़े; क्योंकि उस रात को हमें दिल्ली पहुंच कर गाड़ी पकड़नी थी। नींद मुझे बुरी तरह घेर रही थी। यकायक हमें रुकना पड़ा; क्योंकि बीच सड़क पर आदमी और औरतों की भीड़ बैठी थी। कुछेक के हाथों में मशालें थी। वे आगे बढ़कर हमारे पास आये और जब उन्हें संतोष हो गया कि हम कौन हैं, तब उन्होंने बताया कि दोपहर से वे वहां बैठे-बैठे इन्तजार कर रहे हैं। वे सब हृष्ट-पुष्ट जाट थे। उनमें ज्यादातर छोटे-मोटे जमींदार भी थे। उनसे बिना थोड़ी-बहुत बातचीत किए आगे बढ़ना मुमकिन नहीं था। हम बाहर आये और रात के धुंधलेपन में हजारों या इससे भी ज्यादा जाट मर्दों और औरतों के बीच बैठ गये।

उनमें से एक चिल्लाया, 'कौमी नारा'!' और हजारों गलों ने मिल

कर जोश के साथ तीन वार चिल्लाकर कहा — 'वन्देमातरम्!' और फिर उन्होंने 'भारतमाता की जय' के नारे लगाये।

"यह सब 'वन्देमातरम्' और 'भारतमाता की जय' किस लिए है?" मैंने पूछा।

कोई उत्तर नहीं। पहले उन्होंने मुझे घूरकर देखा और फिर एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। दिखाई पड़ता था कि वे मेरे सवाल करने से कुछ परेशान हो उठे हैं। मैंने सवाल दोहराया—"वोलिए, ये नारे लगाने से आपका क्या मतलव है?" फिर भी कोई जवाब नहीं मिला। उस जगह के इंचार्ज कांग्रेस-कार्यकर्त्ता कुछ खिन्न से हो रहे थे। उन्होंने हिम्मत करके सब वातें वतानी चाहीं; लेकिन मैंने उन्हें प्रोत्साहन नहीं दिया।

"यह 'माता' कौन है, जिसको आपने प्रणाम किया है और जिसकी जय के नारे लगाये हैं?" मैंने फिर सवाल किया। वे फिर चुप और परेशान-से हो रहे। ऐसे अजीव सवाल उनसे कभी नहीं किये गए थे। सहज भाव से उन्होंने सव वातों को मान लिया था। जव उनसे नारे लगाने के लिऐ कहा जाता था, वे नारे लगाने लगते थे। उन सव वातों को समझने की उन्होंने कभी कोशिश नहीं की। कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं ने नारे लगाने के लिए कहा तो वे उज्र कैसे कर सकते थे। वे तो खूव जोर से पूरी ताकत लगाकर चिल्ला देते थे। वस, नारा अच्छा होना चाहिए। इससे उन्हें खुशी होती थी और शायद इससे उनके प्रतिद्वन्द्वियों को कुछ डर भी होता था।

अव भी मैंने सवाल करना वन्द नहीं किया। बेहद हिम्मत करके एक आदमी ने कहा, कि 'माता' का मतलव 'धरती' से है। उस बेचारे किसान का दिमाग धरती की ओर ही गया, जो उसकी सच्ची मां है, भला करने और चाहने वाली है।

"कौन-सी 'धरती'?" मैंने फिर पूछा, "क्या आपके गांव की 'धरती' या पंजाव की, या तमाम दुनिया की?" इस पेचीदा सवाल से वे और परेशान हुए। तव वहुत से लोगों ने चिल्लाकर कहा कि इस सवका मतलव आप ही समझाइए। हम कुछ भी नहीं जानते और सारी वातें समझना चाहते हैं।

मैंने उन्हें वताया कि भारत क्या है। किस तरह वह उत्तर में काश्मीर और हिमालय से लेकर दक्षिण में लंका तक फैला हुआ है। उसमें

पंजाब, बंगाल, वम्बई, मद्रास सब शामिल हैं। इस महाद्वीप में उनके जैसे करोड़ों किसान हैं जिनकी उन जैसी समस्यायें हैं, उन्हीं की सी मुश्किलें और वोझ, वैसी ही कुचलने वाली गरीवी और आफतें हैं। यही महादेश हिन्दुस्तान उन सबके लिए 'भारतमाता' है जो उसमें रहते हैं और जो उसके वच्चे हैं। भारतमाता कोई सुन्दर बेवस असहाय नारी नहीं है, जिसके घरतो तक लटकने वाले लम्बे-लम्बे वाल हों, जैसा अक्सर कल्पित तस्वीरों में दिखलाया जाता है।

'भारतमाता की जय !' यह जय वोलकर हमने किसकी जय वोली? उस कल्पित स्त्री की नहीं जो कहीं भी नहीं है। तव क्या यह जय हिन्दुस्तान के पहाड़ों, नदियों, रेगिस्तानों, पेड़ों, पत्थरों की वोली जाती है ?

"नहीं," उन्होंने जवाव दिया। लेकिन कोई ठीक उत्तर वे मुझे न दे सके।

"निश्चय ही हम जय उन लोगों की वोलते हैं जो भारत में रहते हैं—उन करोड़ों आदमियों की जो उसके गांवों और नगरों में वसते हैं।" मैंने उन्हें वताया। इस जवाव से उन्हें हार्दिक प्रसन्नता हुई और उन्होंने अनुभव किया कि जवाव ठीक भी है।

"ये आदमी कौन हैं ? निश्चय ही आप और आपके भाई। इसलिए जब आप **'भारतमाता की जय'** वोलते हैं, तो वह अपने और हिन्दुस्तान भर के अपने भाई-वहनों की ही जय वोलते हैं। याद रखिए, भारतमाता आप ही हैं और यह आप अपनी ही जय वोलते हैं।"

ध्यान से उन्होंने सुना। प्रकाश की उज्ज्वल रेखा उनके भोले-भाले चेहरों पर उदय होती हुई दिखाई दी। यह ज्ञान उनके लिए एक विचित्र था कि वह नारा, जिसे वे इतने दिनों से लगा रहे हैं, उन्हीं के लिए था।

हां, रोहतक जिले के गांव के उन्हीं वेचारे जाट किसानों के लिए। यह उन्हीं की जय थी। तव आइए, एक वार फिर मिलकर पुकारें—**"भारतमाता की जय !"**

तव हम अन्धकार में दिल्ली की ओर वढ़े। रेल मिली और उसके वाद खूब आराम भी।

१६ सितम्बर, १९३६।

जैंनी भी हिन्दू हैं





आचार्य तुलसी

हिन्दू को धर्म से हटाकर राष्ट्र के साथ जोड़ दिया जाय तो हम सव जैन भी हिन्दू हैं। हिन्दू एक राष्ट्र का नाम है। सिन्धु नदी के सीमाकरण के कारण देश का नाम हिन्दू हुआ। जैन ग्रन्थों में उल्लेख आता है कि एक जैनाचार्य ने अपने शिष्य से कहा—'चलो हिन्दू देश चलें'—

एहि हिन्दू देशम् बच्चामि

दर असल यह देश के लिए प्रयुक्त होने वाला शव्द था। रहा धर्म का प्रश्न तो प्राचीनकाल में धर्म की दो मुख्य धाराएं थीं—वैदिक और श्रमण। फिर इनकी वहुत-सी शाखाएं थीं। श्रमण वाली धारा की भी वाद में दो शाखाएं हो गईं—वौद्ध और जैन। हिन्दू कोई धर्म नहीं था। हिन्दू शव्द भी प्राचीन नहीं है। अगर सभी लोगों को हिन्दू रखना चाहते हैं तो इसे धर्म की परिधि से निकाल कर राष्ट्र, संस्कृति और समाज से जोड़ना होगा। हिन्दू शव्द को धर्म के साथ जोड़ने से हित कम, अहित अधिक हुआ है।

समस्त भारतीय धर्मों को हिन्दू में समाविष्ट करने के लिए, उपनिषद्, गीता, धम्मपद, आचारांग-सूत्र और गुरुग्रन्थ साहव को भी उसमें शामिल करना चाहिए।

—युग-प्रधान आचार्य तुलसी

विवेकानन्द उवाच—

तुम हिन्दू कब हो ?

मेरी बात ध्यान से सुनो ! तुम तव और तव ही हिन्दू हो, जव इस शब्द के उच्चारण-मात्र से तुम्हारी नसों में शक्ति रूपी विद्युत् का संचार हो जाए ।

तुम तभी हिन्दू हो, जव किसी भी देश का निवासी हिन्दू तुम्हारी भाषा (या कोई भो भाषा) वोले, और वह तुम्हारा निकटतम और प्रियतम वन जाए ।

तुम तभी हिन्दू हो, जव हिन्दू नाम धारण करने वाले किसी भी व्यक्ति का दुःख-दर्द तुम्हारे हृदय का वैसे ही दर्द वन जाये जैसे कि तुम्हारा अपना पुत्र विपद्ग्रस्त हुआ हो ।

तुम तभी हिन्दू हो, उव तुम उनके लिए गुरु गोविन्दसिंह की तरह सव तरह के कष्ट झेलने को तैयार हो ।

सुनो ! तुम अपने देश का यदि भला करना चाहते हो, तो तुममें से प्रत्येक को गुरु गोविन्दसिंह वनना पड़ेगा । भले ही तुम्हें अपने देशवासियों में हजारों कमियाँ दिखाई दें. पर उनके हिन्दू-रक्त को मत भूलो ! तुम्हारे लिए प्रथम देवता वही है जिनकी तुम्हें पूजा करनी है, भले ही वे तुम्हें आघात पहुंचाने वाला प्रत्येक कार्य करे, भले ही वे तुम्हें गालियाँ दें, पर तुम उनके लिए अपने मुख से प्रेम के ही शब्दी का उच्चारज करो । यदि वे तुम्हें निष्कासित भी कर दें, तब भी शक्ति पुंज शेर सदृश गुरु गोबिन्दसिंह की तरह शान्ति से मरण का वरण करो ।

ऐसा व्यक्ति हिन्दू कहलाने का अधिकारी है । हमारे समक्ष सदा यही आदर्श रहना चाहिए । अपने सव द्वेष अरौ संकीर्णताओ को दफना दो और चारों ओर अपने प्रेम की उदार धारा प्रवाहित कर दो ।

एक पावन पागलपन

—स्व० ला० हरदयाल, एम० ए०—

मुझे यह सूचना मिली है कि कतिपय देशभक्त मुसलमानों ने मुझे 'प्रमत्त' या पागल की उपाधि दी है क्योंकि मैंने हिन्दू-मुस्लिम वाद-विवाद के विषय में अपने तुच्छ भावों को प्रकट किया है। मैं इस 'प्रमत्त' की उपाधि को सहर्ष स्वीकार करता हूं। मैं स्वदेश से दूर बैठे हुये कुछ एक व्यक्तिगत भावों को प्रकट करना चाहता था। मैंने केवल विद्वत्ता के दृष्टिकोण से इस प्रश्न पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। सम्भव है, यह विचार अशुद्ध और निराधार प्रमाणित हों और यह भी सम्भव है कि इन भावों और विचारों में भारत की स्वाधीनता का रहस्य छिपा हो। यह भविष्य की बात है। कौन बता सकता है कि कब और किस प्रकार स्वराज्य प्राप्त होगा ? स्वदेश प्रेमी इतिहास और राजनीतिशास्त्र का अध्ययन करके अपनी-अपनी योजनाएं प्रस्तुत कर सकते हैं। रोग एक है, चिकित्सक बहुत हैं। देखिये, किस की औषधि सफल होती है ?

इस विषय में निरर्थक कोसने और व्यक्तिगत आक्षेपों की आवश्यकता ही नहीं। एक युक्ति के समक्ष दूसरी युक्ति प्रस्तुत करनी चाहिये ताकि भली भांति वाद-विवाद पूर्वक विचार किया जा सके।

इसके अतिरिक्त मैं तो वास्तव में पागल हूं और कुछ प्रतिशत हिन्दुओं को भी अपने साथ पागल बनाना चाहता हूं। यदि एक करोड़, केवल एक करोड़ हिन्दुओं के मन और मस्तिष्क में मेरी अपेक्षा आधा भी पागलपन आ जाये तो हिन्दू-जाति न केवल समस्त भारत और काबुल का राज्य ले लेगी, अपितु, पूर्वीय अफ्रीका, फिजी, मारीशस आदि देशों पर भी आधिपत्य जमा लेगी। यही पागलपन हिन्दू-संगठन भक्तों और सेवकों का आदर्श होना चाहिये।

निस्सन्देह मैं तो हिन्दू नवयुवकों को वीरों और योद्धाओं के उस ऐश्वर्य-पूर्ण पागलखाने में प्रविष्ट कराना चाहता हूं जहां त्याग को लाभ,

निर्धनता को धन और मृत्यु को जीवन समझा जाता है। मैं तो ऐसे ही पक्के, पूर्ण और पवित्र पागलपन का प्रचार करता हूं। इसलिये इस 'पागल' की उपाधि का सम्मान करता हुआ इसे सहर्ष स्वीकार करता हूं।

हिन्दू संगठन के पुनीत आंदोलन की उन्नति हो रही है। हिन्दू सभाएं वन रही हैं। बस यही स्वाधीनता का मार्ग है, यही स्वराज्य की सोधी राह है। इससे दासता की वेड़ियां कट जायेंगी, इससे हिन्दुस्तान के और पंजाब के इतिहास में एक नये युग का आरम्भ होगा। इसी के लिये पंजाव की पुण्य भूमि ने आज इस कायरता और वाक्-पटुता के समय में भी शहीद और शूरवीर उत्पन्न किये हैं।

परन्तु क्या यह आन्दोलन कोई नया आन्दोलन है ? क्या यह क्रांति आज आरम्भ हुई है ? क्या हम लोग इसके जन्मदाता हैं ? नहीं, कदापि नहीं ! इस आंदोलन के उत्पादक और जन्मदाता तो वैदिक ऋषि वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, बुद्ध और अशोक, भगवान राम और कृष्ण, श्रीगुरु तेगवहादुर और गुरु गोविन्दसिंह, वीर वैरागी, शिवाजी, महाराजा रणजीतसिंह, महाराणा प्रताप, छत्रसाल, दुर्गादास राठौर और स्वामी श्रद्धानन्द हैं।

यह आंदोलन हजारों वर्षों से चला आ रहा है। हां, पंजाव में वहुत शताब्दियों तक यह आंदोलन निर्बल हो गया था। तव गुरु तेगवहादुर ने इसे पुनर्जीवित किया और उसके अनुयायियों ने इसे सफलता का मुकुट पहनाया। सन् १८४५-४६ की पराजय के पश्चात् यह आंदोलन कुछ दव गया, यद्यपि गुरु रामसिंह के अनुयायियों ने चेतावनी भी दी। अब फिर यह आंदोलन उसी पवित्र कार्य की पूर्ति के लिये आरम्भ किया गया है ताकि गुरुओं का जीवन-उद्देश्य सफल हो और इस पावन मातृभूमि पर हिन्दू स्वराज्य-सुख-सम्पत्ति का उपभोग कर सके।

हम हिन्दू स्वराज्य और शुद्धि द्वारा ही स्वदेश को सदैव के लिये सुख,शांति और एकता रूपी धन से धनी कर सकते हैं। शेष लीपा-पोती व्यर्थ की विडम्वना है। वह केवल उस कच्ची भीति की नाईं है जो वर्षा से बैठ जायेगी। मैं डंके की चोट कहता हूं कि हम हिन्दुस्तान में हिन्दू स्वराज्य प्रतिष्ठित करेंगे। हिन्दुस्तान को ऋषियों का शुद्ध भारत वनायेंगे। मैं यह घोषणा करता हूं, जिनके कान हों वे सुन लें, हां, सब मतावलम्बी सुन लें। क्या कुल्हिया में गुड़ फूट सकता है ? क्या कानाफूसी और झूठी

बातों से इतने विशाल देश के राष्ट्रीय-आंदोलन को सफलता मिल सकती है ? यह असम्भव है। हिन्दू स्वराज्य और शुद्धि के आदर्शों को एक बार नहीं, दो बार नहीं, प्रत्युत शत बार दुहरा कर कहता हूं कि हिन्दुओं की रक्षा केवल इसी मार्ग से हो सकती है। परन्तु कुछ एक सावधान राजनीतिज्ञ धीरे से मेरे कान में कहते हैं, "खबरदार" इतना न चिल्लाओ, कहीं मुस्लिम नेता न सुन लें, वह क्रुद्ध हो जायेंगे, समझौता नहीं करेंगे, और कांग्रेस में न आयेंगे। चुप ! चुप !! हृदय से तो हम भी तुम्हारे साथ हैं, क्योंकि हम भी हिन्दू हैं, परन्तु इस प्रकार खुल्लम-खुल्ला कहने और लिखने से द्वेष बढ़ जायगा और मुसलमान क्रुद्ध हो जायेंगे। बस जरा चुप रहो, ऐसी बातें कहने की क्या आवश्यता है ?"

मेरा उत्तर स्पष्ट है। मेरी अन्तरात्मा का यह सन्देश है : "मुझे न मुसलमानों से समझौता करना है और न कांग्रेस के जलसे में जाना है। मुझे न ऊपरी दिखावे से काम है और न पत्रों के सम्पादकों का भय है। मेरे अन्दर एक दृढ़ विचार है और यही मेरा स्पष्ट कर्तव्य है : 'यदि हिन्दू जाति की राख के ढेर के नीचे कहीं जरा सुलगती हुई चिनगारी बाकी है तो उस पर फूक मार-मार कर ऐसी प्रचण्ड ज्वाला उत्पन्न कर दी जाये जिसमें हमारी दासता और दरिद्रता, दीनता और हीनता सदैव के लिए जल-भुन कर भस्मीभूत हो जाये।"

भारतवर्ष यदि ईसाई हो जाय या कुछ और बन जाये तो 'हमारा भारत' नहीं रहेगा। जब हमारी ऋषि-भाषा, हमारा इतिहास, हमारे पर्व और त्यौहार, हमारा नाम और हमारी संस्थाएं यहां नहीं रहेंगी तो हमारी बला से, इस देश में कोई बसे। यदि हिन्दुस्तान हिन्दुओं का स्थान नहीं रहेगा तो हमारी जातीयता नष्ट हो जायेगी।

बुलबुल ने आशियाना चमन से उठा लिया।
उसकी बला से बूम रहे या हुमा रहे ॥

स्वराज्य के लिये मुसलमानों की सहायता की अपेक्षा क्यों है ? मेरा यह प्रश्न है। यदि कुछ देशप्रेमी यह कहें कि केवल हिन्दुओं के बल से स्वराज्य नहीं मिलेगा, तो इस बात का क्या प्रमाण है कि हिन्दू-मुसलमान मिल जायेंगे तो स्वराज्य अवश्य ही मिल जायेगा। यह भी कुछेक कांग्रेसी नेताओं की मन-मानी बात है। सन् ५७-५८ में हिन्दू और मुसलमानों का ऐक्य था तब कौन सा तीर मार लिया ? दोनों को पराजय

मिली। खिलाफत आन्दोलन के समय बड़ा एका था, तब क्या स्वराज्य मिल गया ?

मैं कहता हूं कि यदि हिन्दू स्वयं अपना राज्य नहीं वना सकते तो दूसरे की सहायता से कुछ भी लाभ न होगा। दोनों ही असफल होंगे। और यदि हिन्दू स्वयं अपना स्वराज्य ले सकते हैं तो दूसरों की सहायता की आवश्यकता ही क्या है ?

मैं इस घातक भावना के विरुद्ध कि "हिन्दू स्वयं अपना स्वराज्य नहीं ले सकते"—अपनी प्रवल आवाज उठाता हूं। यह विचार हिन्दुओं के लिये हलाहल विष है।

शुद्धि के आदर्श को छोड़ देना अपनी राष्ट्रीय आत्मा का हनन करना है। हिन्दुओं से यह न कहो कि अन्य जातियों का साहाय्य आवश्यक है, प्रत्युत उन्हें यह सिखाओ कि यदि अन्य मतावलम्वी सहायता भी देना चाहें तो उसे स्वीकार न करो। यह स्वराज्य का कठिन मार्ग है। जिसे अपने वाहु-वल पर विश्वास है उसकी विजय होगी। जो अन्यों से संधि और समझौते करता फिरता है और अपनी मान-मर्यादा का मान नहीं करता—वह और उसके विजातीय संगी-साथी सव मारे जायेंगे। जव विगाने लोग प्राचीन भारत की सव संस्थाओं का निरादर करके फारसी और अरवी सभ्यता का भारत में प्रचार करते हैं, तो हम उनके साथ मिल कर काम नहीं कर सकते।

हिन्दुओं की अनियमता, मूर्खता और मूढ़ता की भी कोई सीमा तो होनी चाहिये। यदि हिन्दू प्रतिवर्ष रामचन्द्र का त्यौहार मनाते हैं तो उनको उन विरोधियों से अवश्य दूर रहना होगा जो रामचन्द्र का नाम हिन्दुस्तान की पुण्य-भूमि से पूर्णतया मिटा देना चाहते हैं। यदि हिन्दू संस्कृत और अपने साहित्य से प्रेम रखते हैं तो उन सज्जनों से उन्हें अवश्य निवेदन करना होगा जो फारसी और अरवी साहित्य को हिन्दुस्तान में प्रविष्ट कर रहे हैं।

हिन्दुओं को कुछ तो अपने नियमों और सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये। सच वात तो यह है कि हिन्दुओं को अपने सिद्धान्त या संस्था से प्रगाढ़ प्रेम नहीं है। वे फारसी पढ़ने को भी तैयार हैं। उद्देश्य केवल रुपया है। जव तक इन्हें रुपया मिले और उनकी जान बची रहे, चाहे बच्चे भले ही नष्ट हो जायें, तब तक ये सुखी हैं। राष्ट्रीय या धार्मिक सिद्धान्त

जायें भाड़ में ।

इसी कारण इन्हें राष्ट्रीय स्वाधीनता असंभव दीख पड़ती है। मैं इस रोग का उपचार बताता हूं । अपनी राष्ट्रीय संस्थाओं का प्रेम बहुत बढ़ाया जाये। अपनी भाषा, अपना इतिहास, अपने त्यौहार, अपने महापुरुष, अपना वेष, अपना आहार-व्यवहार इत्यादि अपनी हिन्दू संस्थाओं के प्रति जितना प्रेम उत्पन्न किया जायेगा, उतना ही दूसरों को सहायता लेना निरर्थक और निर्मूल प्रतीत होगा। जो हिन्दू स्वयं क्षण-क्षण में अपनी इन प्राचीन संस्थाओं की जड़ काट रहे हैं, उनके साथ किस ध्येय को लेकर कार्य किया जाय ? अब रहा यह प्रश्न कि क्या यह सम्भव है ? इसका उत्तर यह है कि "प्रत्येक मनुष्य को अपने साहस और सामर्थ्य के अनुकूल ही चिन्ता होती है" । कोई भी उच्च और कठिन आदर्श केवल उन आत्माओं की बुद्धि में आ सकता है जो बहुत त्याग करने पर उद्यत हों। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति अपनी अन्तरात्मा को देखकर ही कह सकता है कि अमुक कार्य सम्भव है अथवा असम्भव। जिन कायर और स्वार्थ-परायण हिन्दुओं को केवल 'होगा वही जो राम रचि राखा' कहना आता है, उनके लिए सब कुछ कठिन है। उनकी सम्मति में स्वराज्य-प्राप्ति अत्यन्त ही असम्भव है, क्योंकि हिन्दू और मुसलमान अत्यन्त निर्बल और असमर्थ हैं और अंग्रेजों का भाग्य-सूर्य शिखर पर है।

परन्तु जिन हिन्दुओं के हृदय में ऋषियों, वीर-योद्धाओं और गुरुओं की शिक्षा काम कर रही है, उनके लिए न केवल अपना स्वराज्य प्रत्युत अन्य देशों को जीत लेना भी सम्भव है। यह केवल अपने साहस पर निर्भर है।



छत्रपति शिवाजी

हिन्दुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की
कांधे में जनेऊ राख्यो, माला राखी गर में।



जब औरंगझेब ने राजा जयसिंह को सेनाध्यक्ष बनाकर शिवाजी से लड़ने भेजा तो शिवाजी ने उन्हें पत्र लिखा—

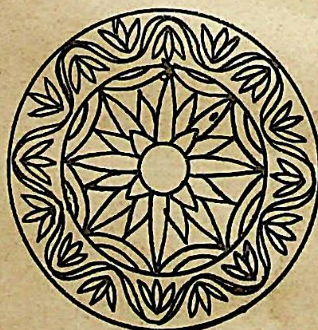
"तुम्हें जितने किले चाहिएं उतने ही किले दे सकता हूं। स्वयं अपने हाथों तुम्हारा ध्वज किलों पर चढ़ा दूंगा। पर विधर्मियों को यह यश नहीं दिया जा सकता। मैं हिन्दू हूं, तुम भी राजपूत हो और हिन्दू हो। हिन्दू राज्य किसी भी हिन्दू के पास रहे, इसमें कोई हानि नहीं। मैं हिंन्दू धर्म के रक्षक को सौ वार नमस्कार करने को प्रस्तुत हूं। परन्तु हिन्दू धर्म की मान हानि हो, यह कभी सहन नहीं हो सकता।"

'मैं हिन्दू हूं'

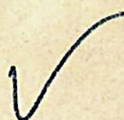
"एक मात्र हिन्दू धर्म ही ऐसा है जिसकी सबसे बड़ी विशेषता, जिसकी मैं सर्वाधिक प्रशंसा करता हूं, सहिष्णुता है। उसमें कोई पोप नहीं है जो अपने अनुयायियों को खास ढंग का जीवन जीने के लिए 'हुक्म-नामे' (Bulls) जारी करता हो। इसमें सभी प्रकार के वैचारिक सम्प्रदायों का समावेश है। तुम चाहे आस्तिक हो, चाहे नास्तिक हो, चाहे सन्देहवादी हो, फिर भी तुम हिन्दू हो। वास्तव में तो हिन्दू धर्म को धर्म Religion कहना ही गलत है। यह तो एक जीवन-विधि है, विचार-पद्धति है। फ्रांसीसी लोग अपनी तर्क-बुद्धि और सूक्ष्म विश्लेषण के अन्तर्गत समस्त भारतीयों को, फिर चाहे वे किसी भी जाति या सम्प्रदाय के क्यों न हों, 'हिन्दू' (L' Hindus) ही कहते हैं। मैं समझता हूं कि जो इस देश में रहते हैं, इसे अपना घर मानते हैं, उनके लिए यही सही सम्बोधन है।

सच बात तो यह है कि हम सब हिन्दू हैं, भले ही हम भिन्न भिन्न धर्मों-मजहबों या सम्प्रदायों को मानने वाले हों। मैं हिन्दू हूं, क्योंकि मैं अपने पूर्वजों को आर्यों की सन्तान मानता हूं और मैं उस संस्कृति तथा विचारधारा का पोषक हूं जिसे वे अपनी भावी पीढ़ियों के लिए विरासत में छोड़ गए हैं।"

—मुहम्मद करीम छागला



हिन्दू समाज के द्वार सदा खुले रखो



न्यायमूर्ति पी. रामकृष्णन्
(मद्रास उच्चन्यायालय के
अवकाश प्राप्त न्यायाधीश)

मीनाक्षीपुरम के हरिजनों ने रातोंरात सामूहिक रूप में इस्लाम मजहब स्वीकार कर लिया—इतने अधिक लोगों का अचानक धर्म परिवर्तन और वह भी एक ही समय में प्रत्यक्षतः गहन विचार पूर्वक हिन्दू धर्म के सिद्धांतों के प्रति अनास्था और इस्लाम के सिद्धांतों के प्रति आस्था के उदय हो जाने के कारण नहीं हो सकता।

प्राचीन काल में तलवार की नोक पर और मिशनरी लोगों के जोश एवं निरन्तर प्रयास से हिन्दुओं का सामूहिक धर्मान्तरण हुआ है। मीनाक्षी-पुरम के धर्मान्तरण में न तो तलवार का और ना ही तवलीगी प्रचारकों के जोशीले प्रचार का हाथ देख पड़ता है। अतः जिन लोगों के धर्मान्तरण का कारण दवाव, आर्थिक लाभों सहित विविध प्रकार के प्रलोभन हों, वे उन कारणों का निवारण होने पर पुनः शुद्ध किए जा सकते हैं।

बीसवीं शती के प्रारम्भिक चरण में जब मलाबार में मोपला विद्रोह हुआ और बहुसंख्यक हिन्दू बलात् मुसलमान बना लिए गए तब आर्य समाज मैदान में उतरकर मुसलमान बने लोगों को शुद्ध करके पुनः हिन्दू धर्म में वापस लाया था। इतना ही नहीं, आर्य समाज और स्वामी श्रद्धानन्द जी ने नियोजित रूप से शुद्धि आन्दोलन प्रारम्भ करके पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि में अनेक व्यक्तियों और वर्गों की शुद्धियां की थीं।

इन बहुचर्चित सामूहिक धर्मान्तरणों के प्रत्यक्षतः दो परिणाम होंगे :—

(१) संविधान में हरिजनों के उद्धार के लिये जो संरक्षण व सुवि-धाएं निर्धारित की गई हैं उनसे लाभान्वित करने में शीघ्रता की जायगी।

परन्तु यह कार्य की अपेक्षा रखता है क्योंकि ये सुविधाएं किसी ग्राम-विशेष के लिए नहीं, अपितु देश भर के परिगणित और अनुसूचित जातियों व वर्गों के लिए अभिप्रेत है। प्रशासनों और विधान मंडलों को इन्हें पृथक-पृथक स्तर पर रखना होगा।

(२) सवर्ण हिन्दुओं में पिछड़े वर्गों के प्रति कुंठित भावना जागृत होगी। परन्तु इसका प्रभाव शीघ्र ही दृष्टिगोचर न होगा। इसके लिए समय अपेक्षित होगा। फिर भी इस स्थिति से निपटने के लिए हमें सजग होकर समुचित पग उठाने होंगे।

कुछ उपयोगी सुझाव

इस प्रसंग में कतिपय सुझाव प्रस्तुत हैं—

(१) मीनाक्षीपुरम के धर्म-परिवर्तन बहुसंख्य लोगों में उदित सच्ची धार्मिक अनुभूति के कारण हुए नहीं माने जा सकते। अतः ये अवास्तविक व अस्थायी करार दिए जाने योग्य हैं। दूसरे शब्दों में ये धर्मान्तरण नाम के ही हैं, हृदय परिवर्तन का इनसे कोई सम्बन्ध न होने से ये वास्तविक धर्मान्तरण नहीं हैं। स्थिति का तकाजा है कि धर्म्मान्तरित लोग ठंडे दिल से अपने इस कार्य पर विचार करें, साथ ही हिन्दू धर्म के द्वार उनके लिए खुले रखे जांय। जब नव मुस्लिम हरिजन बन्धु अपने घर वापस लौटें तो उनका उन लोगों के द्वारा, जो धर्म्मान्तरित नहीं हुए हैं, जाति बहिष्कार न किया जाय। खुले हृदयों से उनके पुनरागमन का स्वागत किया जाय। इस प्रसंग में लोकमत जाग्रत किए जाने की परमावश्यकता है।

(२) मठाधीशों और धर्माचार्यों की आम सहमति से उनका साधारण शुद्धि संस्कार किया जाय और इसका पूर्व से ही पर्याप्त प्रचार किया जाय।

इस शुद्धि कार्य के लिए एक मात्र आर्य समाज पर ही दृष्टि न रखी जाय। ऐसा करने का अर्थ यह होगा कि मठाधीश व धर्माचार्य अपनी जिम्मेवारी आर्य समाज पर डालकर उससे बचना चाहेंगे। यदि वे मैदान में उतरें तो इस दिशा में बहुत कुछ कर सकते हैं।

(३) शुद्धि से पूर्व सार्वजनिक तालाबों या निकटवर्ती किसी नदी में हरिजन बन्धु स्नान करें। परम्परागत जाति का तिलक लगाएं। चुनिंदा मन्दिरों में अर्चना--प्रार्थना आदि करें। उन्हें मालाएं पहनाई जांय और समारोह पूर्वक उन्हें अपने घरों को लौटाया जाय।

(४) शुद्धि के समय ही उनके पहले वाले नाम ही रखे जांय। प्रायः उनके नए मुस्लिम नाम सरकारी गजट में प्रकाशित न हुए होंगे, अतः पुराने नामों के रखे जाने में कोई कानूनी कठिनाई न होगी। यदि कुछ नाम प्रकाशित हो भी गए होंगे तो उनका पुनः प्रकाशन आवश्यक होगा।

इन परिवर्तनों की सम्पुष्टि और नियमन के लिए राज्य प्रशासन हिन्दू रिलीजंस एनडाउमेन्ट वोर्ड (हिन्दू धर्म संस्थान) को आदेश दे कि वह विविध हरिजनों के ग्रामों के लिए पृथक स्थायी रजिस्टर रखे जिसमें हिन्दू धर्म में वापसी और पुराने नामों की बहाली का उल्लेख हो।

संरक्षण व सुविधाएं

(५) राज्य प्रशासन को स्पष्ट शब्दों में इस बात पर बल देना होगा कि हरिजनों के कालेजों में प्रवेश, सरकारी सेवाओं में भरती, विधान सभाओं के चुनावों के लिए संवैधानिक नीति के अनुसार अधिकृत एवं निर्धारित सुविधाओं व संरक्षणों का हिन्दू दायरे में रहते हुए ही वे लोग लाभ उठा सकेंगे। यह बात स्पष्ट कर देनी चाहिए कि मुसलमान बन जाने पर वे उन सुविधाओं से वंचित हो जायेंगे। शुद्ध हो जाने पर कोई हरिजन उन सुविधाओं की मांग करेगा तो उसे एच० आर० ई० वोर्ड के उपर्युक्त रजिस्टर में अपने पुराने नाम की प्रविष्टि का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना होगा और यह भी ध्यान रखना होगा कि इन सुविधाओं का लाभ सर्वसाधारण हरिजनों को प्राप्त रहे। उन्हें मन्दिर प्रवेश का भी पूर्णतः अधिकार देना होगा।

इस सम्बन्ध में गुजरात के स्वामी नारायण की कार्य शैली का अपनाया जाना उपयोगी होगा। उन्होंने मन्दिरों का जाल बिछा दिया था जिनमें पारसियों और मुसलामानों तक का प्रवेश विहित रहता था। इसी प्रकार केरल के श्री नारायण गुरु ने मन्दिरों का जाल पूर दिया था और उनमें पूजा उपासना की विधि निर्धारित कर दी थी। उन्होंने अन्य भी अनेक सुधार किये जिनसे उन प्रभावशाली थिया लोगों की भी हिन्दू धर्म के प्रति निष्ठा वनी रही जिनकी पहले अस्पृश्यों में गिनती होती थी। ●

मेरे देश !

मेरे देश ! वता तेरी वह कीर्ति कहानी कहां गयी ?
कहां गए वे लाल कि जिनका मान रक्त से गाढ़ा था,
कहां गई द्रोपदी भातृहित आंचल जिसने फाड़ा था,
कहां गए वे कुंवर यशस्वी वलिदानों के अभिलाषी,
वे कि जिन्होंने यश का झण्डा देश शिखर पर गाड़ा था।
मावस को पूनम करती वह रात सुहानी कहां गई ?

कहां गए वे वीर शिवाजी, वे प्रताप से अभिमानी,
कहां पेशवा, तात्या टोपे, भगत सिंह से वलिदानी,
देश प्रेम सिखलाने वाली कहां गई जीजावाई,
अजिता और अजीजन थी जो त्यागमयी औ शुचि मानी।
आजादी की दीवानी झांसी की रानी कहां गई ?

अपना वह आदर्श कहां वह राम-कृष्ण गौतम गांधी
महावीर, चैतन्य जिन्होंने सीमा धर्म की थी वांधी,
कहां गई गीता कुरान रामायण की प्यारी वातें
विखर गए आदर्श हमारे चली हाय कैसी आंधी।
अपनी संस्कृति और अपनी यशकथा पुरानी कहां गई ?

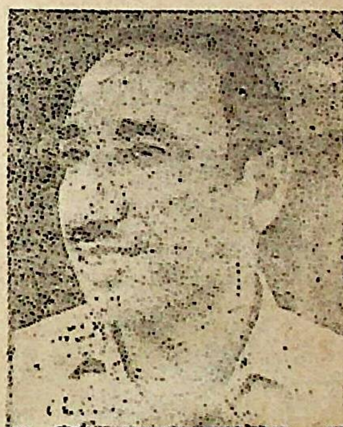
मंगल ने मंगलाचरण वन जब प्राणों का दान किया,
वलिदानों के महाकाव्य को था अभिनव सम्मान दिया,
स्वतन्त्रता के विशद ग्रंथ में फिर कितने ही पृष्ठ जुडे,
भरत वाक्य वनकर वापू ने उनको अमर महान् किया।

वह मुस्कान, भरा जिसमें आंखों का पानी, कहां गई ?
मेरे देश ! वता तेरी वह कीर्ति कहानी कहां गई ?

—रंजना वर्मा

समस्या का सही हल हिन्दू राज्य

—प्रो० बलराज मधोक—



१९४७ में कश्मीर के भारत-विलय की भूमिका तैयार करने के लिए प्रजा-परिषद् का गठन। १९४९ में अ० मा० विद्या परिषद् की स्थापना। १९५१ में जनसंघ स्थापना सम्मेलन के संयोजक। ५३ से ६३ तक दिल्ली प्रदेश जनसंघ के अध्यक्ष। ६१ और ६७ में लोकसभा के सदस्य निर्वाचित। हिन्दी अंग्रेजी में १५पुस्तकों के लेखक। हिन्दू-हितों और हिन्दू राज्य के सवल प्रवक्ता इतिहास के प्राध्यपक।

संसार में दो प्रकार के मजहव, मत अथवा पंथ हैं। एक वे जो भारतीय उद्गम के हैं। उनमें प्रमुख हैं शैवा मत, वैष्णव मत, वौद्धमत, जैन मत, इत्यादि। यह सभी हिन्दू महा संघ के अंतर्गत आते हैं। दूसरे वे हैं जिन्हें सेमेटिक कहते हैं। उनका उदय फिलस्तीन और उसके पास के अरव क्षेत्र में हुआ। इनमें प्रमुख हैं यहूदी मत, ईसाई मत और इस्लाम अथवा मुहमदी मत।

इन दो पंथ-समूहों में एक बुनयादी अन्तर है। सेमेटिक मतों में से हरेक अपने को ही एकमात्र सच्चा मत और अपने पैगेम्वर और पवित्र पुस्तक को ही एक मात्र सत्य का ठेकेदार और इलहामी पुस्तक मानता है। इसलिए इन मतों के अनुयायी अपने से भिन्न मतावलम्वियों को काफिर मानते हैं। यही कारण हैं कि गत दो हजार वर्षों से उनके वीच लगातार संघर्ष और मारकाट चलती आ रही है।

इस समय यहूदी तो स्वयं घिरे हुए हैं। इसलिए वे अपनी सुरक्षा में ही व्यस्त हैं ईसाईयों के कुछ वर्गों ने अपने चिंतन को कुछ वदला है और वे अन्य मजहवों के साथ सह अस्तित्व से रहने लगे हैं। परन्तु जहां उनका वस चलता है वहां वे दूसरों को ईसाई वनाने में आज भी कसर नहीं छोड़ते।

इस्लाम का ७ वीं शताब्दी में जन्म हुआ था। तव से वह वहीं का वही है। इसका जो कुछ थोड़ा बहुत आधुनिकीकरण हुआ था वह भी कुछ

वर्षों से पेट्रो-डालर के वल पर उठने वाले इस्लामी सिद्धान्तवाद की लहर में वह गया है। यहूदियों और इस्राईल के विरुद्ध चलने वाले जिहाद और लेबनान, साईप्रस, फिलीपाइन, नाईजिरिया इत्यादि देशों में इस्लाम के अनुयायियों का वहां के ईसाई समुदाय के साथ चलने वाले सतत हिंसक संघर्ष उसी का परिणाम हैं। कोई दिन नहीं वीतता जव इन देशों में मुसलमानों के हाथों सैकड़ों ईसाई और ईसाइयों के हाथों सैकड़ों मुसलमान न मारे जाते हों।

मिल्लत और कुफ्र

इस्लाम मानव जाति को दो भागों में विभक्त करता है—

१. "मिल्लत" और २. "कुफ्र"। जो मुहम्मद और कुरान पर ईमान लायें वे मिल्लत, अथवा इस्लामी राष्ट्र का अंग हैं और परस्पर भाई हैं। जो उन पर इमान न लायें वे काफिर हैं। संसार की भमि को भी इस्लाम दो भागों में बांटता है। मुसलमान जहां राज करें, उसे दार-उल-इस्लाम कहते हैं। जहां मुसलमान का राज नहीं, वहां उनके लिए दार-उल-हरब है। दारुलहरब पर वाहर से आक्रमण और अन्दर से तोड़फोड़ करके उसेर-उल-इस्लाम में वदलना हर मुसलमान और हर इस्लामी राज्य का मजहवी कर्तव्य है। १९४७ में भारत का विभाजन करके देश के एक भाग को इस्लामी देश वनाना और वाद में साइप्रस का विभाजन करके उसके एक भाग को इस्लामी देश वनाना इस्लाम के इसी सिद्धान्त का परिणाम था।

भारतीय उद्गम के सभी पंथों के अनुयायी भारतीय संस्कृति और परम्परा को समान रूप में मानते हैं। उनकी आस्था का केन्द्र देश के बाहर नहीं। वे सभी "सर्वधर्म समभाव", शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व और मजहवी आजादी में विश्वास रखते हैं। इसलिए किसी भारतीय अथवा हिन्दू का इनमें से किसी एक पंथ को छोड़ कर दूसरे पंथ में जाने से राष्ट्र की एकता और सुरक्षा को कोई खतरा पैदा नहीं होता। इसलिए इन पंथों में से किसी एक में जाने या उसे छोड़ने पर किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

ये तीन रास्ते अपनाये

परन्तु किसी भारतीय अथवा हिन्दू को इस्लाम, ईसाइयत या यहूदी इत्यादि सेमेटिक मजहवों में प्रवेश को छूट देना खतरे से खाली नहीं। ये मजहब भारत में विदेशी आक्रान्ताओं के कन्धों पर सवार हो कर आए थे।

विदेशी आक्रान्ताओं ने भारत के लोगों को मुसलमान बनाने के लिए मुख्यतः तीन रास्ते अपनाये। पहला था हिंसा। जैसा कि सर इकबाल ने लिखा है—इस्लाम "खंजर के साए में" पला और बढ़ा। सारे संसार की तरह हिन्दुस्तान का इतिहास भी मजहब के नामपर हिंसा और बलात् धर्म-परिवर्तन के उदाहरणों से भरा हुआ है। दूसरा रास्ता था राज सत्ता का दबाव और दुरुपयोग। औरंगजेब के समय के अनेक फरमान और फैसले मिलते हैं जिन में दो पक्षों के बीच उस पक्ष के समर्थन में फैसला किया गया जिसने मुसलमान होना स्वीकार कर लिया। 'बशर्ते बगोयद इस्लाम' इस शर्त पर कि वह मुसलमान बन जाये—यह वाक्य औरंजेब के समय के कानूनों-फैसलों का अभिन्न अंग सा बन गया था। तीसरा रास्ता था लालच और दबाव का।

इसके अतिरिक्त कुछ लोग हिन्दू समाज के ठेकेदारों की मूर्खता के कारण भी मुसलमान बने। यदि कोई हिन्दू किसी मुसलमान स्त्री से विवाह कर लेता था या मुसलमानों के साथ खा पी लेता था तो उसको बिरादरी से निकाल दिया जाता था। इस कारण भी कुछ लोग मुसलमान बने।

अलगाव की भावना

जब तक इस प्रकार बल या लालच से बनाये गए मुसलमानों को इस्लाम के बुनियादी सिद्धान्तों का ज्ञान नहीं था, तब तक वे मुसलमान बनने के बावजूद शेष समाज से कटे नहीं। परन्तु जब पान-इस्लामाबाद की लहर चली और हिन्दुस्तान में मुस्लिम लीग, खिलाफत आन्दोलन और जमाते इस्लामी ने अपना प्रचार बढ़ाया और आम मुसलमानों तक इसलामी सिद्धान्तों का ज्ञान पहुंचा, तब भारतीय मुसलमानों में भी, जिन्हें तब तक संसार के अन्य देशों के लोग हिन्दू ही कहते थे, अलगाव की भावना पैदा हुई। उन्होंने भारतीय हिन्दू राष्ट्र से अलग अपने आपको इस्लामी राष्ट्र का अंग कहना शुरू किया। ब्रिटिश सरकार ने "फूट डालो और राज करो" की नीति के अनुसार इस भावना को बढ़ावा दिया और उससे राजनैतिक लाभ उठाने का सफल प्रयत्न किया।

फलस्वरूप भारत के जनमें हिन्दू पूर्वजों की औलाद ने मुसलमान बन जाने के कारण अलग मुस्लिम राष्ट्र की और मातृ भूमि का बंटवारा करके पाकिस्तान की मांग उठाई और उसमें सफलता पाई। १९४७ के इस घटनाचक्र ने यह पूरी तरह सिद्ध कर दिया कि जो मुसलमान बन जाता है वह अपनी राष्ट्रीयता और आस्था भी बदल लेता है।

आस्था बदली, तो राष्ट्रीयता बदली

ईसाईयत के प्रचार का भी बहुत कुछ यही आधार और परिणाम रहा। अन्तर इतना है कि भारत में ईसाइयत के प्रचार के लिए तलवार का आसरा केवल पुर्तगालियों ने लिया। अंग्रेजों ने दूसरे उपायों का ही अनुसरण किया। संख्या में कम होने और चिन्तन के आधुनिकीकरण के कारण ईसाइयों ने मुसलमानों की तरह अलग राष्ट्रीयता की बात नहीं कही। परन्तु नागालैंड और मिजोरम जैसे क्षेत्रों में जहां उनकी जनसंख्या बढ़ गई है, उन्होंने अलग राष्ट्र होने की बात कहनी शुरू कर दी है। इन तथ्यों और अनुभवों से यह स्पष्ट हो गया है कि भारतीय उद्गम के किसी भी पंथ के अनुयायी का मुसलमान या ईसाई बनना केवल व्यक्तिगत या मजहवी मामला नहीं है। इसका प्रभाव उसकी राष्ट्रीयता और आस्थाओं पर भी पड़ता है। वह भारतीय हिन्दू राष्ट्र से अपने आपको अलग ही नहीं, अपितु उस का शत्रु मानने लगता है और बाहर के इस्लामी अथवा ईसाई राज्यों का खेल खेलना शुरू कर देता है। इस प्रकार सेमेटिक मजहवों में प्रवेश के ऐसे राजनैतिक परिणाम निकलते हैं जो देश की एकता, सुरक्षा और अस्तित्व के लिए संकट पैदा कर देते हैं। धर्म परिवर्तन का यह राजनैतिक पहलू अधिक भयानक है।

संसार के किसी भी इस्लामी राज्य में गैर मुसलमानों के साथ बरावरी का व्यवहार नहीं होता। उन का या तो समूल नाश कर दिया जाता है, जैसा कि पाकिस्तान में हुआ है, या उन्हें दूसरे दर्जे से भी घटिया नागरिक समझा जाता है। मलयेशिया में मसलमान केवल ५१ प्रतिशत हैं, पर वहां गैर मुसलमानों की यही स्थिति है।

सेकुलरिज्म, सर्वधर्म समभाव और मजहवी आजादी का किसी मुस्लिम-बहुल देश में न कोई स्थान है, न रह सकता है। इसलिये यदि हिन्दुस्तान भी मुस्लिम बहुल देश बन गया तो इसमें भी सर्वधर्म पंथ समभाव, सहिष्णुता और मजहवी आजादी का अंत हो जायेगा और यहां के भारतीय उद्गम के पंथों को मानने वाले सभी हिन्दुओं की वही दशा होगी जो पाकिस्तान या बंगला देश में हुई या हो रही है।

इसलिये यह आवश्यक है कि हिन्दुस्तान की सरकार और राष्ट्रवादी जनता हिन्दुस्तान में पिछडे और गरीब हिन्दुओं को धन के लालच से मुसलमान और ईसाई बनाने के अभियान के इस राजनैतिक पहलू पर ध्यान दे। भारत से संविधान में दी गई मजहवी स्वतन्त्रता के नाम पर उसके भयानक

परिणामों से आंख मीचना आत्मघात और राष्ट्रघात होगा।

किसी मजहब अथवा पंथ के लोगों का जो "सर्वधर्म-पंथ-समभाव" और मजहबी स्वतन्त्रता में विश्वास नहीं रखते, भारतीय पंथों के अनुयायियों के द्वारा संविधान में दी गई मजहबी स्वतन्त्रता का लाभ उठा कर यहां ऐसे हालात—जिनमें सर्वधर्म पंथ समभाव और मजहबी स्वतन्त्रता का कोई अस्तित्व ही न रहे, पैदा करने की इजाजत देना हर दृष्टि से गलत और अक्षम्य है।

सांस्कृतिक और राजनैतिक पग

इसलिये यह आवश्यक है कि इसको रोकने के लिये तुरन्त प्रभावी पग उठाये जायें। वे पग दो प्रकार के हो सकते हैं...............

१. सांस्कृतिक व सामाजिक

२. राजनैतिक

सांस्कृतिक और सामाजिक पगों का उद्देश्य सभी लोगों का भारतीयकरण करना और समाज की उन कुरीतियों का, जिनके कारण पिछड़े लोग सेमेटिक पंथों के चक्र में पड़ सकते हैं, उन्मूलन करना होना चाहिये। यह काम मुख्यत: सामाजिक और सांस्कृतिक संगठनों को करना होगा। इस दिशा में आर्य समाज, सनातन धर्म सभा, जैन सभा, सिंह सभा, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, विश्व हिन्दु परिषद् जैसे संगठनों को मिलकर काम करना चाहिये। यह प्रसन्नता का विषय है कि इस दिशा में कुछ काम शुरू हो गया है। इस काम को राजनीति से अलग रखना चाहिये।

राजनीतिक पगों में दो पग आत्यावश्यक हैं। पहला हिन्दुस्तान को हिन्दू राज्य घोषित करना और दूसरा भारतीय राज्य के पंथों को सेमेटिक पंथों में प्रवेश पर कानूनी रोक लगाना।

हिन्दुस्तान हिन्दू राष्ट्र है, यह निर्विवाद सत्य है। यदि कोई विवाद था भी तो वह दो राष्ट्र के सिद्धान्त पर भारत का विभाजन स्वीकार करने वालों ने समाप्त कर दिया है।

हिन्दू राष्ट्र में हिन्दू राज्य होना चाहिये। हिन्दू राज्य इस्लामी राज्यों की तरह न कभी मजहबी राज्य हुआ है, और न हो सकता है।

इसका पहला कारण यह है कि हिन्दू इस्लाम की तरह कोई मजबह

नहीं, यह बौद्ध, जैन, सिख इत्यादि सभी भारतीय पंथों के लोगों का संघ और राष्ट्रीय नाम है। इसलिये हिन्दू राज्य सभी सच्चे और देश भक्त भारतीयों का साझा राज्य होगा।

हिन्दू राज्य घोषित होते ही सेमेटिक पंथों के अनुयायियों द्वारा, विशेष रूप में मुस्लमानों द्वारा, किये जाने वाले साम्प्रदायिक दंगे समाप्त हो जायेंगे। वे हिन्दुस्तान और इसकी संस्कृति को अपनाना सीखेंगे।

हिन्दू राज्य की विशेषता

हिन्दू राज्य में मुस्लमान और ईसाई अल्पमतों के साथ भी वरावरी का व्यवहार होगा क्योंकि हिन्दू राज्य सर्वधर्म-पंथ-समभाव से प्रतिवद्ध होगा।

हिन्दुस्तान में कोई सिख, वोद्ध, जैन या वैष्णव वने, इसकी पूरी छूट रही है और रहेगी। परन्तु मुसलमान या ईसाई वनने की छूट नहीं दी जा सकती, क्योंकि इसके परिणाम राजनैतिक दृष्टि से देश के लिये घातक हैं। इसलिये इस प्रकार मजहव के परिवर्तन पर कानूनी रोक लगाना न केवल तर्क संगत है, अपितु राष्ट्र-रक्षा के लिये आवश्यक भी है। इसके विरोध में संविधान या सेकुलरिज्म की दुहाई देना गलत है। संविधान राष्ट्र के लिये है, न कि राष्ट्र संविधान के लिये। इसके लिये यदि संविधान का एक और संशोधन भी करना पड़े, तो करना चाहिये। पर वास्तव में इसकी आवश्यकता नहीं। संविधान द्वारा प्रदत्त मजहवी स्वतन्त्रता उन्हीं के लिये है जो इसमें आस्था रखते हैं। इस्लाम मजहवी स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को नहीं मानता, इसलिये उसे इस स्वतन्त्रता का अनुचित लाभ उठाने की अनुमति देना संविधान की आत्मा के विरुद्ध है।

सेकुलरिज्म—सर्वधर्म समभाव

जहां तक "सेकुलरिज्म" का सम्वन्ध है, यह एक नकारात्मक कल्पना है। यह 'थियोक्रेसी' अथवा मजहबी राज्य की कल्पना का प्रतिवाद है। इसलिये भारतीय हिन्दू राज्य में सेकुलरिज्म की रट लगाना भारत की जनता और संस्कृति का अपमान करना है। 'सेकुलरिज्म' वास्तव में मजहब और परमात्मा के अस्तित्व को नकारने का दूसरा नाम है। यह भारत की परम्परा के सवर्था विपरीत है। हमारी परम्परा "सर्वधर्म समभाव" की रही है। परन्तु यह सिद्धान्त उन्हीं पर लागू हो सकता है जो इस पर आस्था रखते हैं। देश की एकता, सुरक्षा और अस्तित्व पहले आते हैं। यदि सेकुल-

रिज्म और सुरक्षा की आवश्यकताओं में टक्कर हो, तो सुरक्षा पहले आती है।

आज हिन्दूस्तान की सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि यहां सेकुलरिज्म के सबसे बड़े ठेकेदार वे कठमुल्ला और जनूनी लोग बन गये हैं जो वास्तव में न कभी सेकुलर थे, और न हो सकते हैं। जिनका व्यवहार और कार्यकलाप सर्वधर्म समभाव से सर्वथा उल्टा है, उनके विरोध को किसी प्रकार का महत्व देना अनुचित है।

देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि आज यहां ऐसा कोई राष्ट्रीय राजनैतिक दल या मंच नहीं जो हिन्दू राष्ट्र या हिन्दू राज्य के सही स्वरूप को ढंग से प्रस्तुत कर सके। वोटों के लालच में सभी राजनैतिक दल अपनी आत्मा को राष्ट्र विरोधी तत्वों के पास गिरवी रखे हुए हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि विभिन्न दलों में बंटे हुए राष्ट्रवादी तत्व मिलकर देश में एक नया राष्ट्रवादी मंच तैयार करें। ●



आशा का दीपक

'दिनकर'–

वह प्रदीप जो दीख रहा है झिलमिल दूर नहीं है,
थक कर बैठ गये क्या भाई ! मंजिल दूर नहीं है।

चिनगारी वन गयी लहू की वूंद गिरी जो पग से;
चमक रहे, पीछे मुड़ देखो, चरण-चिन्ह जगमग ते।
शुरू हुई आराध्य-भूमि यह क्लान्ति नहीं रे राही;
और नहीं तो पांव लगे हैं; क्यों पड़ने डगमग से ?
वाकी होश तभी तक, जब तक जलता तूर नहीं है;
थक कर बैठ गये क्या भाई ! मंजिल दूर नहीं है।

अपनी हड्डी की मशाल से, हृदय चीरते तम का,
सारी रात चले तुम दुःख झेलते कुलिश निर्मम का !
एक खेप है शेष, किसी विध पार उसे कर आओ;
वह देखो उस पार चमकता है मन्दिर प्रियतम का।
आकर इतना पास फिरे, वह सच्चा शूर नहीं है;
थक कर बैठ गये क्या भाई !, मंजिल दूर नहीं है !

दिशा दीप्त हो उठी प्राप्त कर पुण्य-प्रकाश तुम्हारा;
लिखा जा चुका अनल-अक्षरों में इतिहास तुम्हारा !
जिस मिट्टी ने लहू पिया, वह फूल खिलायेगी ही;
अम्वर पर घन वन छायेगा ही उच्छ्वास तुम्हारा।
और अधिक ले जांच, देवता इतना क्रूर नहीं है !
थक कर बैठ गये क्या भाई ! मंजिल दूर नहीं है !

—'सामधेनी' से

हिन्दुओं को अल्पसंख्यक बनाने का षड्यंत्र



—श्री ओम्प्रकाश त्यागी—

१९३८ से समाज सेवा में संलग्न। छात्र-जीवन में ही कारावास। बंगाल के दुर्भिक्ष में और नोआखाली के उपद्रवों में आर्यवीर दल के संचालक की हैसियत से सहायता। संसत्सदस्य के रूप में धर्मस्वतंत्र्य विधेयक के प्रस्तुतकर्ता। सम्प्रति सार्वदेशिक सभा के महामंत्री और राजनीति से संन्यास की घोषणा।

भारत में विदेशी धन की सहायता से शिक्षा व सेवा की आड़ में निर्धन जनता को लोभ-लालच व भय के वल पर सामूहिक धर्म-परिवर्तन हो रहा है। इसका एक पहलू तो स्पष्ट ही है कि इससे भारत का वर्तमान धार्मिक व सांस्कृतिक ढांचा प्रभावित होगा, परन्तु धर्म निरपेक्ष सरकार के लिए यह कोई विशेष चिन्ता का विषय नहीं है। यह पहलू, केवल धार्मिक नेताओं अथवा मठाधीशों का ही सिरदर्द है।

प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान सामूहिक धर्म परिवर्तन का कोई राजनीतिक पहलू भी है जो देश के राजनीतिक ढांचे को प्रभावित कर सके? इस प्रश्न का संक्षेप में उत्तर यही है कि 'जो व्यक्ति संसार के इतिहास से लेशमात्र भी परिचित है वह बड़ी सरलता से समझ सकता है कि सामूहिक धर्म-परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का एक अंग है और एक विशेष राजनीतिक ध्येय की पूर्ति के लिए किया जा रहा है। इस सर्वविदित तथ्य को जो व्यक्ति नहीं समझता उसे राजनीति अथवा सरकार में रहने का कोई अधिकार नहीं।

धर्म वास्तव में मन-मस्तिष्क से संबंधित अनुभूतियों का नाम है जो व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति कर उसे इस लोक और परलोक में सुख-शांति व परमानन्द प्राप्त कराता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपना धर्म चुनने का अधिकार है और होना भी चाहिए। जिस देश में व्यक्ति को अपना धर्म चुनने का अधिकार नहीं है वह देश सभ्य

देशों की कोटि में न होकर जंगली देशों की कोटि में होते हैं। जैसे संसार के सम्पूर्ण मुस्लिम देशों और मुख्यतः अरव देशों में व्यक्ति को इस्लाम धर्म के अतिरिक्त अन्य धर्म को स्वीकार करने का अधिकार नहीं। अन्य धर्मावलम्बियों को वहां दूसरे दर्जे का नागरिक माना जाता है।

संसार में जब तक वैदिक धर्म प्रवल था या इससे सम्वन्धित धर्म प्रभावी रहे, तव तक व्यक्ति को अपना धर्म चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। अर्थात् विचार-स्वातन्त्र्य था। परन्तु जब से संसार में सेमेटिक धर्मों अर्थात् ईसाईयत व इस्लाम का उदय हुआ तव से धर्म एक स्वतन्त्र वस्तु न रहकर राजनीति का प्रधान अंग बन गया। या यों कहिए कि इन धर्मों ने राजनीति अथवा शासन को अपने प्रचार का एक प्रमुख साधन बना लिया।

सेमेटिक धर्मों का इतिहास

संसार का इतिहास साक्षी है कि सेमेटिक धर्मों ने संसार में किस प्रकार तलवार तथा लोभ-लालच के वल पर अपने धर्म का विस्तार किया। इनकी तलवारों से तथा छल कपट से भरे उपायों से इतिहास के पन्ने रंगे पड़े हैं, और धर्म नाम की वस्तु को कलंकित कर दिया गया है। मजहबों के काले कारनामों से संसार के महान क्रांतिकारी कार्ल मार्क्स के हृदय में धर्म से घृणा हो गई और उन्होंने धर्म को अफीम की संज्ञा देते हुए कहा — इसे खाकर समाज पागल हो जाता है।

आज इन्हीं सेमेटिक धर्मों अर्थात् ईसाईयत तथा इस्लाम आदि के अनुयायियों द्वारा भारत में विदेशी धन के वल पर गरीव हिन्दुओं का सामूहिक धर्म परिवर्तन किया जा रहा है। इनको धन भेजने वाले अमरीका और अरव देश इन्हीं धर्मों के अनुयायी हैं। इन धर्म परिवर्तनों के पीछे राजनीतिक उद्देश्य न हो, यह संभव नहीं है। अपितु यह कहा जा सकता है कि इन धर्म परिवर्तनों के पीछे राजनीति ही है। यदि इस बात को देशभक्त जनता व सरकार न समझे तो इसे देश का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त मूर्ख व्यक्ति भी समझ सकता है कि अमरीका और अरव देश यदि अपनी अपार धन-राशि भारत में शिक्षा व सेवा के नाम पर भेज रहे हैं तो इन देशों के हृदयों में भारत के लिए अचानक इतना प्रेम क्यों उमड़ आया कि वे पानी की तरह अपना धन बहा रहे हैं।

राजनीतिक पहलू

सैमेटिक धर्मों के इतिहास से अपरिचित लोगों के विचारार्थ इन

सामूहिक धर्म परिवर्तनों के कुछ राजनीतिक पहलू दिए जा रहे हैं जो इस प्रकार हैं—

१—विदेशी ईसाई मिशनों द्वारा भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में किये जा रहे सामूहिक धर्म परिवर्तनों के पीछे कौन सी राजनीति छिपी है, यह इस राजनीतिक षड्यन्त्र के आविष्कारक श्री विलियम फ्रेंक ग्राह्म के शब्दों में वतलाना ठीक होगा। उन्होंने फरवरी सन् १९५३ में अमरीका के ब्राड-कास्टिंग स्टेशन से 'निर्णय की घड़ी' नामक प्रोग्राम में वोलते हुए कहा था—"अमेरिका के लोगो ! यदि संसार में कम्युनिज्म का सामना करना चाहते हो तो तुम्हें इसका मुकावला सवसे पहले भारत में करना होगा क्योंकि अमरीकी और रूसी ब्लाक के मध्य भारत के हाथ में ही सन्तुलन शक्ति है। इसके लिए भारत में पादरियों की एक सेना भेजनी होगी जिसका नारा होना चाहिए कि भारत में बूढ़ा हिन्दू धर्म समाप्त हो और उसकी लाश पर ईसाई धर्म का झण्डा लहराये ताकि अपने चर्चों के द्वारा अमरीका भारत के राजनीतिक ढांचे पर अपना नियन्त्रण कर सके।"

उक्त योजना के अनुसार विदेशी ईसाई मिशनरी अपार धन राशि लेकर भारत में आये, देखते-देखते भारत के समस्त पर्वतीय क्षेत्रों में फैल गए। नागालैंड, मिजोरम, मेघालय, छोटा नागपुर, केरल आदि क्षेत्रों पर उनका अधिकार हो चुका है। मिजोरम व नागालैंड में चल रहे विद्रोह भी उसी योजना का अंग हैं।

मोरक्को से इण्डोनेशिया तक

२—अमरीकी षड्यन्त्र से प्रभावित होकर अरव देशों ने भी एक षड्यन्त्र की रचना सन् १९७३ में पान इस्लामिक लीग के रूप में की जिसका लक्ष्य मोरक्को से लगाकर इन्डोनेशिया तक के समस्त देशों को इस्लाम के झण्डे के नीचे लाना है। उसी योजनानुसार इस्लामिक कल्चरल सैण्टर लन्दन ने अपने डायरेक्टर श्री वदवई को भारत में गुप्तरूप से सर्वे करने भेजा। उसकी रिपोर्ट कुवैत देश से प्रकाशित 'अरव टाइम्स' समाचार पत्र में प्रकाशित हुई जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सैंटर के लिए भारत में अपनी योजनाओं की पूर्ति के निमित्त ऐसा सुनहरी अवसर फिर प्राप्त नहीं होगा। इस समय यदि प्रयत्न किया जाय तो भारत के समस्त हरिजनों को मुसलमान बनाकर यहां मुसलमानों की संख्या तुरन्त बीस करोड़ वनाई जा सकती है। इसी योजना के अन्तर्गत भारत में हरिजनों का सामूहिक धर्म परिवर्तन किया जा रहा है।

३—संयुक्त राष्ट्र संघ के एक जनगणना विशेषज्ञ की रिपोर्ट के अनुसार सन् २००० में भारत की कुल जनसंख्या साधारण गति से ६० करोड़ हो जायगी जिसमें हिन्दुओं की संख्या ४० करोड़ और मुसलमानों की ३५ करोड़ और ईसाइयों की १५ करोड़ होगी। ये आंकड़े देते हुए उसकी दृष्टि में हरिजनों का सामूहिक धर्म परिवर्तन नहीं था। क्योंकि तव तक यह प्रयास प्रारम्भ नहीं हुआ था। ३५ करोड़ मुसलमान और १५ करोड़ ईसाई मिलकर ५० करोड़ गैर-हिन्दू हो जाएंगे। इसका अर्थ है कि सन् २००० से पहले ही भारत में हिन्दू जाति अल्प संख्यक वन जायगी।

भारत में हिन्दू जाति के अल्पसंख्यक वनते ही यहां से जनतन्त्र तथा धर्म-निरपेक्षता सदैव के लिए कूच कर जायेंगे और यहां का शासन ईरान, पाकिस्तान, बंगलादेश, मलेशिया आदि मुस्लिम देशों की भांति होगा। मुसलमानों के अतिरिक्त यहां अन्य सभी धर्मावलम्वी दूसरे दर्जे के नागरिक वन जायेंगे।

हिन्दुओं के अल्पसंख्यक होने का परिणाम

४. सामूहिक धर्म परिवर्तनों का उपरिलिखित परिणाम होने से पूर्व भारत में साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न हुए विना रह नहीं सकता। इसके उत्पन्न होते ही साम्प्रदायिक दंगों को प्रोत्साहन मिलेगा और परिणामस्वरूप देश का राजनीतिक ढांचा लड़खड़ा जायगा। तव देश की एकता, सुरक्षा और प्रगति तुरन्त खतरे में पड़ने की आशंका है।

"भारत की एकता के भंग होते ही पाकिस्तान भारत पर आक्रमण करेगा और भारत में विद्यमान उसके करोड़ों समर्थक देश की पीठ में छुरा मारकर पाकिस्तान को विजयी वनाने का प्रयत्न करेंगे। जव भारत की हाकी टीम और क्रिकेट टीम के हारने पर भारत में मिठाई वांटी जा सकती है तथा श्री संजय गांधी के मरने पर दीवाली मनाई जा सकती है, तो फिर ऐसा होना स्वाभाविक ही है।

५. ज्यों-ज्यों भारत में मुसलमानों की संख्या बढ़ती जायगी त्यों-त्यों चुनावों में संतुलन शक्ति उनके हाथ में आती जायगी। परिणाम स्वरूप कुर्सी के भूखे राजनीतिज्ञ एवं राजनीतिक पार्टियां उनकी अंगुलियों पर नाचने लगेंगे और तुष्टीकरण की नीति राजनीति का अभिन्न अंग वन जायगी। तव कोई भी सरकार राष्ट्र के समस्त धार्मिक' वर्गों के अधिकारों की समान रूप से सुरक्षा नहीं कर सकेगी।

अतः देशहित में यही है कि सरकार लोभ-लालच व भय के वल पर हो रहे धर्म परिवर्तनों पर प्रतिवन्ध लगावे और विदेशी षड्यन्त्रों का कड़ाई से दमन करें। ●

एक मक्का केरल में भी

पोन्नानी केरल राज्य के मल्लापुरम् जिले में मुसलमानों का सांस्कृतिक और मजहवी केन्द्र है। लोग इस्लाम ग्रहण करने के लिए यहां आते हैं। आगन्तुकों के साथ सम्मानित अतिथियों का सा वरताव किया जाता है। उनके आतिथ्य सत्कार का भार मौनतुल इस्लाम असोसिएशन नामक संस्था पर रहता है। देश में इस्लाम का प्रचार करने वाला यह एकमात्र संगठन है। यह नये धर्मान्तरितों के निवास और शिक्षा के लिए सव प्रकार की सुविधाएं जुटाता है। यहां इस्लाम की शिक्षा के लिए निर्धारित न्यूनतम समय दो मास है।

असोशिएशन के एक प्रवक्ता के अनुसार इस्लाम ग्रहण करने के लिए अव तक हजारों लोग यहां आ चुके हैं। इनमें डाक्टर, सुशिक्षित व्यक्ति और विदेशी सम्मिलित हैं। इस असोशियेशन की स्थापना ८१ वर्ष पूर्व की गई थी और इसने भारत में इस्लाम के प्रचार में विशिष्ट और गौरव पूर्ण रोल अदा किया है।

पोन्नानी का नाम 'छोटा मक्का' केवल इसलिए पड़ा कि यहां वह संस्था स्थित है, जो अमन्द उत्साह के साथ वही काम कर रही है, जो चौदह सौ वर्ष पूर्व मक्का में प्रारम्भ किया गया था। यदि मक्का इस्लाम की माता है तो पोन्नानी उपमाता है।

पिछले ८१ वर्ष में इस संस्था ने एक लाख से अधिक लोगों को मुसलमान वनाया है। असोसियेशन मुफ्त भोजन, निवास, वस्त्रों और चिकित्सा पर प्रतिदिन अढ़ाई हजार रुपए से अधिक व्यय करती है। धर्मान्तरित व्यक्ति वापस घर जाते हैं, तव उन्हें मार्ग व्यय भी दिया जाता है।

असोसियेशन की जायदाद से जो आय होती है, उससे केवल २५ प्रतिशत व्यय पूरा होता है। शेष राशि दान से मिलती है—विशेषतः खाड़ी देशों से। असोसियेशन एक अनाथालय, एक अरबी कालेज, एक हाई स्कूल, एक मदरसा और एक उच्चतर प्रारम्भिक स्कूल चलाती है। असोसियेशन का विचार एक इण्डस्ट्रियल ट्रेनिंग इंस्टीच्यूट और एक नर्सिंग होम चलाने का भी है।

जब इस्लाम ने इस देश में अपने पैर जमाये, उससे बहुत पहले अरबों ने केरल के तट के साथ व्यापार करना आरम्भ कर दिया था। कालीकट के जमोरिन ने जब अरबों को आयात-निर्यात का एकाधिकार दिया, तब अपने मजहब का प्रचार करने की पूर्ण स्वतन्त्रता भी दे दी। अरबों के स्थानीय औरतों के साथ जो विवाह हुए, मोपलों का जन्म उन्हीं से हुआ। ○

—'इंडियन एक्सप्रेस' २६ अगस्त

मतान्तर नहीं, समाजान्तर

इस्लाम तथा ईसाई धर्म सिर्फ मतान्तर नहीं कराते, बल्कि समाजान्तर भी करवाते हैं। कोई जैन वैष्णव बनकर गले में कण्ठी पहने तथा कृष्णमन्दिर में जाये और भगवद्गीता पढ़े, या वैष्णव जैन बनकर कंठी तोड़े, अपासरे (जैन साधुओं के निवास-स्थान) में जाये और जैन पुराण सुने, तब भी उसके सामाजिक और घरेलू धर्म-कर्म तथा स्थान, वंश-विरासत के अधिकार में फेरफार नहीं होता। उसका नाम-ठाम नहीं बदलता। मगर मुसलमान होते ही यह सब बदल जाता है। तब उसकी पत्नी पत्नी नहीं रह जाती, पति पति नहीं रहता। उसके सम्मिलित कुटुम्ब के, विरासत के तथा मिल्कियत के अधिकार में फर्क पड़ जाता है। इस तरह मतान्तर के साथ समाजान्तर होने से प्रजा में समाज-भेद का निर्माण होता है, हुआ है, और समाज की एकता भंग होने का नतीजा दो प्रजाओं—दो नेशन्स—का वाद और उसके फल हैं।

—श्री किशोरलाल ध० मश्रूवाला
(१० अक्टूबर, १९४९, 'हरिजन सेवक)

यह कैसी धर्मनिरपेक्षता !

—सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'—

क्या धर्म निरपेक्षता के भी दर्जे हैं ? काले धन से शासित समाज में हम 'एक नम्बर' और 'दो नम्बर' की आय या पूंजी की बातों के आदी हो गए हैं—तो क्या धर्मनिरपेक्षता भी एक काला धन है और वहां भी 'एक नम्बर' और 'दो नम्बर' की धर्म निरपेक्षता चलती है ?

इस्लाम और ईसाइयत और यहूदियत से हिन्दू धर्म इस बात में भिन्न है कि उसकी इमारत किसी मत-विश्वास या एकान्तवादी मान्यता पर नहीं बनाई गई है, बल्कि सृष्टिमात्र के साथ सम्बन्ध पर आधारित है। यही हिन्दू धर्म की अद्वितीयता है, लेकिन यही उसकी ऐतिहासिक और आज कहें तो राजनीतिक कठिनाइयों का आधार भी है। दूसरे धर्म-मत सबसे पहले अपने आस-पास एक बाड़ा बनाते हैं। जो उसके भीतर हैं वे 'अपने' हैं और बाकी सब 'गैर' हैं, और कभी-कभी शत्रु भी माने जाते हैं। लेकिन हिन्दू जीवन दृष्टि ऐसे बाड़े नहीं बनाती और किसी को गैर नहीं मानती। उसके लिए धर्म वह है, जो सारे संसार को चलाता है—अलग-अलग समाजों के अलग-अलग धर्म विश्वासों के बावजूद। हां, यह बात फिर से कहूं कि हिन्दू जीवन-दृष्टि बाड़े नहीं बनाती। मत-विश्वासों के आधार पर बाड़े नहीं बनाती—इसके बावजूद कि उसके अपने समाज के भीतर अनेक विभाजन हैं, जिनमें से कुछ अत्यन्त क्रूर ढंग के भी हैं।

राजनीतिक धर्मनिरपेक्षता

निस्संदेह ये भीतरी विभाजन क्रूर अमानुषी और आत्मघाती हैं और इन्हें जल्दी से जल्दी मिटाना चाहिए। लेकिन आज के हिन्दू-समाज में उनका चलन होने पर भी ये ही हिन्दू समाज नहीं है और न हमारी धार्मिकता इन पर निर्भर करती है, न हमारी धर्मनिरपेक्षता। हम हिन्दू-समाज के कट्टर से कट्टर वर्ग का अंग होते हुए भी उस घटिया, नृशंस से नृशंस लोक-व्यवहारों को

मानते हुए भी आज के प्रचलित अर्थ में धर्मनिरपेक्ष हो सकते हैं। दूसरी ओर उन सब आचार-नियमों को अमानुषिक मान कर उन्हें तोड़ते हु भी धर्मवान् हो सकते हैं। बल्कि हम देख भी सकते हैं कि आज के भारती समाज में ये सारे अमानुषी रीति-रिवाज उस वर्ग में भी उतने ही प्रचलि हैं जो राजनीतिक दलगत आधार पर अपनी धर्मनिरपेक्षता की दुहा देता है।

हिन्दू राष्ट्र

चर्चा करने पर यह लगता है कि ये सब बातें नई नहीं हैं। सच नई नहीं हैं, लेकिन सामाजिक राजनीतिक परिवेशों में अक्सर ऐसा होता है कि कुछ बातें सिर्फ इसलिए नई हो जाती हैं कि किसी ने उन्हें दिया है। मुझे ऐसा अनुभव होता है कि ऐसी ही बातों में—जो आज देने भर से नई हो जाती हैं—एक बात यह भी है कि भारत संसार सबसे बड़ा हिन्द राष्ट्र है।

इस बात को मैं साम्प्रदायिक नहीं मानता, बल्कि मैं कहना चाह हूं कि इस देश और राष्ट्र में धर्मनिरपेक्षता की अर्थवत्ता ही इस पर नि करती है कि यह देश इस तथ्य से निकलने वाली अपनी जिम्मेदारी पहचाने और स्वीकार करे। और वह जिम्मेदारी सिर्फ आज की रा नीतिक अवसरवादिता पर आधारित नहीं हैं, बल्कि एक अद्वितीय ऐ हासिक परम्परा का प्रतिफलन है। इस बात को पहचान कर देश अ धर्म निरपेक्षता को फिर उसके सही स्थान पर प्रतिष्ठित करे, 'दो नम की धर्मनिरपेक्षता से सन्तुष्ट न रह कर उस 'एक नम्बर' की धर्मनिरपे पर कायम हो, जो स्वयं भारतीय धर्म दृष्टि के ही प्रमाण पर टिकी है

(साप्ताहिक हिन्दुस्तान, वर्ष ३०, अंक ३० से साभ



हृदय-मन्दिर की शंखध्वनि

—वेद भिक्षुः —

हम अर्थात् सभी भारत वासी, जो इस देश की धरती का वन्दन करते हैं, मां को, भारत मां को, पूज्य, वन्दनीय और पावन समझ वन्दे मातरम् गाते हैं, गंगा-यमुना सरस्वती और वेद—गौ—गंगा-गायत्री के प्रति जिनकी निष्ठा है, जो संमवेत स्वर में द्वारिका से निकोवार तक की सारी धरती पर फहराते राष्ट्रध्वज के प्रति समर्पित है, वे सभी हिन्दू हैं।

रामकृष्ण की गाथाएं सुन जिन का मस्तक गौरव से तन जाता है, प्रताप-शिवा का शौर्य वर्णन जिन्हें नवजीवन देता है, दर्शन—अध्यात्म—ज्ञान-चिन्तन जिनके मानस में अमृत वरसाता है, जो भारत की मिट्टी के प्रत्येक कण पर हजार कोहेनूर न्योछावर कर सकते हैं, वे सव हिन्दू हैं।

मां की वन्दना में जो शीश कटा सकते हैं, उसकी अर्चना में सर्वस्व समर्पित कर सकते हैं, जो हिमगिर के मुकुट पर त्रैलोक्य का साम्राज्य भी न्योछावर कर सकते हैं, वे सब हिन्दू हैं।

ऐसे सभी राष्ट्र भक्तों को हम हिन्दू कह अपने को धन्य मानते हैं। जो हिन्दू है, वह राष्ट्र भक्त है। जो राष्ट्र भक्त है, वह हिन्दू है। हिन्दू शब्द अब न जातिवाजक है न किसी मत का प्रतीक है। वह भारतीयता का प्रतीक है। वह ध्वज है उस पावन संदेश का, जिस के पीछे मातृभूमि के प्रति सिर कटाने की भावना है।

जो हिन्दू नहीं, वह देश भक्त भी नहीं। मत-परिवर्तन होते ही राष्ट्र-भक्ति में परिवर्तन आ जाता है। इसलिए हम भारत में किसी भी देश-भक्त को देशद्रोही बनकर नहीं बढ़ने देंगे। विदेशी शक्तियां भारत की सत्ता को कमजोर करने पर तुली हैं, किन्तु भारत के देशभक्त उनके कुत्सित प्रयत्न को कभी सफल नहीं होने देंगे।

मेरी धरती की पावन माटी को कलुषित करने के लिए हिन्दू को हिन्दू का शत्रु बनाने का प्रयत्न सफल हो गया तो क्या हम सबके लिए

वह कलंक नहीं होगा ? क्या भौतिक साधनों से ईमान खरीदा जाएगा ? क्या भारत मां का सपूत चांदी के टुकड़ों पर विक जाएगा ? क्या देश की धरती के बेटे विदेशियों की गर्हित चालों से देश-विद्रोही वन अपनी मां को मृत्यु की मांद में धकेलेंगे ?

हम हिन्दू हैं—यह राष्ट्रीय स्वर है। हिन्दू सम्प्रदाय विशेष नहीं हिन्दुत्व राष्ट्र को पवित्र करने वाली गंगाधारा है। यह वह स्वर है जो बेटा मां को पुकारते हुए कहता है, मां ...... मां......... मां। जो मां को मां कहते हैं, वह हिन्दू है। आओ, हम उस की वन्दना करें—हम उसकी अर्चना करें।

दूर तक यादे-वतन आई थी समझाने को

—विस्मिल—

हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रह कर
हम को भी पाला था मां-वाप ने दुःख सह-सहकर
वक्ते-रुख्सत उन्हें इतना भी न आए कहकर
गोद में आंसू कभी टपके जो रुख से बहकर
तिफ्ल उनको ही समझ लेना जी वहलाने को

देश-सेवा ही का वहता है लहू नस-नस में
अव तो खा बैठे हैं चित्तौड़ के गढ़ की कसमें
सरफरोशी की अदा होती हैं यूं ही रस्में
भाई खंजर से गले मिलते हैं सव आपस में
वहनें तैयार चिताओं पे हैं जल जाने को

नौजवानो, जो तबीयत में तुम्हारी खटके
याद कर लेना कभी हमको भी भूले-भटके
आप के अजवे-वदन होवें जुदा कट-कट के
और सद चाक हो माता का कलेजा फटके
पर न माथे पर शिकन आए कसम खाने को

अपनी किस्मत में अजल ही से सितम रक्खा था
रंज रक्खा था, मिठन रक्खा था, गम रक्खा था
किसको परवाह थी और किसमें यह दम रक्खा था
हमने जब वादि-ए-गुरबत में कदम रक्खा था
दूर तक यादे-वतन आई थी समझाने को
अपना कुछ गम नहीं है, पर यह ख्याल आता है
मादरे-हिन्द पे कब से यह जवाल आता है
देखें आजादी का कब हिन्द में साल आता है
कौम अपनी पे तो रह-रह के मलाल आता है
मुंतजिर रहते हैं हम खाक में मिल जाने को

—'वन्दे मातरम्' (१९२९) से
एक जब्तशुदा नज्म

वक्ते-रुख्सत - विदा के समय। तिफ्ल =बालक। अजवे-वदन = शरीर का अंग। सद चाक सौ टुकड़े। अजल=अनादि काल। वादि-ए-गुरबत =परदेश। मादरे-हिन्द=भारत माता। जवाल पतन। मुंतजिर =प्रतीक्षा में।



भंयकर विस्फोट की संभावना

—प्रो० वेदव्रत वेदालकार—

इस देश में धर्म परिवर्तन की समस्या, और वह भी सामूहिक रूप में, वहुत पुरानी नहीं है। इसका प्रथम प्रकटन तव हुआ जव इस्लाम का एक आक्रान्ता के रूप में इस देश में प्रवेश हुआ। उस समय प्रेरक भावना सम्भवतः धार्मिक या लूटमार की रही। बाद में दूसरा प्रोजलिटाइंजिग' धर्म ईसाईमत इस देश में आया जिसकी प्रेरक भावना धार्मिक के अलावा व्यापारिक और राजनीतिक भी थी। इंगलैंड के शासक वर्ग ने अपनी "फूट डालो और राज्य करो" की नीति के अनुसार धार्मिक भेदभाव को बढ़ावा दिया और राजनीतिक प्रयोजन से उससे लाभ उठाया। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, जैन, बौद्ध, और यहां तक कि पिछड़े और परिगणित वर्ग सब में साम्प्रदायिक चेतना जागृत करके उन्हें राजनीतिक इकाइयां वनाने की दुरभिसन्धि को दृढ़ किया और स्वयं को उन सवके ऊपर न्यायकारी पंच परमेश्वर के रूप में प्रतिष्ठित किया। जब महात्मा गांधी के नेतृत्व में हमारे स्वाधीनता आन्दोलन ने एक संग्राम का रूप धारण किया तो उन्हें, व उनके नेतृत्व में कांग्रेस को भी, इस वस्तु-स्थिति का सामना करना पड़ा। अन्त में ब्रिटिश शासक वर्ग तथा जनाब जिन्हा साहिव की दुरभिसन्धि से देश का विभाजन होकर ही रहा।

देश-विभाजन और उसके बाद

धर्म के आधार पर देश के विभाजन के बाद यह समस्या बहुत आसान और सरल हो जानी चाहिये थी। पाकिस्तान ने तो अपने को इस्लामिक राज्य घोषित करके इस समस्या को हल कर लिया। आज उसे कम से कम इस विषय में चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु भारत के नेताओं ने देश-विभाजन को मजबूरी में स्वीकार किया था, इसलिये वे इस समस्या का उस रूप में समाधान नहीं कर सकें। अर्थात् गुनाह बेलज्जत रहा—"खादिते अपि लशुने न शान्तो व्याधिः।" (लहसुन

भी खाया, फिर भी व्याधिशान्ति नहीं हुई।) काफी वड़ी संख्या में मुसलमान इस देश में रह गए, रखे गए। पिछले चौतीस वर्षों में उनकी जनसंख्या तिगुनी हो गई है। इस अनुपात से किसी भी दूसरे सम्प्रदाय की जनसंख्या नहीं बढ़ी है।

भारत ने अपने को धर्म-निरपेक्ष और वयस्क मताधिकार पर आधारित जनतन्त्र घोषित किया। साथ में अल्पसंख्यक संप्रदायों और परिगणित जातियों व वर्गों को वैज्ञानिक संरक्षण देने का प्रावधान किया। एक दृष्टि से यह वहुत उत्तम आदर्श भावना है, परन्तु इससे स्थिति फिर उलझ गई, जिसके दुष्परिणाम हमारे सामने आने प्रारम्भ हो गए। जव हमारे देश में राजनीतिक शक्ति का आधार वयस्क मताधिकार और जनसंख्या है तो पाश्चात्य धन और पेट्रो-डालरों ने इसके राजनीतिक फलितार्थ को तीव्र रूप में हमारे सामने उपस्थित कर दिया है।

भयंकर विस्फोट की सभावना

व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा और दलगत राजनीति के कारण हम चाहे अपना मुख न खोलें, परन्तु देश के पश्चिमोत्तर में, पूर्वोत्तर में, दक्षिण में और मध्य में जो स्थितियां उत्पन्न हो रही हैं, वे एक दिन भयंकर विस्फोट के रूप में हमारे सामने आने वाली हैं। खालिस्तान की मांग को हम हास्यास्पद समझते हैं। पूर्वांचल में और मध्य भारत में ईसाइयत की गतिविधियों को हमने कभी गंभीरता पूर्वक नहीं लिया। दक्षिण में धर्मान्तरण को हम क्षणिक प्रवाह समझ रहे हैं। परन्तु यह तो हिमपर्वत (आईसवर्ग) की ऊपरी शिखा मात्र है। जिस दिन यह हिमखण्ड एक हिमपर्वत प्रवाह (अवालांश) के रूप में, अपने समस्त राजनीतिक फलितार्थों के साथ, हमारे सामने आयेगा, ऐसा न हो कि तब हम फिर अपने को ऐसा ही असहाय और मजबूर पायें जैसा कि स्वाधीनता प्राप्ति के समय १९४७ में पाया था।

समस्या के दो पहलू

इस स्थिति का सामना करने या इस समस्या का स्थायी हल करने के लिये हमें क्या करना चाहिये?

१. इस समस्या के दो पहलू हैं। पहली और सर्वोपरि बात तो यह है कि धर्मान्तरण के लिये हिन्दू समाज ही सबसे अधिक उत्तरदायी है।

यह ठीक है कि एक धर्म संस्थापक और एक धर्म पुस्तक के न होने से हिन्दू धर्म या समाज में वह उग्रता नहीं है। और हम समझते रहे हैं कि यदि कुछ लोग छोड़कर दूसरे धर्म में चले जाते हैं, तो क्या फर्क पड़ता है। "कोई होय नृप हमेहि का हानि" वाला हमारा रवैया रहा है। यदि हमारा समाज इतना पुराना और जीर्ण शीर्ण है कि इसको जहां पर हाथ लगाओ वहीं से यह गिरता-मुरता है, तव तो हमें निराशा का ही सामना करना पड़ेगा। उस अवस्था में यदि दलित और शोषित वर्ग दूसरे धर्म या समाज में आश्रय ढूंढे तो उसे हम कैसे रोक सकते हैं? किसी भी समाज में दलित या अस्पृश्य वर्ग का होना एक लांछन है और धर्मान्तरण को एक चेलेंज समझ कर हिन्दु समाज को तुरन्त इसे समाप्त करना होगा। आज से साठ वर्ष पूर्व अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपना वलिदान देकर इस ओर देश का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न किया था। यदि हम महर्षि दयानन्द सरस्वती और स्वामी विवेकानन्द से प्रेरणा प्राप्त कर अपने असली रूप को जान-पहिचान सकें, अपने अन्दर नयी राजनीतिक चेतना उत्पन्न कर सकें, और जन्म के आधार पर जात-पांत और ऊंच-नीच की भावना समाप्त कर सकें, तब तो आशा की कुछ किरण सामने आती है। करोड़ों सनातन धर्मावलम्बी हिन्दुओं के माननीय नेता इसमें वहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

यदि हमको अल्पसंख्यक और वहुसंख्यक की परिभाषा में ही सोचना है तो वहुसंख्यक जाति को जानना चाहिये कि किसी देश की रीढ़ की हड्डी वही होते हैं और उन्हें अपने को, न केवल अपने अपितु राष्ट्रीय हित में, सवल और समर्थ वनाना चाहिये।

आजाद का सही विश्लेषण

इस प्रसंग में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की एक वात स्मरण हो आती है। वे किसी से कम मुसलमान नहीं थे, चाहे मुस्लिम लोग के नेतृत्व में उन पर गले-सड़े अंडे ही क्यों न फेंके गए हों। जैसा कि पंडित जवाहर लाल नेहरू जी की आदत वन गई थी, एक सभा में आवेश में आकर उन्होंने हिन्दुओं और हिन्दी के समर्थकों की संकीर्णता की तीव्र आलोचना की। इस पर, कहते हैं कि, मौलाना आजाद ने पंडित जी को बुजुर्गाना तरीके से मशविरा देते हुए कहा कि वहुसंख्यक जाति किसी देश की

रीढ़ की हड्डी होती है, उसकी इतनी अधिक आलोचना व भर्त्सना नहीं करनी चाहिये कि उसमें नैतिक गिरावट आ जाये और वह कमजोर पड़ जाये।

इस समस्या का दूसरा पहलू यह है कि अल्पसंख्यक वर्ग को देश के संविधान के आदर्शवाद और शासक वर्ग की दुर्बलता का लाभ उठाकर ऐसा काम नहीं करना चाहिये जो सोये अजगर को जगा दे। उन्हें समझना चाहिये कि उनका अपना हित बहुसंख्यक जाति के साथ अच्छे संबंध रखने में है, न कि टकराव में। आत्मा की आवाज के आधार पर व्यक्तिगत रूप से धर्म परिवर्तन पर कोई आपत्ति नहीं कर सकता। परन्तु डंके की चोट पर, अधिकार के रूप में, सामूहिक रूप से धर्मान्तरण देश द्रोही शृंखला की प्रतिक्रिया को प्रारंभ कर सकता है।

दोनों का कर्त्तव्य

२. दूसरी बात बहुत महत्वपूर्ण है। इस बात का आधार जनसंख्या पर आधारित बहुसंख्यक-अल्पसंख्यक परिभाषा में सोचना है। दोनों ही वर्गों को एक बात समझ लेनी होगी। ठीक है, देश का विभाजन धर्म के आधार पर हुआ था। परन्तु आज चौंतीस साल के बाद वह बात पुरानी पड़ चुकी। बहुसंख्यक हिन्दू जाति को समझ लेना चाहिये कि मुसलमानों को भी इसी देश में रहना है और वे भी वैसे ही भारतीय नागरिक हैं, जैसे हम हैं। राजनीतिक और वैधानिक दृष्टि से उन्हें भी सब अधिकार समान रूप से प्राप्त हैं। राजनीतिक और राष्ट्रीय दृष्टि से जागरूक रहना एक बात है, परन्तु उनको अलग समझ कर शंका की दृष्टि से देखना बहुसंख्यक जाति को शोभा नहीं देता। ऐसा समझना अन्दर छिपी हुई दुर्बलता और हीन भावना का द्योतक होगा।

साथ में अल्पसंख्यक वर्गों को समझना होगा कि उन्हें बहुसंख्यक जाति के साथ मिलकर रहना है और अपने व्यवहार से उनकी सदाशयता प्राप्त करनी है। उससे विरोध करके, राष्ट्रीय प्रवाह के साथ न चल कर, पृथक् राजनीतिक अस्तित्व के खतरे को उन्हें समझना चाहिये। यदि वे चाहते हैं कि सम्मान के साथ, बराबरी के आधार पर, देश में रहें तो उन्हें बहुसंख्यक जाति का पूरा विश्वास प्राप्त करना होगा। देश विभाजन के समय के इम्प्रेशन को दूर करना होगा, न कि नयी घटनाओं से उसे बद्धमूल करना। सब वर्गों का परस्पर सीधा सम्बन्ध और सम्पर्क होना चाहिये। किसी वर्ग को भी बीच के दलालों, अर्थात् राजनीतिज्ञों और राजनीतिको

दलों, यहां तक कि सरकार के भी, प्रश्रय की जरूरत नहीं होनी चाहिये। तभी चिरस्थायी शान्ति और सुरक्षा की भावना होगी। वैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिये न्यायपालिका और कानून व्यवस्था की रक्षा के लिये प्रशासन है। आवश्यकता इस वात की है कि वहुसंख्यक और अल्पसंख्यक जातियों के नेता आपस में मिलें और स्पष्ट रूप से, परन्तु प्रेम के साथ, वैसा कहें।

कुछ लोग सोलहवीं सदी से पहले की, कुछ लोग चौदह सौ साल से पहले की, और कुछ लोग दो हजार साल से पहले की भारतीय संस्कृति में दिलचस्पी नहीं रखते। कुछ लोग भारतीय संस्कृति पर वाद के प्रभावों को नहीं मानना चाहते। दोनां ही दृष्टिकोण गलत हैं। हम सवको एक समवेत और समन्वित भारतीय सस्कृति पर गर्व होना चाहिये। हां, उसमें से हानिप्रद मिलावट और क्षेपकों को निकाल देना होगा, जैसे गंगा के आदि स्रोत का पवित्र जल आगे-आगे अपना रंग-रूप वदलता जाता है, परन्तु फिर भी गंगा जल कहलाता है और हम उसे फिल्टर करके अपने इस्तेमाल के योग्य वना लेते हैं।

धर्मान्तरण सरस्या का हल नहीं

३. तीसरी वात का सम्वन्ध उस वर्ग से है जिसे हम अस्पृश्य, दलित, हरिजन, परिगणित आदि नामों से पुकारते हैं। दर असल ये विशाल हिन्द समाज के अंग हैं, परन्तु किन्हीं ऐतिहासिक मूर्खताओं के कारण इन्हें हमने जन्म पर आधारित जातपांत के कारण दलित और शोषित वना दिया। फिर भी ये हिन्दू जाति में वने रहे, इसका श्रेय इन्हीं को जाता है। इनके पिछड़ेपन और असंतोष के कारण 'प्रोजलिटाईजिंग' धर्मों की सदा इन पर आंख रही है। तथाकथित उच्चवर्गीय हिन्दू समाज की स्वार्थ परायणता, संकीर्णता, उपेक्षा और हृदय-हीनता तथा विधान द्वारा दिये गये आरक्षणों के असंतोषजनक पालन ने इस वर्ग में भी उग्रवादी और निहित स्वार्थों वाले व्यक्ति पैदा कर दिये हैं। अब इस वर्ग को स्वयं इस वात का फैसला करना चाहिये कि संविधान में प्राप्त संरक्षण से उनके जनसाधारण को क्या लाभ हुआ है और वे इसके वारे में क्या सोचते हैं। उन्हें सोचना है कि क्या मात्र धर्मान्तरण उनकी समस्या का सही और दूरगामी हल है? क्या अपने वहुसंख्यक हिन्दू समाज के सुधार में सक्रिय सहयोग प्रदान कर अपनी स्थिति को सुरक्षित और मजबूत वनाना उनके हित में है या अल पसंख्यक जातियों द्वारा दिये गए प्रलोभनों में आकर तात्कालिक लाभ के लिए धर्मान्तरण? उहें समझना चाहिये कि यदि उनकी आर्थिक अवस्था नहीं सुधरेगी तो

सर्वत्र उनका शोषण होगा। कानून और विधान के अन्दर अब भी उन्हें सब अधिकार समान रूप से प्राप्त हैं, वल्कि कुछ विशेष आरक्षण भी प्राप्त हैं। सवाल उनकी आर्थिक-सामाजिक स्थिति को सुधारने और भावनात्मक एकात्मता उत्पन्न करने का है।

तुष्टीकरण का अन्त आवश्यक

४. चौथी वात का सम्वन्ध हमारी सरकार या उन लोगों से है जो सत्ता में हैं और जिनके हाथ में देश की वागडोर है। वे जब रोम जल रहा हो तो नीरो की तरह वांसुरी वजाते, तमाशवीन या धर्म निरपेक्षता के नाम पर तटस्थ वन कर बैठे नहीं रह सकते। दर असल धर्मान्तरण के राजनीतिक फलितार्थ उनके ही समझने का विषय है।

हमारी सरकार और सत्तारूढ़ राजनीतिक दलों को भी यह समझ लेना चाहिये कि वहुसंख्यक जाति की मान मर्यादा के मूल्य पर अल्पसंख्यक जातियों के तुष्टीकरण की नीति कभी भी देश को शक्तिशाली और समृद्धिशाली नहीं वना सकती। दलगत स्वार्थों की पूर्ति के लिये जैसे-तैसे वोट प्राप्त करने की नीति ने देश को वहुत गलत रास्ते पर डाल दिया है। हमें एक ऐसे तेजस्वी और निडर नेता की आवश्यकता है जो साहस करके देश को दलगत राजनीति से और वोटो के लिये तुष्टिकरण की दलदल से निकाल कर सही रास्ते पर डाल सके। सामूहिक धर्मान्तरण की दुरभिसन्धि सरकार के लिये ऐसा सिरदर्द पैदा कर देगी कि विकास के समस्त रचनात्मक कार्यक्रम धरे रह जायेंगे।

इस धर्मान्तरण का एक राजनीतिक फलितार्थ देश में असन्तुलन और अस्थिरता उत्पन्न करना है, जिसका लाभ देश-विरोधी तत्त्वों और शक्तियों को प्राप्त होता है। असम की मिसाल हमारे सामने है।

कूपमडूकता का परिणाम

समय-समय पर हमारी दासता के अनेक कारणों में से में यहां एक कारण का विशेष रूप से उल्लेख करना चाहता हूं। जव-जव भी हम कूपमंडूक वन कर अपनी सीमाओं से वाहिर की दुनिया से अनभिज्ञ रहे हैं, तभी विदेशी आक्रान्ता हम पर विजय पाने में सफल होते रहे हैं। जव शक-यूची-कुशान-हूण आदि फिरन्दर जातियां भारत में प्रविष्ट हुई तो हमें नहीं मालूम था कि मध्य एशिया में क्या उफान आ रहा है। ये आक्रान्ता किसी धर्म के झंडे को लेकर भारत में नहीं आये थे। उन्होंने तत्संबन्धी

समस्या भी पैदा नहीं की। जब उत्तर मध्यकाल में मुस्लिम आक्रान्ता धर्म-प्रचार या लूटमार के उद्देश्य से भारत में आये तब भी हमें मालूम नहीं था कि हमारे पश्चिम और पश्चिमोत्तर में क्या खिचड़ी पक रही है और हमें किस प्रकार के आक्रमण का सामना करना पड़ेगा। जब यूरोप के ख्रिस्तान धर्मावलंबी धर्मप्रचार, व्यापार और राजनीतिक प्रभु सत्ता हासिल करने के लिये आये, तब भी हमें नहीं मालूम था कि व्यावसायिक क्रान्ति और जल तथा स्थल के नवीन शस्त्रास्त्रों ने उनको कितना शक्तिशाली और साधन-सम्पन्न बना दिया है। हम न केवल अनभिज्ञ थे, अपितु उस स्थिति का सामना करने के लिये "एक" भी नहीं हो सके। अपने अन्दर राष्ट्रीय भावना उत्पन्न करने के लिये हमें एक लम्बे रास्ते से गुजरना पड़ा। राष्ट्रीयता की वह भावना आज भी अपूर्ण और खंडित हैं।

धर्मान्तरण की घटनायें हमारी आंखें खोलने के लिये पर्याप्त होनी चाहियें। इनको हमें चेतावनी के रूप में ईश्वरीय देन समझना चाहिये। हमारे पास अब देश-विदेश के घटना-विकास को जानने के लिये सब साधन और संगठन मौजूद हैं। विशाल गुप्तचर विभाग और स्थान-स्थान पर दूतावास हैं। हमारी सरकार को मालूम होना चाहिये कि यूरोप और अमेरिका में हमारे विरुद्ध क्या षडयंत्र हो रहे हैं। हमारी सीमाओं के साथ लगे या पड़ोस में स्थित देशों में पान-अरब, पान-इस्लाम, इस्लाममिक फंडामेंटलिज्म और इस्लामिक राज्यों के नाम पर क्या गतिविधियां चल रही हैं। पाश्चात्य डालरों और पेट्रो--डालरों के द्वारा हमारे पश्चिमोत्तर, पूर्वांचल, दक्षिण तथा मध्य भारत में क्या योजना और क्या कुचक्र चल रहे हैं, जिनका एक पहलू है धर्मान्तरण जिसके द्वारा हमारी राष्ट्रियता, एकता, अखंडता और धर्म निरपेक्षता को कमजोर किया जा रहा है।

यदि हमारी सरकार अनभिज्ञता वश या जान बूझकर आंखें मूंदने की नीति के कारण स्थिति को न संभाल सकी, तो बहुमत के कारण चाहे वह कुछ अरसे तक कायम रहे, परन्तु इतिहास उसे माफ नहीं करेगा। समय आने पर लोकमत के सामने भी उसे जवाब देना होगा। शायद उसे सामूहिक धर्मान्तरण को कानूनी तौर पर निषिद्ध करार देने के लिये मजबूर होना पड़े।

चाणक्य की कथा

आचार्य चाणक्य से संबंधित एक प्राचीन कथानक का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा। जब वे नन्द द्वारा किये गए बदला लेने के लिये कोई तजवीज सोच रहे थे, तभी एक दिन उन्हें एक परिवार में भोजन करने का

अवसर प्राप्त हुआ। माता अपने पुत्र को खाना खिला रही थी। लड़का रोटी को वीच में से पहले खा रहा था, क्योंकि वह भाग मुलायम होता है। माता ने कहा बेटा, रोटी को पहले किनारों से खाओं, वीच का मुलायम भाग तो वाद में भी खा सकते हो। आचार्य चाणक्य ने इस संकेत को पकड़ लिया और देश की सीमाओं की ओर ध्यान दिया तथा चन्द्रगुप्त मौर्य को आगे करके एक दफा देश में एकच्छत्र साम्राज्य की स्थापना की।

क्या हमारी सरकार धर्मान्तरण के पीछे छिपे उसके राजनीतिक फलितार्थ को ध्यान में रखकर अपनी सीमाओं पर, अन्दर और वाहर, पक रही खिचड़ी की ओर उचित ध्यान दे रही है ? यह देखना होगा कि धर्मान्तरण में दिलचस्पी रखने वाले लोगों के साधन क्या हैं, वे कहां से आते हैं, उनकी सहायता के साथ क्या दायित्व जुड़े हुए हैं, उनकी कार्य-विधि क्या है, उनकी देश के प्रति निष्ठा सम्पूर्ण है या अपूर्ण, और समय पर उनसे कोइ खतरा तो उत्पन्न होने की आशंक नहीं है।

दुर्भाग्य की वात है कि स्वाधीनता प्राप्ति से पूर्व जिन बातें का निर्णय हो गया, आज वे फिर अग्निर्णीत हो गई हैं। शिक्षा और भाषा आदि के मसले ऐसे हो हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में हमें धर्मान्तरण के फलितार्थ को भी देखना चाहिये। **



इस्लामीकरण के षड्यंत्र से हानियां

—श्री नरेन्द्र अवस्थी—

आजादी के वाद जहां पाकिस्तान मुस्लिम देश बनकर उभरा वहां हिन्दुस्तान में धर्मनिरेक्षता की ओट में विदेशी शक्तियों धर्म-परिवर्तन के अभियान में क्रियाशील रहीं। भारत में ईसाई धर्म के प्रचार हेतु विदेशी मिशनरियों ने लाखों हिन्दुओं को ईसाई वना लिया। अव यही षड्यंत्र एशिया के मुस्लिम अरव देशों द्वारा भारत में चलाया गया है। मीनाक्षीपुरम का इस्लामीकरण इसी षड्यंत्र का एक अंग है।

पिछले दिनों कई सारे मौलवी तिरूचिरापल्ली से एक मुस्लिम सम्मेलन में शामिल होने के वहाने से जमा हुए थे। मदुराई में केन्द्रीय कृषि राज्य मंत्री आर० वी० स्वामीनाथन ने इस वात की पुष्टि की है कि इस काम के लिए तमिलनाडु में खाड़ी देशों से पैसा आ रहा है। तिरुचिरा-पल्ली के एक शिक्षा-संस्थान को एक अरव देश से ३ करोड़ रु० मिले हैं। यही पैसा हरिजनों को मुसलमान वनाने में लगाया जा रहा है।

लन्दन के इस्लामिक कल्चरल सेन्टर द्वारा भारत में नई हरकतें शुरु करने का भण्डाफोड़ कुवैत से प्रकाशित १९ जनवरी १९८१ के 'अरव टाइम्स' के इस समाचार से हुआ कि कुवैत सरकार ने भारत के इस्लामी-करण की सहायतार्थ ५०,००० पौंड अर्थात् दस लाख रुपया दिया है और ५० परिवारों को मुसलमान बनाकर स्वावलम्वी वनाने के लिए एक कृषि योजना में लगा दिया गया है। इस्लामिक सेन्टर लन्दन के डायरेक्टर मौहम्मद अब्दुल खैर वडावी ने भारत की स्थिति था अध्ययन कर सेन्टर को अपनी रिर्पोट देते हुए कहा था कि वर्तमान समय में भारत के हरिजनों को इस्लाम की दीक्षा देकर मुसलमानों की संख्या तुरन्त २० करोड़ की जा सकती है। इसी के वाद मौहम्मद वडावी के सुझाव के अनुसार लन्दन सेन्टर की ओर से तवलीग का कार्य गुप्त रूप से प्रारम्भ हो गया।

स्मरण रहे, सन् १९७३ में पश्चिमी एशिया के अरव देशों ने 'पान इस्लामिक संघ' की स्थापना की थी और मोरक्को से लगाकर इण्डोनेशिया

तक समूचे देशों के इस्लामीकरण का लक्ष्य निर्धारित किया था। इस लक्ष्य की पूर्ति के निमित्त पहली बैठक में ही ६००० करोड़ रुपया जमा किया गया। तभी से इस संगठन द्वारा भारत, वर्मा, थाईलैण्ड, फिलीपीन्स आदि देशों में गुप्त रूप से योजनावद्ध कार्य चल रहा है। वर्मा, थाईलैण्ड फिलीपीन्स आदि में वहां के अल्पसंख्यक मुसलमानों द्वारा अपने लिए जो अलग होमलैण्ड की मांग की जा रही है, उसके पीछे इसी संगठन का हाथ वताया जाता है।

धर्म-परिवर्तन से हानियां

जो यह कहते है कि हिन्दू धर्म में छुआछूत के कारण लोग हिन्दूधर्म को छोड़कर मुसलमान वन रहे है, उन्हें इस तथ्य का ज्ञान नहीं कि इस्लाम के भी ६२ फिरके हैं। [कुछ विद्वानों के कथनानुसार इन फिरकों की संख्या ५०० तक है।—सं०] उनमें कई दूसरों से अपने को श्रेष्ठ मानते हैं और उनमें रोटी-वेटी के संबंध नहीं होते। इतना हो नहीं, उनके कब्रिस्तान भी अलग हैं। पाकिस्तान में अहमदियों को गैरमुस्लिम करार दे ही दिया गया। आए दिन लखनऊ में शिया-सुन्नी लड़ते है। ईराक-ईरान जैसे कई मुस्लिम देश आपस में ही लड़ रहे है। जो लोग हरिजनों से मुसलमान वने, उन्हें 'मुसल्ली' का नाम देकर एक अलग वर्ग वना दिया गया। आकाश से गिरे, तो खजूरमें भी नहीं अटके। सीधे कुएं में गिरने जैसी स्थिति हो गई।

हरिजनों के धर्मपरिवर्तन करते ही उन्हें सरकारी नौकरियों, शिक्षा संस्थाओं तथा राजनोति में जो संरक्षण प्राप्त हैं, वह समाप्त हो जाएगा। हरिजन कल्याणार्थ जो आर्थिक योजनाएं चल रही हैं, उनसे न तो वे, न उनकी संतान, लाभान्वित हो पाएगी। मुसलमान वनने वाले पूर्व हरिजन इस्लाम में दूसरा दर्जा रखते हैं। उनसे कोई रोटी-बेटी का सम्बन्ध नहीं जोड़ता। उन्हें खतना करना लाजिमी होगा, नहीं तो उनकी नमाज खुदा कबूल नहीं करेगा। खुदा के अलावा पैगम्वर हजरत मोहम्मद पर ईमान लाना पड़ेगा क्योंकि पैगम्वर की सिफारिश के विना उन्हें स्वर्ग नहीं मिलेगा। हिन्दू धर्म में एक ईश्वर के अतिरिक्त और किसी को मानने की आवश्यकता नहीं। चाचा-ताऊ की लड़की तो बहन के समान होती है। मगर इस्लाम में उस से भी शादी की इजाजत है। नारी वहां भोग्य वस्तु है—मातृशक्ति, देवी, अर्धाङ्गिनी आदि वाला नारी का रूप वहां नहीं है। नारी-स्वातन्त्र्य पर इतना अंकुश है कि बुर्के में उन्हें सदा कैद रहना पड़ता है। मुसलमान

बनने पर किसी वक्त भी वहन-बेटी भले ही कितने भी दुःख में ग्रस्त हो पर उसका पति केवल तीन वार 'तलाक-तलाक-तलाक' कह कर उसे छोड़ सकता है।

हिन्दू धर्म में विचार-स्वातन्त्र्य है, पर आचार-स्वातन्त्र्य नहीं। हिन्दूधर्म उदारता, एकेश्वरवाद, प्रजातन्त्रवाद और तर्कसंगत शाश्वत सत्य मूल्यों पर टिका है। यह किसी व्यक्ति विशेष की ईजाद नहीं है। छुआछूत की भावना वेद-विरुद्ध है। धर्मशास्त्रों में वर्ण-व्यवस्था जन्म के स्थान पर नहीं कर्म के आधार पर मानी गई है। अस्पृश्यता के खिलाफ महर्षि दयानन्द, वीर सावरकर और महात्मागांधी आदि ने भरसक प्रयास किया। आज तो बड़े-वड़े धर्माचार्यों ने भी देव मन्दिरों के कपाट खोलने का आदेश दे दिया है। हिन्द समाज में जाति-पांति का कंलक मिटाया जा रहा है।

धर्म परिवर्तन रोकने के उपाय

हरिजनों को हरिजन न कहकर हिन्दू ही कहा जाए। हिन्दू नेता, समाजसेवी कार्यकर्त्ता, धर्माचार्य नित्य एक घण्टा हरिजन बस्तियों में जाकर उनके दुःख-सुख के भागीदार बनें। हरेक धार्मिक, सामाजिक सांस्कृतिक संस्था में हरिजनों को प्रतिनिधित्व दिया जाए। अन्तंजातीय विवाहों को प्रोत्साहित किया जाए।

सरकार को विदेशी राजनीतिक षड्यन्त्रों से देश को बचाने के लिए श्रीलंका, चीन, फिलीपीन्स, थाईलैण्ड आदि पड़ोसी राष्ट्रों की तरह निम्न कदम उठाने चाहिए—

१. सामूहिक धर्म परिवर्तन को अवैध घोषित किया जाए।

२. विदेशी धन के आयात पर रोक लगाई जाए। विदेशी मिशनरियों को देश से बाहर निकाला जाए।

३. जन्म-जाति के स्थान पर गुण-कर्म-स्वभाव को प्रमुखता दी जाये।

४. भारत को हिन्दूराष्ट्र घोषित किया जाए क्योंकि भारत का विभाजन दो कौमों के सिद्धान्त पर हा किया गया था।





हम किन मूल्यों के लिए लड़ रहे हैं

—स्व० राष्ट्रकवि रामधारीसिंह दिनकर—

भारत में आधुनिकता का प्रवेश उन्नीसवीं सदी में हुआ था और उसके व्याख्याता राजा राममोहन राय, केशवचंद्र सेन, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द, लोकमान्य तिलक, रवींद्रनाथ ठाकुर आदि भारतीय थे।

उस समय आधुनिकता बड़े वेग से आयी थी। किन्तु दो कारणों से उसका प्रवाह वहुत मन्द हो गया। एक तो इसलिए कि उसके प्रतीक अंग्रेज अफसर और ईसाई धर्म-प्रचारक थे, जिनसे जनता को चिढ़ थी। दूसरे कलकत्ते के हिन्दू युवकों ने आधुनिकता के नाम पर चारित्रिक उच्छृंखलता का ऐसा भयानक परिचय देना शुरू किया कि समाज आधुनिकता को घोर संदेह से देखने लगा।

स्वतंत्रता के वाद आधुनिकता की गति फिर से कुछ तेज हो गयी है ओर उसका प्रचार इस बार अंग्रेज नहीं, सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्रों के भारतीय लोग ही कर रहे हैं। मगर इस बार भी जनता का एक भाग—शायद बड़ा भाग—कुछ चौंका हुआ है। इन भारतीयों को चिन्ता लगी हुई है कि भारत यदि आधुनिक हो गया, तो भारत की प्राचीन संस्कृति नष्ट हो जायेगी।

ऐसे भारतीयों से मैं पूछना चाहता हूं कि आप अपनी संस्कृति के किन तत्त्वों की रक्षा करना चाहते हैं?

भारतीय समाज मुक्त नहीं, बंद समाज है। यहां के लोग विदेशियों और विधर्मियों से घुलना-मिलना नहीं चाहते हैं, न उन्हें अपने साथ घुलने-मिलने का अवसर देना चाहते हैं। अपने इसी भाव की रक्षा के लिए हिन्दुओं ने समुद्र-यात्रा को पाप मान लिया था। क्या हम यह चाहते हैं कि विदेशियों और विधर्मियों से घुलना-मिलना अब भी पाप समझा जाये?

जब भारतीय समाज मुक्त समाज था, यहां काय-चिकित्सा के साथ-साथ शल्य-चिकित्सा का भी विकास हुआ था। सुश्रुत संहिता शल्य-

चिकित्सा का ही ग्रंथ है। उसमें अश्मरी, अर्श, उदर रोग और गर्भ तक के आपरेशन की विधियां लिखी हुई हैं और शवच्छेद तक की क्रिया का विधान है। शल्य-यंत्र एक सौ के लगभग गिनाये गए हैं। किन्तु जव भारतीय समाज का पतन होने लगा, इस देश के वैद्य रक्त और पीप छूने से घृणा करने लगे, तव मूत्र और पुरीष की जांच की विद्या भूल गए और शल्य-चिकित्सा का भारत में पतन हो गया।

वंद समाज का एक लक्षण यह भी है कि वह अपने सदस्यों को भी उन्नति की दीर्घा में ऊचा उठने की खुली छूट नहीं देता है। बंद समाज के इस अत्याचार को शूद्रों, हरिजनों और नारियों ने शताब्दियों से झेला है। क्या हम यह चाहते हैं कि इन अत्याचार-पीड़ित लोगों को द्विजों के साथ समता अव भी न दी जाए ?

आधुनिकता दूषित है ?

आधुनिकता के साथ वह कौन-सा दोष लगा है, जिससे संस्कृतिवादी लोग भड़कते है ? साक्षरता का निस्सीम प्रचार आधुनिकता है। प्रतिमुंड आय की वृद्धि आधुनिकता है। कल-कारखानों का विकास आधुनिकता का लक्षण है। आधुनिकता बेरोजगारी को वर्दाश्त न करने का नाम है। वाप दादे की कमाई पर वेटा मौज करे, यह मध्यकालीन रिवाज है। आधुनिक समाज में हर आदमी अपनी रोजी आप कमाता है। यहां तक कि औरतें भी घर से वाहर निकल कर काम करती हैं।

ज्योतिषी से पूछकर हर काम करना मध्यकालीन संस्कार है। भारत के मध्यकालीन राजे पलटन के साथ ज्योतिषियों और तांत्रिकों की भी फौज रखते थे। आधुनिक मनुष्य अपनी बुद्धि में विश्वास करता है, अपने वाहुवल का सहारा रखता है।

इनमें से कौन-सी वातें हैं, जो अग्राह्य हैं, अथवा जिन्हें स्वीकार करने से भारत की प्राचीन संस्कृति विनष्ट हो जायेगी ?

मुझे आधुनिकता के किसी भी उपकरण की स्वीकृति में धर्म या संस्कृति की वाधा कभी भी नहीं दीखती। औद्योगीकरण के क्रम में धर्म और संस्कृति की वाधाएं जहां हों, वहां धर्म और संस्कृति को ही नया रूप देना होगा।

जव उद्योग फैलते हैं, नगरों की प्रधानता में वृद्धि होती है और अनेक देशों, अनेक धर्मों और अनेक संस्कृतियों के लोग परस्पर मिलने लगते हैं

या नगरों, मोहल्लों या आस-पास के फ्लैटों में साथ रहने लगते हैं, तब उनका प्रभाव मनुष्यों के नैतिक रिवाजों पर भी पड़ता है। धर्म वह है, जो इस मानव-मिलन से उत्पन्न नवीन स्थितियों को अपने भीतर पचा सके। जो धर्म अब भी घोंघे के समान सिकुड़कर अपनी रक्षा करना चाहता है, वह धर्म बचने वाला नहीं है, न उसे बचाया जाना उचित है।

सृष्टि विषयक दृष्टि

मूल प्रश्न यह है कि सृष्टि-विषयक हमारा दृष्टिबोध क्या है? क्या हम यह मानते हैं कि वास्तविकता उतनी ही दूर तक है, जितनी दूर तक का अनुभव हमें इंद्रियों से प्राप्त होता है, अथवा जितनी दूर तक विज्ञान की छड़ी पहुंच सकती है? अथवा वह विज्ञान के आगे भी पहुंचती है? हमारा जीवन मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाता है, या मृत्यु के बाद भी जीवन की कड़ी कायम रहती है? केवल लोक ही सत्य है, अथवा लोक और परलोक दोनों सत्य हैं?

समाज में जो लोग आज यह मानकर आचरण कर रहे हैं कि पुलिस से छिपकर जो कुछ भी किया जाता है, वह पाप नहीं होता, वे सभी लोग पहले दर्जे के नास्तिक हैं; क्योंकि उनकी दृष्टि में केवल लोक सत्य है, परलोक झूठा है। आदमी जब यह मानकर चलता है कि जिंदगी मृत्यु के साथ खत्म नहीं होती, तब उसका आचरण कुछ और प्रकार का होता है।

सच्चे परलोकवादियों की जिस समाज में अधिकता होगी, उस समाज में पुलिस की जरूरत कम पड़ेगी। और चूंकि आदमी आदमी को हर जायज अधिकार खुद दे दिया करेगा, इसलिए उस समाज में जजों और मजिस्ट्रेटों की तादाद भी थोड़ी ही रहेगी। अच्छा समाज वह है, जिसमें कानून कम होते हैं और कानून मनवाने वाली फौज भी छोटी होती है।

भारत जिन मूल्यों के लिए लड़ रहा है, वे मूल्य केवल भारत के नहीं, सारे संसार के हैं। हम आधुनिकता की ताकत और प्राचीनता के संतोष को मिलाना चाहते हैं। विज्ञान के बल से संसार के उन्नतिशील देश और भी अधिक शक्तिशाली होते जा रहे हैं। किन्तु ज्यों-ज्यों उनकी परम्परा और शक्ति बढ़ती जाती है, उनके संतोष और शांति का ह्रास होता जाता है। हमें भारत में वह मार्ग निकालना है, जिससे विज्ञान को अपनाकर भी हम उसके दास न बन जायें। हमारी संपदा और शक्ति अवश्य बढ़े, लेकिन हम रुपये के पीछे पागल न हो जायें।

राममोहन राय से लेकर महात्मा गांधी तक भारत के जो भी महान् विचारक हुए हैं, उनकी कल्पना यह थी कि भारत को अपनी संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ अंश को भी बचाना है और पाश्चात्य संस्कृति के भी सर्वोत्तम भाग को स्वीकार करना है। भारत की विशेषता अध्यात्म, और पाश्चात्य जगत् की विशेषता विज्ञान है। हम इन दोनों तत्त्वों का समन्वय करना चाहते हैं।

एक हाथ में कमल, एक में धर्मदीप्त विज्ञान।
लेकर उठने वाला है धरती पर हिन्दुस्तान॥



कालजयी संस्कृति

हम अतीत के गौरव से अनुप्राणित हैं, परन्तु उसको भारत के राष्ट्र-जीवन को सर्वोच्च विन्दु नहीं मानते, हम वर्तमान के प्रति यथार्थ-वादी हैं, किन्तु उससे बंधे नहीं; हमारी आंखों में भविष्य के स्वर्णिम सपने हैं किन्तु हम निद्रालु नहीं; बल्कि उन सपनों को साकार करने वाले जागरूक कर्मयोगी हैं। अनादि अतीत, अस्थिर वर्तमान तथा चिरन्तन भविष्य की कालजयी सनातन संस्कृति के हम पुजारी हैं।

—स्व० श्री दीनदयाल उपाध्याय

आगे बढ़ेंगे

—सरदार जाफ़री—

वो बिजली-सी चमकी वो टूटा सितारा
वो शोला-सा लपका वो तड़पा शरारा
जुनूने-बगावत ने दिल को उभारा
बढ़ेंगे अभी और आगे बढ़ेंगे

गरजी हैं तोपें गरजने दो इनको
दुहुल बज रहे हैं तो बजने दो इनको
जो हथियार सजते हैं सजने दो इनको
बढ़ेंगे अभी और आगे बढ़ेंगे

चट्टानों में राहें बनानी पड़ेंगी
अभी कितनी कड़ियां उठानी पड़ेंगी
हजारों कमानें झुकानी पड़ेंगी
बढ़ेंगे अभी और आगे बढ़ेंगे

हदें हो चुकीं खत्म बीमो-रजा की
मुसाफत से अब अज्मे-सब्र आजमां की
जमाने के माथे पे है ताब नाकी
बढ़ेंगे अभी और आगे बढ़ेंगे

उफ़ुक के किनारे हुए हैं गुलाबी
सहर की निगाहों में है बर्क ताबी
कदम चूमने आई है कामयाबी
बढ़ेंगे अभी और आगे बढ़ेंगे

मसाइब की दुनिया को पामाल करके
जवानी के शोलों में तप के निखर के
जरा नज्मे-गेती से ऊंचे उभर के
वढ़ेंगे अभी और आगे वढ़ेंगे

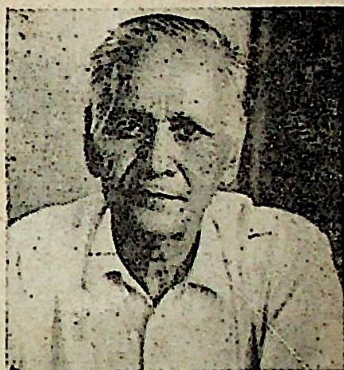
महकते हुए मुर्गजारों से आगे
लचकते हुए आवशारों से आगे
वहिश्ते-वरीं की वहारों से आगे
वढ़ेंगे अभी और आगे वढ़ेंगे

—एक जब्तशुदा न

जुनूने-वगावत =विद्रोह का उन्माद। दुहुल=ढोल, नक्कारा बीमो-रजा=आशा-निराशा। मुसाफत=दरी। अज्मे-सब्र आजमां साहस पूर्ण संकल्प। तावनाकी=प्रकाश, चमक। उफुक=क्षितिज मसाइब=मुसीवत का वहुवचन। पामाल=पद-दलित। नज्मे गेती=धर का प्रवन्ध। मुर्ग जारों=हरे-भरे जंगल। अवशारों=झरने। बहिश्ते-वरीं स्वर्ग।



भारत और हिन्दुत्व पर्यायवाची



—श्री वीरेन्द्र सिंह परमार—

आयुर्वेदज्ञ, लेखक, पत्रकार, प्रवन्धक, पर्यटक, निश्शुल्क चिकित्सक, युरोप और एशिया के अनेक देशों का भ्रमण, रीजनल पब्लिसिटी अफसर, गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के भुतपूर्व मुख्याधिष्ठाता।

भारत की संस्कृति ने इतिहास के कई उतार-चढ़ाव देखे हैं और वह समय की कसौटी पर खरी उतरी है तथा प्रेरणा का स्रोत सिद्ध हुई है। हमारी परम्परा का यह खजाना वहुमूल्य है। इसकी अनूठी महानता यह है कि इस से विविधता के वीच भी एकता कायम है। इसका परिणाम यह हुआ है कि भारतीय सभ्यता अभी भी जीवित है जवकि इसकी समकालीन अन्य सभ्यताएं अव नजर नहीं आती हैं। ऊंचे आदर्शों वाले सभी धर्मों का आदर करना भारतीय सभ्यता की एक प्रमुख विशेषता है। लोगों को चाहिए कि वे देश की संस्कृति, धर्म और आध्यात्मिक परम्पराओं के इन पहलुओं पर विचार करें तथा शान्ति, राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सौहार्द का वातावरण कायम करने में मदद करें। साथ ही वे जाति, सम्प्रदाय व धर्म के कृत्रिम वन्धनों को तोड़कर राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने में सहयोग करें।

रामेश्वरम् में शिवपूजा के उपरान्त भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती गांधी ने अनायास ही कहा था—'मेरे विचार से रामेश्वरम् हमारी एकता का प्रतीक है।'

उपरोक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि व्यक्ति की सहज भावनायें उसके चित्त पर अंकित संस्कारों का ही परिणाम होती हैं। ये भावनायें भारतीय प्राचीन संस्कृति एवं परम्पराओं में व्यक्ति की श्रद्धा और विश्वास को प्रतिविम्वित करती हैं। श्रीमती गांधी के तिरुपति मन्दिर में भगवान के दर्शन करने के सम्बन्ध में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संचालक श्री गुरुजी ने कहा था—'मैं समझता हूं कि उनकी तिरुपति यात्रा देशभक्ति के कारण

थी, उसमें राजनीतिक उद्देश्य नहीं था। जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब मनुष्य सम्पत्ति, सत्ता और लोक-प्रियता की परिधि से निकलकर आत्म-निरीक्षण करता है। सभी वाह्य आकर्षणों से अपने मन को हटा कर अपने अन्तस् में अपने स्रष्टा का साक्षात्कार करता है। उस समय उसे अपूर्व शान्ति और आनन्द की अनुभूति होती है। ऐसी तीव्र इच्छा हम सव में विद्यमान है। हमारे अन्तस् में सुप्त संस्कार कभी न कभी जाग्रत हो उठते हैं और हमें आत्मानुभूति हो जाती है। इन्दिरा जी के अन्दर ऐसे पवित्र संस्कार उनके वाल्यकाल में पड़ गये थे। उनकी माता कमला नेहरू एक अत्यन्त श्रद्धावान् हिन्दू महिला थीं। वे जव कभी कलकत्ता जातीं तो अपनी पुत्री को अपने साथ लेकर वेलूर मठ का अवश्य दर्शन करतीं। इस पृष्ठ भूमि में इन्दिरा जी की तिरुपति यात्रा को किस प्रकार राजनीतिक उद्देश्य से प्रेरित कहा जा सकता है?"

संस्कृति अनुभवगम्य है

संस्कृति के सम्वन्ध में कहा जा सकता है कि हम संस्कृति को अनुभव कर सकते हैं, यद्यपि उसकी परिभाषा नहीं कर सकते। हमारी भावनायें, आदर्श एवं आकांक्षायें अपनी सत्यता रखती हैं, तथा हमारे जीवन में उनका अति महत्वपूर्ण कार्य है, यद्यपि परिभाषा और गणित के नियम-सूत्रों द्वारा वे व्यक्त नहीं की जा सकतीं। हमारी संस्कृति ने हमारे जीवन के सभी क्षेत्रों पर अपनी अमिट छाप लगा दी है। इस प्रकार की अभिव्यक्तियों में हम संस्कृति के तत्व को पहचान सकते हैं। इसका उत्तम उदाहरण पं. जवाहर-लाल नेहरू के जीवन की विशिष्ट घटना है। जव पं. नेहरू की पत्नी का देहान्त विदेश में हुआ तो उनके शरीर का अग्नि संस्कार हुआ, उनकी अवशिष्ट राख भारत में लाकर प्रयाग में गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम में गिराई गई। प० जवाहर लाल ने, जिन्हें इस प्रकार की हिन्दू परम्पराओं में विश्वास नहीं था, ऐसा क्यों किया। यह उनके पुरातन हिन्दू रक्त की पुकार थी, जिसने उन्हें उस राख को गंगा माता को गोद में वहाने के लिए विवश कर दिया। उन्होंने इस सम्वन्ध में स्वयं कहा था कि उनकी शिक्षा एवं प्रशिक्षण सभी विद्रोह कर रहे थे, किन्तु उनके भीतर की किसी चीज ने, किसो ऐसी चीज ने जिसका स्पष्टीकरण नहीं हो सकता, उन्हें उस राख को त्रिवेणी में विसर्जित करने को बाध्य कर दिया।

आवश्यकता इस वात की है कि अति प्राचीन सामाजिक एकात्मता को अतीव शुद्धावस्था में पुनरुज्जीवित किया जाये। हमारा सम्पूर्ण समाज

साक्षात् ईश्वर के रूप में हमारे हृदयों में पुनः प्रतिष्ठित होना चाहिए। वास्तव में यही एकत्व की भावना हमारी प्राचीन संस्कृति का अमर सन्देश रही है। अतः हम वह शुद्ध एकत्व भावना पुनरुज्जीवित्त करें जिसका प्रादुर्भाव इस अनुभूति के द्वारा होता है कि हम सभी इस महान् पवित्र जन्म-भूमि भारतमाता के पुत्र हैं।

हिन्दू राष्ट्र की हमारी कल्पना राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकारों की नहीं, वल्कि वह तत्वतः सांस्कृतिक है। हमारे प्राचीन एवं उदात्त सांस्कृतिक जीवन मूल्यों से उसके प्राणों की रचना हुई है। हमारी संस्कृति का उत्कट नवतारुण्य ही हमारे राष्ट्रीय जीवन की सही दृष्टि हमें प्रदान कर सकता है।

प्राचीन परम्पराओं का अर्थ

जिस प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा आध्यात्मिक परम्पराओं का उल्लेख ऊपर किया गया है, वे क्या हैं, उनका प्रादुर्भाव कब हुआ, और भारत भूखण्ड में रहने वाले कौन लोग हैं, जिन्होंने इन्हें अपना कर एक आदर्श समाज का निर्माण किया, आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनका समाधान इतिहास के पृष्ठ पलटने और प्राचीन साहित्य का अध्ययन करने से हो सकता है। प्रसिद्ध इतिहासकार डा० आर० सी० मजूमदार के विचार इस विषय पर प्रकाश डालते हैं। उनका कहना है :

"अनेक लोगों को यह स्वीकार करने में लज्जा का अनुभव होती है कि इस महान राष्ट्र के असली निवासी हिन्दू हैं। हमें साहस पूर्वक यह स्वीकार करना चाहिए कि यदि भारत को किसी वात पर गर्व है तो वह है इसका हिन्दू इतिहास, हिन्दू सभ्यता। मेरी समझ में नहीं आता कि जब लोग अपने गौरवपूर्ण अतीत एवं संस्कृति की वात करते हैं तब उन्हें यह कहने में क्यों लज्जा आती है कि वह गौरवपूर्ण अतीत और महान संस्कृति हिन्दुओं का अतीत और हिन्दुओं की संस्कृति है।"

थियोसोफी का भारत में प्रचार करने वाली अंग्रेज महिला डा० एनीबेसेन्ट ने भी भारत को हिन्दू राष्ट्र मानते हुए कहा था : "लगभग चालीस वर्ष से अधिक समय तक संसार के महान धर्मों का अध्ययन करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुंची हूं कि कोई भी धर्म ऐसा नहीं है जो हिन्दू धर्म के समान वैज्ञानिक, पूर्ण एवं दार्शनिक हो। इसके सम्वन्ध में तुम जितना अधिक गहराई से समझोगे, उतना ही श्रेष्ठ तुम इसे मानने लगोगे।

"यह समझना भूल नहींहै कि हिन्दुत्व के बिना भारत का कोई भविष्य नहीं। हिन्दुत्व ही वह जमीन है जिसमें भारत की जड़ें गहराई तक

पहुंची हुई हैं। और यदि उस जमीन से अलग कर दिया गया तो वह कटे पेड़ की भांति मुरझा जायेगा। भारत में अनेक जातियां, अनेक धर्म हैं। परन्तु उनमें से कोई भी भारत के अतीत से सम्बद्ध नहीं है और न ही उनके कारण भारत की राष्ट्रीयता कायम है। वे जैसे आये हैं वैसे ही चले जायेंगे। परन्तु यदि हिन्दुत्व नष्ट हो गया तो फिर भारत, भारत नहीं रहेगा। वह तो मात्र भौगोलिक इकाई बनकर रह जायेगा, जिसके साथ उसके उज्ज्वल अतीत की धूमिल स्मृतियां ही जुड़ी होंगी। उसका इतिहास, उसका साहित्य, उसकी कला, उसके स्मारक सभी पर तो हिन्दुत्व अंकित है और हिन्दुओं ने हिन्दुत्व की रक्षा नहीं की तो फिर उसे कौन बचायेगा? यदि भारत माता के पुत्र ही हिन्दू धर्म का पालन नहीं करेंगे तो फिर उनकी रक्षा कौन करेगा? भारत ही भारत की रक्षा कर सकता है और भारत और हिन्दुत्व में कोई अन्तर नहीं, वे पर्यायवाची हैं।"

राजनीतिक स्वार्थ

हिन्दू धर्म और हिन्दू राष्ट्र भारत के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान कराते हैं, परन्तु राजनीतिक नेताओं ने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए उस स्वरूप को विकृत कर उसे एक मनघड़न्त रूप दे दिया है—समूचे राष्ट्र और जाति का प्रतिनिधित्व करने वाले ये शब्द आज संकुचित सम्प्रदायवादी शब्द घोषित कर दिये गये हैं। विभिन्न भाषाओं एवं भिन्न-भिन्न उपासना-पद्धतियों के अनुयायी होते हुए भी भारत के महापुरुषों ने जिस सनातन धर्म के दर्शन किये हैं वह है हिन्दू धर्म, हिन्दुत्व, हिन्दू जीवन-दर्शन और राष्ट्रीयता जिसके कारण यह देश सहस्राब्दियों से बाह्य आक्रमणों का सामना करते हुए भी अपनी सांस्कृतिक धरोहर सुरक्षित रखे हुए है। योगिराज अरविन्द ने ध्यानावस्था में प्रेरणा पाकर कुछ इसी प्रकार का सन्देश राष्ट्र को दिया था। उन्होंने कहा था—

'तुम उठो और सनातन धर्म का उद्धार करो। जब यह कहा जाता है कि भारत का अभ्युत्थान होगा तो यह सनातन धर्म है जिसका उत्थान होगा। जब यह कहा जाता है कि भारत महान होगा तो इसका अर्थ है कि सनातन धर्म महानता प्राप्त करेगा। धर्म को समादृत करने का अर्थ है देश

को सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कराना। भारत का अस्तित्व धर्म के लिए है और धर्म के द्वारा ही भारत का अस्तित्व है। धर्म को गौरव प्राप्त कराने का अर्थ है देश को गौरवशाली वनाना। इस हिन्दू राष्ट्र का जन्म सनातन धर्म के साथ हुआ है और उसी का साथ यह चाहेगा और आगे वढ़ेगा। यदि सनातन धर्म का पतन हुआ तो यह राष्ट्र भी पतन के गर्त में चला जायेगा और यदि सनातन धर्म नष्ट हो गया तो उसके साथ ही राष्ट्र का विनाश भी निश्चित है। यह सनातन धर्म और कुछ नहीं, यह हमारी राष्ट्र भक्ति ही है। यही सन्देश आज मैं तुम्हें दे रहा हूं।"

हिन्दुत्व की ज्योति

सभी धर्मों का आदर करने वाले महात्मा गांधीं ने निःसंकोच भाव से कहा था—

"मैं कट्टर हिन्दू हूं। हमारी विचारधारा, हमारी दृष्टि और हमारे शरीर भी इतने विकृत हो गये हैं कि हम आज हिन्दुत्व से ही इनकार करने लगे हैं। सत्य की सतत खोज करते रहना ही तो हिन्दुत्व है और अगर आज हिन्दुत्व निष्प्राण, निष्क्रिय और अवरुद्ध है तो उसका मात्र कारण है कि हम अशक्त और शिथिल हो गये हैं, और ज्यों ही हमारे अन्दर शक्ति का संचार होगा, उसी क्षण हिन्दुत्व की अभूतपूर्व ज्योति संसार भर में छिटक जायेगी। हिन्दुत्व में ईसाई, मुसलमान और यहूदी को भी आश्रय प्रदान करने की क्षमता है।"

गांधी जी कहते थे—

"भारत के अधिकांश मुसलमान वे हैं, जिन्होंने परिस्थितियों से विवश होकर हिन्दू धर्म छोड़कर इस्लाम धर्म को कबूल किया था। वे आज भी अनेक वातों में हिन्दू ही हैं और स्वतन्त्र, समृद्ध एवं प्रगतिशील भारत में यदि वे अपने नवीन धर्म एवं जीवन पद्धति को पुनः अपना ल तो यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया ही होगी।"

गान्धी जी से अनेक वर्ष पूर्व अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के जन्मदाता सर सैयद अहमद खां ने भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये थे। उन्होंने कहा था—

"हिन्दू और मुस्लिम दोनों जातियों को, जो हिन्दुस्तान में बस रही हैं, मैं हिन्दू नाम से पुकारता हूं।"

स्वर्गीय न्यायविद् श्री छागला ने भी गर्व से कहा था कि वह हिन्दू सन्तान हैं। इसी भावना से उन्होंने अपने मृत शरीर का दाह-संस्कार कराने की वसीयत की थी।

तिलक का कथन

लोकमान्य तिलक के विचार स्पष्ट रूप से सिद्ध करते हैं कि भारत हिन्दुओं का देश है। उनका कथन है:

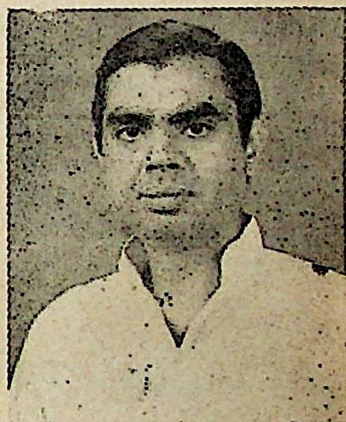
'हिन्दू धर्म हमें नैतिक एवं सामाजिक बन्धनों में बांधता है, इसलिए हमें अपने अतीत से यह शिक्षा लेना चाहिए कि इसे व्यावहारिक रूप कैसे दिया जाये। वनारस वासी हिन्दू उतना ही हिन्दू है, जितना कि मद्रास या वम्बई में रहने वाला हिन्दू। हमारा राष्ट्र महान् था और एक सूत्र में आवद्ध था। यदि हम साम्प्रदायिक मतभेदों को भुलाकर अपनी प्राचीन संस्कृति, वेद, गीता और रामायण पर वल दें तो हम ईश्वर की कृपा से, सभी सम्प्रदायों को संगठित कर एक सशक्त हिन्दू राष्ट्र का निर्माण कर सकेंगे। प्रत्येक हिन्दू की यही महत्वाकांक्षा होनी चाहिए। हमें अपनी विजय और सफलता की प्राप्ति के लिए सभी सम्प्रदायों को एक मंच पर संगठित करना होगा, जिसके द्वारा हिन्दू धर्म का प्रवल एवं केन्द्रीभूत प्रवाह हमारे रक्त में प्रवाहित होता रहे।'

उपरोक्त-उद्धरण इस वात को सिद्ध करते हैं कि भारत के निवासी हिन्दू हैं और हिन्दुत्व ही हमारी संस्कृति एवं हमारी जीवन पद्धति है, और हमारा यह देश उसी दृष्टि से हिन्दू राष्ट्र है। इसमें साम्प्रदायिकता ढूंढ़ना छिद्रान्वेषी दृष्टि का ही दोष है, वास्तविकता का उल्लेख नहीं।



राजनैतिक षड्यंत्र का प्रतिकार

—डॉ० प्रशान्त वेदालंकार—



हंसराज महाविद्यालय में वरिष्ठ प्राध्यापक, वैदिक समाज व्यवस्था और राज्यव्यवस्था तथा वेद में नारी जैसे ग्रन्थों के प्रणेता, सुवक्ता, आपातकाल में १९ मास का कारावास, राजनीति में नैतिक मूल्यों के आग्रही, भारतीयता के प्रति प्रतिवद्ध न होने वालों को मताधिकार से वंचित करने के सुझाव के प्रस्तोता ।

३ सितम्वर १९८१ के समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है कि राज्यसभा में पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में गृह राज्यमन्त्री श्री योगेन्द्र मकवाना ने वताया कि तमिलनाडु में फरवरी १९८१ के वाद २००० हरिजनों ने इस्लाम को अपनाया है। यों एक सर्वेक्षण के अनुसार अब तक लगभग ५ हजार से ऊपर हरिजन मुसलमान वन चुके हैं। सवर्ण हिन्दुओं द्वारा इस्लाम धर्म को स्वीकार किये जाने का कारण यह बताया गया है कि उन्होंने मजार पर यह मन्नत मांगी थी कि यदि उनकी अभीष्ट सिद्धि हो गयी तो वे इस्लाम कबल कर लेंगे। धर्मपरिवर्तन का कार्य केवल तमिलनाडु या दक्षिणी प्रदेशों में ही हो रहा है, यह कहना गलत है। देश के अन्य भागों में भी यह षड्यंत्र चल रहा है।

२९ अप्रैल ८१ के 'टाइम्स आफ इण्डिया' के अनुसार पश्चिम एशिया के अरब देशों विशेषतः जद्दाह, बहरीन, अदन, कुवैत, सनाआ, दुवाई और मस्कत में दलालों द्वारा हरिजन, अनुसूचित जन-जातियों व निम्न वर्गों की लड़कियों का निर्यात कर ६०-७० की उम्र के अरबों के साथ उनका विवाह कर दिया जाता है। विवाह के समय मुसलमान बनाकर बाद में वे उन्हें यहीं छोड़ जाते हैं।

नये पाकिस्तान की तैयारी

आज मुसलमानों का एक वहुत बड़ा वर्ग हिन्दुस्तान के इस्लामीकरण के प्रयत्न में लगा है। ४ सितम्वर के दैनिक हिन्दुस्तान में नवाब छतारी

के पौत्र श्री आनन्द सुमन ने स्वीकार किया है कि २८ फरवरी को हैदरावाद में हुए इस्लामी सम्मेलन की आन्तरिक समिति में भारत के इस्लामीकरण की मांग उठायी गई थी। सऊदी अरव के एक वहुत वड़े उद्योगपति ने वहां वायदा किया कि इसके लिए जितना पैसा चाहिए, भेजूंगा - हम भारत को दारुलइस्लाम देखना चाहते हैं। २८ जुलाई १९८१ के 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में हैदरावाद के उपद्रवों के वारे में कहा गया है कि इन उपद्रवों का आरम्भ यहां हुए जमाते इस्लामी के अखिल भारतीय सम्मेलन से माना जा सकता है, जिसमें देशभर से एक लाख मुसलमान एकत्र हुए थे। इस सम्मेलन में जहां इस्लामीकरण के पक्ष में सैन्योचित अभियान का समर्थन किया गया था, वहाँ मुसलमानों के लिए अलग राज्यकी मांग भी की गयी थी। हैदरावाद में चिपके एक पोस्टर की भाषा देखिए

'अल सलातीन (वादशाहों का वादशाह) खिजरी शाख हाशमी हलीफ हलफनामा सालिस उम अ्रल हलूफ मतबुआ १५ फरवरी, १९८१ कमुद्दत हलफ योम (दिन) १५ फरवरी १९८१ से शुरू होकर २६ मार्च १९८१ तक खतम हो चुकी थी और मैं अल्ला ताला के फजलोकरम से मेरी मुद्दत हलफ में फौत (मौत) नहीं हुआ, वल्कि आज तक जिन्दा सलामत हूं। मैं यानी खलीफा—उल-मुसलमीन सुल्तान अल अल सलातीन खिजरी शाख हाशमी ने हजरत मोहम्मद रसूल अल्ला सलाम-अल्ला अल्लाअव सल्लम के हुकम की तामील में मुसलमानों' को लुटने-पिटने मरने से वचाने और उनकी औरतों को बेइज्जती से वचाने के लिए पहली मर्तवा ९ मई १९८० को रजिस्ट्री रसीद तलव नम्वर २२३५ के जरिया से और दूसरी मर्तवा हलफनामा सालिस उम-अल हरूपमतबुआ १५ फरवरी, १९८१ के जरिए से हकूमते हिन्द से यह मुतालवा किया है कि हकूमते हिन्द मुसलमानो को अलग इलाका दे दे।'

एक अन्य समाचार से यह पता चला कि दंगों के पीछे पाकिस्तानी एजेण्टों का भी हाथ था। हैदरावाद में करीव ४ हजार पाकिस्तानी नागरिक, जिनके पारपत्र की अवधि समाप्त हो चुको है, टिके हुए हैं।

यह सव विदित ही है कि अधिवेशन के लिए हैदरावाद से १० किलोमीटर की दूरी पर स्थित पहाड़ी शरीफ नामक एक बंजर स्थान चुना गया। जमात ने इस स्थान की ९० एकड़ भूमि खरीद ली है, जिसका नाम वादिये हुदा (हिदायत देने वाली घाटी) रखा गया है। सम्मेलन २१ से २३ फरवरी तक चला। अधिवेशन के अन्तिम दिन हिजरी सन् का

समारोह मनाया गया। इसमें मुस्लिम लीग के सुलेमान सेठ सदृश नेता भी सम्मिलित हुए। इस अधिवेशन में दिल्ली विश्वविद्यालय के वौद्धधर्म अध्ययन विभाग के प्रो० किर्मसिंह ने कहा कि औरंगजेव ने वड़े पैमाने पर हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित की, लेकिन शिवाजी ने इस उद्देश्य को पूर्ण न होने दिया। कानपुर के श्री गौरीशंकर एडवोकेट ने कहा कि शिवाजी अंग्रेजों के एजेण्ट थे। चौवीस परगना (पं० बंगाल) के डा० एन० मान-सिंह के अनुसार भारत में मुगलों का युग शान्ति, चैन और हिन्दू-मुस्लिम एकता का युग था। औरंगजेव को हिन्दुओं का शत्रु वताकर मुफ्त में वद-नाम किया गया है। महाराणा प्रताप ने राजपूतों को मुसलमानों के विरुद्ध भड़काया। राजपूतों की अदूरदर्शिता से हिन्दू-मुस्लिम झगड़े हुए। यह सम्पूर्ण वर्णन उस अधिवेशन के उद्देश्य को उजागर करता है।

पैसे की कमी नहीं

१९ जनवरी, १९८१ को कुवैत के 'अरव टाइम्स' में लन्दन स्थित इस्लामिक कल्चरल सण्टर की योजना प्रकाशित हुई है कि पैट्रोडालर से भारत के १२ करोड़ हरिजनों में से ८ करोड़ हरिजनों के धर्म-परिवर्तन का क्रम आरम्भ किया गया है। उसमें लिखा है कि भारत के ८० हिन्दू परिवारों की एक कृषि सम्वन्धी परियोजना के लिए चार लाख रुपए का लालच देकर धर्मान्तरण के लिए तैयार किया गया। इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि मुरादाबाद के पास दो अरवी यूनिवर्सिटियां स्थापित करने के लिए लीविया ने करोड़ों रुपए देने की इच्छा प्रकट की। न्यूयार्क से प्रकाशित 'इंडिया एब्राड' में २२ फरवरी को छपा कि देववन्द में दारुल उलूम के शताब्दी समारोह में अरव देशों के प्रतिनिधि आए और सऊदी अरेविया के प्रतिनिधि श्री शेख अब्दुल्लाह अब्दुल तुन्की ने संस्था को २२ हजार ६०० पौंड (लगभग ५ लाख रु०) दान दिया। इराकी प्रतिनिधि ने भी भारी मात्रा में दान देने की घोषणा की।

जाँच से पता चला है कि इस वर्ष मई और जून के दौरान १४.२८ करोड़ रु० भारत आये। इसमें ६.९० करोड़ रु० अमेरिका से, २.३६ करोड़ रु० पश्चिम जर्मनी से, १.५ करोड़ रु० नीदरलैण्ड से, ९२.८२लाख रु० ब्रिटेन से, १७.७९ लाख रु० रूस से, ११.४३ लाख रु० आस्ट्रेलिया से ८.९६ लाख रु० सऊदी-अरव से तथा ६.११ लाख रु० कुवैत से आया। मीनाक्षीपुरम तथा कुदापुर (मदुराई, जहां ३०० हिन्दू तथा ५० ईसाई परिवारों को मुसलमान बनाया गया है) में पैसे के लालच पर धर्म-परिवर्तन

करने के उपरान्त आज भी लखनऊ और हैदरावाद से मिठाई से लदी कारें पहुंचती हैं। पुदुकोटाह के एक मुस्लिम व्यापारी ने मीनाक्षीपुरम के हरिजन मुसलमानों के लिए कुंआ खुदवाने की खातिर ५० हजार रु० दान दिये।

इतिहास साक्षी है कि अंग्रेज पहले व्यापारी के रूप में भारत आया था। आज समृद्ध अरव और खाड़ी देशों के पूंजीपति वम्वई, कलकत्ता आदि महानगरों में रिजर्व बैंक की स्वीकृति पर अपने बैंक और व्यापार केन्द्र खोल रहे हैं। इसके पीछे उनकी धीरे-धीरे यहाँ छा जाने की योजना स्पष्ट है।

वह वात कम गम्भीर नहीं है कि मीनाक्षीपुरम में हुए धर्म-परिवर्तन के समारोह में अरव के इमाम और श्रीलंका के लोकसभाध्यक्ष भी शामिल थे। इसमें खाड़ी देशों के अन्य लोग भी विद्यमान थे। इन विदेशियों के साथ तमिलनाडु विधान परिषद् के सदस्य श्री शाडुल हमीद (जो तमिलनाडु मुस्लिमलीग के कोषाध्यक्ष हैं) तथा अब्दुल समद संसद् सदस्य भी विद्यमान थे।

राजस्थान और बिहार में

इसी प्रसंग में राजस्थान में २३ मई १९८१ को हुए विशाल अन्तर्राष्ट्रीय मुस्लिम सम्मेलन का उल्लेख करना भी आवश्यक है। यह जयपुर बीकानेर मार्ग पर लक्ष्मणगढ़ कस्बे में जमाते इस्लामी की ओर से आयोजित हुआ था। इस पर ५० लाख से अधिक रुपए व्यय हुए लगभग १ लाख मुसलमान इसमें सम्मिलित हुए। २० अन्य मुस्लिम देशों के १५०० प्रतिनिधि भी इसमें आए। इसका उद्देश्य दीने-इलाही का प्रचार था। यह कार्यक्रम विना पोस्टरों व अन्य प्रचार सामग्री के किया गया। सारी कार्यवाही गुप्त थी। पत्रकारों तक को इसका पता न था। कस्बे वालों को इसमें खुली दावत थी। इस कस्बे के पास ही २ लाख आवादी का सीकर नगर है, जहां पानी की भारी दिक्कत है, पर इस सम्मेलन में १ लाख लोगों के लिए २४ घण्टे खुला पानी दिया जा रहा था। भयंकर वात यह है कि इसमें तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री जगन्नाथ पहाड़िया तथा अन्य कांग्रेस (इ) के मुस्लिम विधायक भी शामिल थे।

विहार सरकार की गुप्तचर शाखा ने भारत सरकार के पास अपनी अन्तिम रपट भेजी है, जिसके अनुसार अगस्त महीने के दूसरे सप्ताह में पांच दिन के लिए कुवैत के दो शेख सैद अलख अल जिया और रशीद अल करीम वहां पहली वार आए। विहार और उड़ीसा के इमारत शरिया

अधिकारी मौलाना मुजहिद्दुल इस्लाम काजी द्वारा दो साल पहले दिये गए दावतनामे के आधार पर यह यात्रा हुई थी। फुलवारी शरीफ में इमारत शरिया नामक धार्मिक संस्था आजकल विहार और उड़ीसा के अल्पसंख्यक मुसलमानों पर धार्मिक व राजनीतिक प्रभाव डालती है। दो वर्ष पूर्व शरिया के मौलाना कुवैत गए थे। उन्होंने फुलवारी शरीफ पटना में अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामिक सांस्कृतिक केन्द्र की प्रतिष्ठा के लिए मस्जिदों के विश्वसंघ से डेढ़ करोड़ रुपयों की सहायता मांगी थी। इस संघ ने सहायता का वचन दिया। कुवैत से लौटकर शरिया के अध्यक्ष ने फुलवारी शरीफ में खास महत्त्व भूमि देने की मांग की थी। स्थानीय हरिजनों ने कहा कि यह दलित वालिकाओं के हाईस्कूल एवं पददलित श्रेणियों के लिए पंचायतघर के निमित्त मिलनी चाहिए, फिर भी वह जमीन शरिया को मिली। हरिजनों ने निचली अदालत में अर्जी भी दी, पर सुनवाई नहीं हुई। यहाँ पर पाकिस्तानी घुसपैठिये भी आ रहे हैं। पटना की अपनी यात्रा में कुवैत के शेखों ने पहल की। १२ पुरानी मस्जिदों को जीर्णोद्धार के लिए वड़ी धनराशि भी दी। यह राशि ५० लाख रुपए वताई जाती है। कुवैत के शेखों ने शरिया के स्थानीय अधिकारियों को कुवैत आने की दावत दी है और उन डेढ़ करोड़ रुपए देने का वचन दिया है।

स्पष्ट है कि १९७३ में जिस पान इस्लामिक संघ की स्थापना हुई थी, उसका कार्य वढ़ रहा है। ५२ मुस्लिम देशों में से ४२ देश इस्लाम के पुनरुत्थान के कार्य में जी जान से जुटे हैं। मुस्लिम गजेटियर के अनुसार संसार में मुसलमानों की कुल संख्या नवासी (८९) करोड़ है। ३७ देशों में वे ५० प्रतिशत से अधिक हैं। ५१ प्रतिशत मुस्लिम आवादी वाला मलेशिया भी अल्पसंख्यकों को दबाकर रखता है। यदि यह राजनीतिक उद्देश्य न होता तो अरब धन द्वारा गरीव मुसलमानों का उत्थान किया जाता, न कि हरिजनों व निर्धन हिन्दुओं को मुसलमान बनाया जाता।

इस प्रकार स्पष्ट है कि विदेशों से आ रह। विशाल धनराशि के वल पर हिन्दुस्तान में मुसलमान बनाने का मानो एक कारखाना खुल गया है। हमें इस षड्यन्त्र से वहुत सावधान रहना है। मैंने अपने इस लेख में ईसाई बनाने के प्रयत्नों का उल्लेख नहीं किया। पर हमारे देश में जो विशाल धनराशि धर्म-परिवर्तन के लिए आ रही है, उन आंकड़ों से उनके प्रयत्नों का भी पता चल जाएगा। हमारे देश के उत्तरपूर्वी राज्य उनके कुचक्रों से भारत से पथक् होने के प्रयत्नों में लगे हुए हैं। यहां सारे देश में ही मिशनरी स्कूल स्थापित कर यहां के वच्चों को भारतीयता से दूर रखने के प्रयत्न हो रहे हैं, इस तथ्य से आंख नहीं मोड़ी जा सकती। १९४७ तक

७० लाख व्यक्ति ईसाई थे, १६८० में इनकी संख्या २ करोड़ हो चुकी है।

पहले मुसलमान केवल जोर-जवर्दस्ती और तलवार के वल पर हिन्दू को मुसलमान बनाता था। तव कोई वीर हिन्दू उसका मुकावला भी करता था और अपनी कुर्वानी से हिन्दुओं की आंखें खोल जाता था। वीर हकीकतराय, गुरुगोविन्द सिंह और उनके दोनों वच्चे, महाराणा प्रताप, शिवाजी, वीर वन्दा वैरागी, भाई मतिदास—किस किसका नाम गिनाएं। ऐसे धर्मवीरों से इतिहास भरा पड़ा है।

किन्तु आज जिस ढंग से धर्म परिवर्तन हो रहा है, उसमें किसी ऐतिहासिक वीर की वीरता प्रकट करने की सम्भावना वहुत कम रह गई है।

वर्षों पहले पराधीनता के दिनों में एक अध्यापक ने छात्रों से पूछा—'आप वता सकते हैं कि हमारे देश के लिए मुसलमान शासक अच्छे थे या आजकल के ईसाई शासक। कक्षा के अधिकांश छात्रों ने उत्तर दिया—'मुसलमान शासक वहुत बुरे और अत्याचारी थे, अंग्रेज वैसे नहीं हैं। एक छात्र ने वहुसंख्यक छात्रों की राय का विरोध करते हुए कहा—"वैसे तो भारत के लिए दोनों ही बुरे थे परन्तु अंग्रेज कहीं अधिक बुरे हैं?" अध्यापक ने पूछा—"ऐसा क्यों?" छात्र ने उत्तर दिया—मुसलमानों के अत्याचारों और जिहाद की तलवार उन्हें सदा सामने लटकती दिखाई देती थी, परन्तु अंग्रेज शासक 'मुंह में राम वगल में छुरी' की कहावत के अनुरूप हमारी संस्कृति और धर्म के लिए ज्यादा खतरा बन रहे हैं। हमने मुस्लिम शासकों और अपने बीच दीवार खड़ी कर उनके प्रभाव व धर्म-संस्कृति से अपनी संस्कृति और धर्म को वचाने की कोशिश की थी। आज मैकाले की भविष्यवाणी के अनुरूप हम अपनी संस्कृति, भाषा, वेशभूषा सभी कुछ भूल चुके हैं। आज यदि कोई अध्यापक अपने छात्र से पूछे कि मुस्लिम, अंग्रेज और स्वतन्त्रता प्राप्ति के वाद के शासकों में कौन से शासक देश की एकता के लिए हितकर रहे हैं, तो कोई भी मेधावी और प्रबुद्ध छात्र विना किसी झिझक के उत्तर दे सकता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त के शासकों ने धर्म निरपेक्षता के नाम पर देश में एक ऐसा कलुषित वातावरण उत्पन्न किया कि हिन्दुओं को धर्म के प्रति आस्था मिट गयी। धार्मिक कहलाने में उन्हें लज्जा का अनुभव होने लगा। धर्म और जाति के लिए मर मिटने की वात तो दूर, अपने को धार्मिक कहलाने में उन्हें यह भय हो गया कि कहीं वे संकीर्ण और दकियानूसी न कहलाएं?

राजनीतिक उद्देश्य

मुसलमान धार्मिक वृत्ति से धर्मपरिवर्तन का अभियान न चलाकर किसी षड्यन्त्र से यह कार्य कर रहे हैं। निरीह, दलित व निर्धन वर्ग की मजबूरी का लाभ उठाकर उनकी आस्था पर चोट करना, लालच देकर अपने सम्प्रदाय में दीक्षित करना एक अधार्मिक कृत्य है। इसकी जितनी निन्दा की जाय, कम है। किन्तु मुझे इसके लिए राजनीति के उन कर्णधारों पर अधिक आक्रोश है, जो मुसलमानों या ईसाइयों का मत प्राप्त करने के लिए तुष्टीकरण की नीति अपनाए हुए हैं।

अलग सिविल कोड होने, विवाह और तलाक में आसानी होने और परिवार नियोजन के विरोधी होने के कारण मुसलमानों की स्वाभाविक संख्यावृद्धि हिन्दुओं से कहीं अधिक है। यदि यही स्थिति रही तो आगामी ४०-५० वर्षों में उत्तर प्रदेश के ११ जिलों—मेरठ से वस्ती तक, असम के तीन जिलों—कामरूप, नौ गांव और गोल पाड़ा; विहार के पूर्णिया जिले और बंगाल के ७ जिलों—कूच बिहार से २४ परगना तक मुस्लिम-वहुल क्षेत्र तैयार हो जाएगा। मुर्शिदाबाद मुस्लिम वहुल जिला बन चुका है। मुसलमानों की कूटनीति सर्वथा स्पष्ट है। जिस समय पाकिस्तान, बंगला देश और हिन्दुस्तान के मुसलमानों की संख्या हिन्दुओं से अधिक हो जाएगी, तभी वे इस सारे भूभाग को एक महासंघ घोषित कर उस महासंघ को इस्लामी राष्ट्र घोषित कर देंगे। यों वे अब भी उतावले हैं। कभी हरिजनों, कभी सिक्खों और कभी ईसाइयों के साथ मिलकर वे सम्पूर्ण राजनीति पर छा जाना चाहते हैं। गुजरात में मुसलमान, हरिजन और ख्रिस्ती मिलकर राज्य पर आधिपत्य करने के चक्कर में हैं। हमें उनके इस षड़यन्त्र को समझना होगा। मुसलमानों के लिए एक पत्नी का कानून लागू होना चाहिए। पाकिस्तान में प्रायः एक पत्नी का ही प्रचलन है। परिवार नियोजन का नियम भी सभी पर समान रूप से हो। हिन्दू कहे—हम दो हमारे दो और मुसलमान कहें हम पांच हमारे पन्द्रह, तो इस असमानता का मुकावला कैसे होगा? १९४७ के ढाई करोड़ मुस्लमान अब ९ करोड़ हो चुके हैं। सामाजिक दृष्टि से भी एक पत्नी का नियम आवश्यक है। मुसलमान स्त्रियां दबे स्वर से यही मांग करती हैं।

मुझे हिन्दू धर्म के उन ठेकेदारों पर बहुत बडा आक्रोश है जो हिन्दू धर्म में विद्यमान भेद और ऊंच-नीच के भाव को समाप्त करने के लिए कोई कदम नहीं उठा सके। 'इण्डियन एक्सप्रेस' के संवाददाताओं ने

मीनाक्षीपुरम के हरिजनों द्वारा किए गए धर्म परिवर्तन के निम्नलिखित कारण वताए थे—

(१) सवर्ण हिन्दू क्षेत्रों में जाते हुए वे चप्पल नहीं पहन सकते।

(२) कमीज, कुर्ता और कमर से ऊपर तक के भाग में कोई वस्त्र नहीं पहन सकते।

(३) चाय की दूकान में वे सवर्णों के साथ नही बैठ सकते। चाय पीने या खाने-पीने के अन्य वर्तन सवर्णों से पृथक् होते हैं और उन पर निशान लगा होता है। चाय पीने के बाद उनके लिए वर्तन धोना आवश्यक है।

(४) भूमिहीन खेतिहर मजदूर होने से वे अपने मालिक सवर्ण हिन्दू जमींदारों से इस भेद-भाव का विरोध नहीं कर सकते।

(५) हिन्दू धर्म सवको एक समान नहीं समझता। थेवरों से आका हरिजन लड़की के साथ हुए प्रेम पर संघर्ष तथा पुलिस का उनके प्रति दुर्व्यवहार भी यही वताता है कि उन पर अत्याचार हो रहे हैं।

इसके राजनीतिक दुष्परिणाम भी हुए हैं। हरिजन नेताओं ने मुसलमानों के साथ मिलकर चुनावों में मत प्राप्त करने के लिए एक संघ वनाया है, कुछ हरिजन हिन्दू धर्म पर छाए संकट को देखकर उसका अनुचित लाभ उठाने लगे हैं। यदि हमारी इन मांगों को न माना जाय तो हम मुसलमान भी हो सकते हैं। यह धमकी देकर वे स्थिति का अनुचित लाभ उठा रहे हैं।

ये सव न केवल कटु यथार्थ हैं, वरन् हिन्दू धर्म पर कलंक हैं। आज समय आ गया है कि हम हिन्दू धर्म के इस कलंक को धो डालें। हमें गाँव-गाँव में जाकर उन्हें प्रत्येक कुएं से पानी लेने के लिए आन्दोलन चलाना होगा। प्रत्येक मन्दिर का द्वार उनके लिए खुलवाना होगा। आज सचमुच दयानन्द, विवेकानन्द और गांधी की याद आती है, जो आकर अस्पृश्यता के विरुद्ध एक महान् क्रान्ति जगा सके।

मेरी पाकिस्तान यात्रा

मैं गत वर्ष २२ से २६ सितम्वर १९८० को पाकिस्तान गया था। पाकिस्तान के राजनीतिज्ञों, पत्रकारों व प्रबुद्ध नागरिकों ने एक प्रश्न उपस्थित किया—आपके देश में हिन्दू-मुसलमानों का इतना झगड़ा क्यों होता है?

यह उल्लेखनीय है कि तभी मुरादाबाद, अलीगढ़, इलाहाबाद आदि में हिन्दू-मुस्लिम झगड़े हो कर चुके थे। उन्होंने यह भी कहा कि आपके यहां कैसी धर्म निरपेक्षता है, कोई वर्ष ऐसा नही जाता, जब आपके यहां हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष न होता हो, और अनेक लोग न मरते हों। हमारे देश में भी हिन्दू हैं, पर हमारे यहां आज तक एक भी साम्प्रदायिक झगड़ा नहीं हुआ। उन्होंने बताया कि मीरपुर, सक्खर तथा सिन्ध के कुछ अन्य जिलों में विशेष तौर पर अमरकोट तहसील के नवाब शाह नामक स्थान पर अधिकतर हिन्दू हैं। किसी-किसी क्षेत्र में तो ६० से ७० प्रतिशत तक हिन्दू हैं। पर इन हिन्दुओं के साथ हमारा झगड़ा कभी नहीं हुआ। वहां के नेताओं ने हम पर यह प्रभाव डालने की कोशिश की कि हम हिन्दुओं को बड़े प्रेम से रखते हैं। वे यह बताना भूल गए कि १९४७ में प० पाकिस्तान में २२ प्रतिशत हिन्दू थे, अब उनकी संस्था कुल २.२ प्रतिशत है। बंगलादेश में पहले ३३ प्रतिशत हिन्दू थे, अब वहां कुल १५ प्रतिशत हैं। वहां हिन्दुओं को मताधिकार नहीं है। सभी अल्पसंख्यक दूसरे दर्जे के नागरिक हैं। सामाजिक स्तर पर वे प्रायः मुसलमानों से हीन हैं, अतः वे पृथक् ही रहते है। न वे व्यापार में आगे हैं, न वे सरकारी नौकरियों में प्रतिद्वन्द्वी हैं। ऐसी स्थिति में उनके साथ संघर्ष का कोई कारण ही नहीं है।

मताधिकार क्यों

आखिर धर्म-निरपेक्षता का अर्थ क्या है ? सभी धर्मावलम्बियों को मतदान का अधिकार या विभिन्न सम्प्रदायों में प्रेम और पारस्परिक सद्भाव ? यदि मतदान का अधिकार मिलने पर कुछ मुस्लिम नेता अपनी नेतागिरी के लिए हिन्दुओं से संघर्ष आवश्यक मानते हैं, और विभिन्न दल भी पारस्परिक संघर्ष से ही किसी धर्म-विशेष के सारे मत पाने के लालच में रहते हैं, तो धर्म निरपेक्षता के स्वरूप के सम्बन्ध में पुनर्विचार करना होगा। गत ३४ वर्षों का अनुभव यह है कि मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यकों को मतदान का अधिकार देने का परिणाम पारस्परिक कलह है, तो संविधान में यह व्यवस्था करनी होगी कि इस देश में सभी धर्मावलम्बी अपना विकास तो कर सकते हैं, पर अल्पसंख्यकों के मतदान के अधिकार पर पुनर्विचार करना होगा। इनके कुछ प्रतिनिधि वहां रहकर प्रतिनिधित्व कर सकते हैं।

मेरे इस विचार की पुष्टि तव हुई जव मुझे जून १९८१ के एक उप-चुनाव में वरेली जाना पड़ा। वहां सवा लाख के लगभग मुस्लिम मतदाता हैं, अतः इन्दिरा कांग्रेस ने वहां मुसलमानों के मत प्राप्त करने के लिए श्रीमती आविदा बेगम को खड़ा किया। विचित्र वातावरण था। अन्य दल, जिनके प्रत्याशी हिन्दू थे, मुस्लिम मुहल्लों में जाने की हिम्मत ही न करते थे, जव कि मुसलमान कार्यकर्ता हिन्दुओं के मुहल्लों में बिना झिझक आकर अपने प्रत्याशी का प्रचार करते थे। यह कहना गलत होगा कि श्रीमती आविदा की विजय इन्दिरा कांग्रेस के प्रभाव के कारण हुई। १९८० में इन्दिरा कांग्रेस की जवर्दस्त हवा थी, पर वहां लोकदल की विजय केवल इसलिए हुई थी कि लोकदल का प्रत्याशी मुसलमान था।

मुसलमान साम्प्रदायिक मनोवत्ति से मतदान करें और हिन्दू धर्म-निरपेक्षता के नाम पर स्वयं ही कटता रहे, यह अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारने जैसा है। मानो श्रीमती आबिदा बेगम को विजयी वनाने के लिए ही अनेक हिन्दू प्रत्याशी खड़े हो गए। इसी मनोवृत्ति ने हिन्दुओं को कमजोर किया है। जनता पार्टी के शासन काल में मुझ से एक मुसलमान संसद् सदस्य से कहा था कि इस वात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि सरकार किसकी है? कोई भी सरकार हो, संसद् में मुसलमानों के हितों का संर-क्षण करने वाले ७० के लगभग सदस्य अवश्य रहेंगे। मुसलमानों के लिए मुसलमान पहले है, दल या देश वाद में, जव कि हिन्दुओं के लिए अपने की काट पहले है।

मुसलमानों के या अन्य अल्पसंख्यकों के मताधिकार पर जव मैं रोक की मांग करता हूं, तव मेरे मनमें किसी संकीर्णता की भावना नहीं होती। स्मरण रखिए, मेरी संस्कृति 'माता भूमिः का पुत्रोऽहम्' पाठ पढ़ाती है —यह सारी धरती मेरी माँ है और मैं उसका पुत्र हूं। इस पृथ्वी पर उत्पन्न प्रत्येक प्राणी मेरा भाई है। मेरा धर्म मुझे 'वसुधैव कुटुम्वकम्' की शिक्षा देता है।

अन्त में मेरा मन्तव्य स्पष्ट है। धर्मान्तरण का राजनीतिक फलि-तार्थ है इस देश को इस्लाम के रंग में रंगने का कुचक्र। हमें इस कुचक्र के निवारण के लिए निम्न प्रयास करने हैं—

(१) उपेक्षित और दलित वर्ग के उत्थान के लिए प्रयत्न। हिन्दुओं की संकीर्णता पर कुठाराघात।

(२) देश के प्रति निष्ठा तथा मुसलमानों व ईसाइयों के मताधिकार पर रोक।

ये दोनों ही आन्दोलन चलाने वहुत कठिन हैं, पर जिनमें संकल्प है, देश के प्रति प्रेम है, भविष्य में एक विशाल हिन्दू संस्कृति के प्रसार की ललक है, उनके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। यदि हमने ये आन्दोलन शीघ्र प्रारम्भ न किए तो हमें पछताना होगा। कैसी विडम्वना है—

हमारे फूल, हमारा चमन, हमारी ही बहार,
हमीं को जगह नहीं मिलती है आशियाने में।



हमारा लक्ष्य

हमने सम्पूर्ण राष्ट्र की सेवा का व्रत लिया है। सभी देशवासी हमारे वान्धव हैं। जव तक इन सभो वन्धुओं को भारतमाता के सपूत होने का सच्चा गौरव प्रदान नहीं करा देंगे, हम चुप नहीं बैठेंगे। हम भारतमाता को सही अर्थों में सुजला-सुफला वनकर रहेंगे। यह दशप्रहरण-धारिणी दुर्गा वन कर असुरों का संहार करेगी, लक्ष्मी वन कर जन-जन को समृद्धि देगी और सरस्वती वनकर अज्ञानान्धकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलायेगी। हिन्द महासागर और हिमालय से परिवेष्टित भरतखंड में जव तक एकरसता, कर्मठता, समानता, सम्पन्नता, ज्ञानवत्ता, सुख और शान्ति की सप्त जान्हवी का पुण्य प्रवाह नहीं ला पाते, हमारा भगीरथ तप पूरा नहीं होगा।

—स्व० श्री दीनदयाल उपाध्याय

राजनीतिज्ञों के राष्ट्रवाद का प्रतीक



शहंशाह अकबर

हिन्दुओं के राष्ट्रवाद का प्रतीक



महाराणा प्रताप

हिन्दूधर्म की विलक्षणता

—श्री वैद्य गुरुदत्त—

(यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार हिन्दी में सबसे अधिक लोकप्रिय उपन्यासकार)

हिन्दू धर्म के स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हुए वताया गया है कि वैदिक विचार धारा अर्थात् संस्कृति के आधार पर वनी आचार-संहिता को मानने वालों को हिन्दू कहते हैं।

हिन्दुओं में जो विभिन्नता दिखाई देती है, वह सामान्य धर्मों में ही है। सामान्य धर्मों में व्यक्ति-व्यक्ति, स्थान-स्थान, परिस्थिति और काल के अनुसार भेद होता है। हिन्दू समाज में ऐक्य इसके तात्त्विक विचारों और उन विचारों से स्रवित सनातन धर्मों के कारण है। तात्त्विक विचार को संस्कृति कहा गया है और उसका आधार वैदिक शास्त्रों को माना गया है।

एक विचार यह भी प्रकट किया जाता है कि तत्त्व को दृष्टि से सब बड़े-बड़े मजहव समान हैं। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, इसाई तथा अन्य समुदायों में तात्त्विक ऐक्य है। इस कारण इनमें वैमनस्य अनुचित है।

यह माना जाता है कि मुसलमानों के काल में गुरु नानक, दादू, कवीर इत्यादि गुरु-जन यही कहते रहे हैं। उनके उपरान्त ब्रह्मसमाज के प्रवर्तक राजा राममोहनराय भी यही कहते प्रतीत होते हैं। वर्तमान सभी हिन्दू राजनीतिक नेता यही कहते हुए सुने जाते हैं और आज भी अधिकांश राजनीतिक नेता यही कहकर भारत के समाज में ऐक्य निर्माण करने का यत्न कर रहे हैं।

किन्तु हमारी दृष्टि में इन सव के कथन में आंशिक सच्चाई है। यह आंशिक समानता प्राणी और मनुष्य होने के नाते है।

कितनी समानता, कितनी असमानता

हम सव प्राणी हैं। इस नाते हम में समानता उन लक्षणों के कारण है जो जीवात्मा के हैं। जीवात्मा सव में हैं। इस कारण उसके लक्षण भी

सबमें है ।

न्याय दर्शन में जीवात्मा के जो लक्षण बताय हैं वे इस प्रकार हैं— १. इच्छा, २. द्वेष, ३. सुख-दुःख, ४. प्रयत्न, ५. चेतना। ये लक्षण सब जीवधारियों में समान रूप से हैं। इन लक्षणों के अनुरूप कभी कभी मनुष्यों के मजहबों में भी समानता पायी जाती है। उन विषयों में समानता होनी स्वाभाविक है।

मनुष्य होने के नाते जीवात्मा के लक्षणों के अतिरिक्त भी कुछ लक्षण हममें देखे जाते हैं। उदाहरण के रूप में दया, उदारता, सहानुभूति—प्रत्येक मानव समुदाय में इन लक्षणों का समान रूप में होना पाया जाता है।

परन्तु ये उन मजहबों के तात्त्विक लक्षण नहीं जिन समुदायों के विषय में मध्यकालीन हिन्दू सन्त एवं गुरु-जन कहते रहे हैं। हमारे कहने का अभिप्राय यह है कि मुसलमान, ईसाई, यहूदी इत्यादि समुदायों का संगठन न तो जीवात्मा के लक्षणों के आधार पर किया गया है और न ही मानवी लक्षणों के आधार पर !

समुदायों के विषय में विचार करते हुए उनके संगठन के आधार पर हमारे जो विचार हैं, उन्हें ही हम देखेंगे ! उदाहरण के रूप में इस्लाम का संगठन सूत्र है—"ला इलाह इल्लिलाह मुहम्मद रसूलिल्लाह"। अर्थात् परमात्मा एक है और मुहम्मद उसका रसूल है। इसाई समुदाय का संगठन सूत्र है कि यीशु मसीह मानवों के कल्याण के लिए सूली पर चढ़ गया है। इसी प्रकार यहूदियों में अब्राहम तथा मूसा को पथ प्रदर्शक माना जाता है।

सर्व-मत-समन्वय करने के इच्छुक लोग चाहते हैं कि सब मतों के प्रवर्तकों का समान रूप में आदर किया जाए। यह उचित होते हुए भी विभिन्न मतों वाले इस बात को नहीं मानते। वे अपने मत के प्रवर्तक के अतिरिक्त किसी दूसरे मत के प्रवर्तक को मान्यता नहीं देते। परिणामस्वरूप सर्व-मत-समन्वय वाले कभी भी सफल नहीं हुए।

अतः यह कहना न तो ठीक है कि सब समुदाय समान हैं और न ही यह कि सबकी अच्छाइयों को ग्रहण किया जाए। सब मत समान नहीं हैं। तदपि सबमें कुछ-न-कुछ श्रेष्ठ बातें हैं। परन्तु ये विभिन्न मतावलम्बी तो मतों की असमानता को मुख्य मानते हैं और सबमें सांझी श्रेष्ठ बात को गौण मानते हैं। अतः उन मतों का अस्तित्व रहते हुए भिन्नता प्रमुख बनी रहेगी। सबसे प्रमुख भिन्नता उन मतों में किसी न किसी मानव प्रवर्तक का

माना जाना है। उन प्रवर्तकों के वने रहने से मतैक्य नहीं हो सकता।

इस्लाम विना महम्मद साहव के और ईसाइयत विना हजरत ईसा के विचारातीत है।

हिन्दुओं में भी मध्य काल में कुछ गुरु तथा मत-प्रवर्तक हुए हैं। जैसे बौद्ध मत के गौतम बुद्ध, जैन मत के तीर्थंकर, दादू एवं कवीर, नानक इत्यादि। ये सव भी उसी पद पर माने जाते हैं जिस पर मुसलमानों और ईसाइयों के मुहम्मद और यीशु मसीह माने जाते हैं।

जैसा कि हमने कहा है कि इन सव मतों में श्रेष्ठ गुण भी हैं; परन्तु जव तक इनके प्रवर्त्तक को निर्भ्रान्त माना जाता रहेगा, ये मत एक नहीं हो सकेंगे। कारण यह है कि श्रेष्ठ वातों में समान होते हुए भी इन प्रवर्त्तकों की अन्य कई वातें ऐसी हैं जो एक दूसरे से भिन्न हैं। यही कारण है कि जव-जव भी सर्व-मत-समन्वय का प्रयत्न किया गया, वह असफल हुआ है।

हिन्दूधर्म की विलक्षणता

हिन्दू धर्म इन सबसे विलक्षण हैं। यह किसी प्रकार से कोई मत नहीं है। इसका कोई मानवी गुरु नहीं है। सनातन धर्मों के अतिरिक्त इसका कोई अपरिवर्तनशील व्यवहार नहीं है। इसके सनातन नियम भी इसलिए मान्य नहीं क्योंकि ये किसी व्यक्ति विशेष द्वारा कहे गए हैं, प्रत्युत इस कारण मान्य हैं क्योंकि वे मानव कल्याण के लिए हैं।

मजहव और रिलिजन का पर्याय शब्द है मत ! मत के लक्षण करते हुए डा० राधा कृष्णन कहते हैं—

"यह वस्तुस्थिति है कि कोई मजहब (मत) प्रतीकवाद से बच नहीं सकता। मूर्तियां, सलीब, रीतिरिवाज और विश्वास पंथों में अवश्यम्भावी हैं। मजहब द्वारा इनका प्रयोग लोगों में विश्वास को दृढ़ करने के लिए है, परन्तु जब वे प्रतीक विश्वास से भी अधिक महत्व पा जाते हैं तब हम रूढ़ियों में जा पहुंचते हैं।"

मजहब ऐसा अनुभव है जिसे सच्चाई, सौन्दर्य अथवा नेकी (सत्यं शिवं सुन्दरम्) के साथ भ्रमित नहीं किया जा सकता। यह एक उन्मुक्त जीवन है जो इन सब से ऊपर है—मजहब सेवा-भाव से अधिक भय का भाव है। यह नैतिकता से अधिक पवित्रता है—इसमें हम उसकी पूजा

नहीं करते जिसकी हम कर सकते हैं, वरन् उसकी करते हैं जिसको हम समझ नहीं सकते। (कल्चरल हैरिटेज आफ इंडिया, पृष्ठ ३१, भूमिका)

हिन्दू धर्म ऐसा नहीं है।

हिन्दू धर्म—निष्कर्ष

हिन्दू धर्म में प्रतीक को गौण माना जाता है। किसी मूर्ति, तिलक, छाप इत्यादि को मानते हुए भी उसे हिन्दू धर्म का अनिवार्य अंग नहीं माना गया। हिन्दू धर्म में 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' को धर्म का अनिवार्य अंग माना है, परन्तु डाक्टर राधाकृष्णन के कथनानुसार मजहब इससे पृथक् है।

यह ठीक है कि हिन्दू धर्म में आचार-संहिता का स्रोत वेद माने जाते हैं, परन्तु वेद मनुष्य-निर्मित ग्रंथ नहीं हैं। इसके अतिरिक्त वेद का अर्थ ज्ञान भी है। अर्थात् हिन्दू धर्म का स्रोत ज्ञान है। इसको ऐसा मानते हुए ही वैदिक दर्शन शास्त्रों की रचना की गयी है। दर्शन युक्ति से ही वैदिक मान्यताओं को सिद्ध करते हैं।

हिन्दू धर्म में सनातन (अपरिवर्तनशील) आचार संहिता में दो धर्म ऐसे हैं जिनके होते हुए यह सार्वभौमिक धर्म का स्थान प्राप्त कर सकता है। वे दो आचार संहितायें (धर्म) हैं—धीः और विद्या। धीः का अर्थ है बुद्धि को विकास देना और अपने व्यवहार में पथ-प्रदर्शक मानना। इसी प्रकार विद्या का अर्थ है तात्त्विक ज्ञान को प्राप्त करना और उसके अनुसार व्यवहार का निर्माण करना।

इसका यह अर्थ निकलता है कि सामान्य धर्मों में जब भी और जहां भी जो व्यवहार अयुक्ति-संगत अथवा अज्ञानतापूर्ण दिखायी दे उसे छोड़ देना चाहिए। क्योंकि कोई भी व्यवहार सनातन (अपरिवर्तनशील) दस धर्मों के विरुद्ध नहीं हो सकता और बुद्धि तथा विद्या सनातन धर्म हैं।

यही कारण है कि हिन्दू समाज में अनेक मजहब हैं। व्यवहार तथा उसके प्रतीक भी अनेक हैं। परन्तु इस अनेकता से हिन्दू समाज में झगड़ा नहीं होता। कोई तिलक लगाए अथवा न लगाए, कोई किस प्रकार का तिलक लगाए अथवा कोई शिव की उपासना करे अथवा देवी भगवती दुर्गा की आराधना करे अथवा किसी भी देवी-देवता की उपासना न करे, इससे वह हिन्दू समाज से बाहर नहीं हो जाता। हां, उसके लिए सनातन धर्मों को मानना आवश्यक है। इन धर्मों में बुद्धि और विद्या की विशेष

महत्ता है। यह अनेकता में एकता हिन्दू समुदाय के अतिरिक्त किसी अन्य में दिखायी नहीं देती।

यही हिन्दू धर्म की विशेषता है। एक हिन्दू इसके मूल तत्वों पर संदेह कर सकता है और युक्ति से उनके सत्य होने पर ही उनको मान सकता है। इसका अभिप्राय यह भी है कि हिन्दू समाज के मूल तात्विक आधार ज्ञान और बुद्धि से सिद्ध किए जा सकते हैं।

प्रश्न उपस्थित होता है कि जैन और वौद्ध मतावलम्वियों को हिन्दू माना जाए अथवा न माना जाय ?

जहां तक सनातन आचार-संहिता का सम्वन्ध है, जैन और वौद्ध दोनों मत वही आचारसंहिता मानते हैं जो हिन्दू मानते हैं। जैन तो अपने आदि गुरु ऋषभ सेन को वेदोक्त ऋषि मानते हैं। वौद्ध मतावलम्वी महात्मा बुद्ध को अपना प्रवर्तक मानते हुए भी अपने सिद्धांतों को बुद्धि और ज्ञान का विषय मानते हैं। वे केवल इसे विश्वास का विषय नहीं मानते।

इस कारण हम समझते हैं कि मूल रूप में वौद्ध और जैन हिन्दू समुदाय का अंग हैं। हिन्दू आर्य आचार-संहिता में उनका विश्वास हिन्दुओं से कम नहीं हैं। अन्तर है तो इस विषय में कि वे परमात्मा और आत्मा को उस रूप में नहीं मानते जिस रूप में कुछ अन्य हिन्दू मानते हैं। इस कारण हम इन दोनों मतों को हिन्दू समाज का अंग ही मानते हैं।

संक्षेप में, हिन्दू धर्म के विषय में कहा जा सकता है कि यह एक विचार-सारिणी (सस्कृति) से प्रेरित आचार-संहिता है। आचार-संहिता में सनातन आचार-संहिता (सनातन धर्म) ही व्यवहार का अनिवार्य अंग हैं।

ये आचार हैं : धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध।

गुरु, पीर, पैगम्वर, देवी, देवता, तिलक, छाप, चोटी, यज्ञोपवीत इत्यादि वातें भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। इस भिन्नता से कोई अहिन्दू नहीं हो सकता।

सरल भाषा में अनिवार्य धर्म का सारांश है—

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

—०—

पुराना और आधुनिक हिन्दू धर्म



—प्रो० दत्तात्रेय वाब्ले—

आधुनिक युग में राम मोहन, दयानन्द और गांधी जैसे महान सुधारकों ने हिन्दू धर्म का जो परिष्कृत रूप हमारे सामने रखा है, उसी के आधार पर हम आधुनिक हिन्दू धर्म के स्वरूप को निश्चित कर सकते हैं। आधुनिक युग में हिन्दू धर्म के इस परिष्कृत स्वरूप का दिग्दर्शन कराने वाले उपरोक्त तीन महापुरुष हुए हैं किन्तु उनमें से महात्मा गांधी का मुख्य क्षेत्र राजनीति तथा राजा राम मोहन का शिक्षा और समाज सुधार था, किन्तु दयानन्द ने अपना सारा जीवन धार्मिक विवेचन और सामाजिक पुनर्निर्माण ही में व्यतीत किया। इसमें उन्हें कहां तक सफलता मिली, इसका अनुमान हम नीचे लिखे कुछ अधिकृत समालोचकों की सम्मतियों से लगा सकते हैं।

सर हर्बट रिजले अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'दी पिपुल्स आफ-इन्डिया' के २४४ तथा २८० पृष्ठ पर लिखते हैं।

"यह स्वीकार करना होगा कि हिन्दू धर्म की दार्शनिक समझौते की ठंडी राख से देशभक्ति की आग आसानी से उत्पन्न नहीं हो सकती, हिन्दुत्व तव तक राष्ट्रीयता की सक्रिय भावना को प्रेरित नहीं कर सकता जब तक उसको पर्याप्त रूप से संगठित और सख्त नहीं वना लिया जाता। आर्य समाज एक मार्ग निकाल रहा है जो हिन्दुत्व को इस दिशा में ले जा सकता है किंतु हिन्दुत्व के झाड़झंखाड़ का जंगल कठिनाइयों से भरा है और यह मार्ग लम्बा है।" वे फिर आगे कहते हैं, "दयानन्द ने उसे अत्यन्त प्राचीन और ऊंचे सम्मान वाले धर्मग्रन्थ वेदों पर आश्रित करके एक निश्चित स्वरूप दिया जो साहस और पौरुष से पूर्ण था और कहीं की ईट कहीं का रोड़ा से मुक्त था—जो ब्रह्म समाज की मौत का कारण बना।"

श्री ब्लन्ट आई० सी एस० ने १९११ की उत्तर प्रदेश की जनसंख्या रिपोर्ट के पेज २४४ पर लिखा है—

"आर्य समाज की शक्ति का कारण यह है कि उसने अपने को हिन्दू बहुदेवतावाद की "स्वरूपहीनता और अनिश्चितता से मुक्त कर दिया।" इससे पूर्व की स्थिति के बारे में वे पेज १४४ पर कहते हैं : "भारत में हिंदू धर्म की स्थिति लगभग वैसी थी जैसी ईसाइयत के प्रारम्भ में योरोप की। अर्थात् हिन्दू धर्म के उच्च और निकृष्ट विरोधी विश्वासों के विस्तृत और अनियंत्रित ढेर के मुकावले ईसाइयत का निश्चित और स्पष्ट धर्म था। उसकी शक्ति उसकी निश्चितता में थी, इसके विपरीत हिंदू की कमजोरी उसकी एकरूपता के अभाव में। ईसाई का सदा एक ही धर्म था और हिंदू के पास कोई एक धर्म था ही नहीं। ... केवल दयानन्द ने ही उसे एक स्पष्ट और मनुष्यत्वपूर्ण धर्म दिया है जो अपने वास्तविक स्वरूप में सर्वथा हिन्दू है।"

श्री ब्लन्ट पुनः लिखते हैं:

"Orthodox Hinduism is too apt to lead to irreligion; a religion, which gives ritual in place of a creed and unintelligible "mantras" in place of religious instruction, is bound to have such a result. And a thoughtful man will often be driven to turn to other creeds. Amid all the religions such a man has the choice of four. Brahmanism is nothing but a limp eclecticism; it has discarded the Vedas and put nothing in their place; it has adopted a belief here and a doctrine there, and when doubt arises leaves the individual to decide the doubt for himself. Such a Religion has little vitality. Christianity and Islam are utterly irreconcilable with Hinduism in any shape or form ....But Aryaism is different.........It offers.........a bold, straightforward monotheism; it bids him discard all those superstition which he most specially dislikes; it bases the order and its whole teaching on the Vedas, which he reverences deeply, though he proboably reverences nothing else; it gives him a creed that he can believe, ceremonies that he can himself carry out, and a hope of salvation, if his deeds are good. At the same time, he need not break completely with the Hindu social system.........."

अर्थात "पुराना हिंदू धर्म हमें आसानी से धर्महीनता की तरफ ले जाता है। जो धर्म सिद्धांत के स्थान में कर्म काण्ड तथा धार्मिक शिक्षा के वदले समझ में न आने वाले मन्त्र देता है, उसका ऐसा परिणाम होना आवश्यक है। विचारशील हिंदू अक्सर उसे छोड़कर दूसरे धर्म की ओर जावेगा और ऐसे हिन्दू के लिए भारत में चार ही धर्म खुले हैं। ब्रह्म समाज लंगड़ी खिचड़ी के सिवाय कुछ नहीं है। उसने वेदों को तो त्याग दिया किंतु जब

मनुष्य को सन्देह होता है तो वह उसे स्वयं दूर करने के लिए छोड़ देता है। ऐसे धर्म में कोई जीवन नहीं है। ईसाई और इस्लाम धर्म हिन्दुत्व से किसी शक्ल या सूरत में मेल नहीं खाते। किंतु दयानन्द के आर्य धर्म की बात दूसरी है, वह साहस पूर्ण और स्पष्ट एकेश्वरवाद का उपदेश देता है। वह उन सब अन्ध विश्वासों को छोड़ने का आदेश देता है जिसे हिंदू स्वयं खासतौर से नापसन्द करता है और अपने धर्म तथा उसकी सारी शिक्षा को उन वेदों पर आश्रित करता है जिनका वह बड़ा आदर करता है (यद्यपि शायद वह किसी अन्य का आदर नहीं करता) यह धर्म उसे ऐसे सिद्धांत देता है जिन पर वह विश्वास कर सकता है। ऐसा कर्मकांड बताता है जो वह स्वयं पूरा कर सकता है और साथ ही मोक्ष की आशा भी, यदि उसके कर्म अच्छे हैं। इतना होने पर भी उसे हिन्दू समाज से पूरी तरह अलग होने की जरूरत नही है।"

प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता श्री जायसवाल के शब्दों में :—

"१९ वीं सदी में दयानन्द का प्रदुर्भाव इतिहासकारों के लिए एक समझ में न आने वाली आश्चर्य जनक घटना है, वर्तमान सुधरा हुआ तथा पुनर्जीवित हिन्दू धर्म केवल दयानन्द की ही देन है।"

योगी अरविन्द लिखते हैं:—"सब बातों के सार रूप में मन पर उनका जो गहरा प्रभाव है वह है आध्यात्मिक व्यावहारिकता (Spiritual Practicality), ये दोनों बातें जो हमारी कल्पना में अक्सर एक दूसरे से अलग समझी जाती हैं उनका समन्वय ही दयानन्द की परिभाषा है .... उनमें राष्ट्रीयता की स्वाभाविक चेतना थी और उसे प्रकाशित करने की उनमें सामर्थ्य थी। इसीलिए उनके कार्य, फिर वे गृहीत परम्पराओं से चाहे जितने दूर हों, अवश्य ही सर्वथा राष्ट्रीय होने ही चाहियें।"

प्रथम भारतीय नोबेल पुरष्कार विजेता महाकवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर कहते हैं :—

"मैं स्वामी दयानन्द को अपनी आदरपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं। वे उत्तर भारत के महान् पथनिर्माता थे। उन्होंने हमारे देश की अधोगति के दिनों में उगे हुए विश्वासों तथा रीतिरिवाजों के घबरा देने वाले गहन झाड़झंखाड़ में से एक ऐसा सीधा रास्ता निकाला जिसका उद्देश्य हिन्दुओं को सरल और राष्ट्रीय जीवन की तरफ ले जाना था, जिससे वे ईश्वर तथा मानव की सेवा कर सकें।"

इस प्रकार के अनेक भारतीय तथा विदेशी विचारक, इतिहासकार और दार्शनिक इस बात में एकमत प्रतीत होते हैं कि स्वामी दयानन्द ने न केवल हिंदू धर्म का परिष्कृत व निश्चित स्वरूप ही हमारे सामने रक्खा, बल्कि यह कार्य उन्होंने हिंदू समाज में राष्ट्रीय भावना तथा एकता उत्पन्न करने की दृष्टि से किया। अतः यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीय दृष्टि से हिंदू धर्म का उपरोक्त आधुनिक स्वरूप निश्चित करने का कोई भी प्रयत्न उनको आधार माने विना सफल नहीं हो सकता। यह जरूरी नहीं है कि सब लोग उनके प्रत्येक विचार से सहमत हों, किंतु एक बार यह स्वीकार कर लेने पर कि देश के ६० प्रतिशत हिन्दुओं के धर्म का कोई प्रगतीशील व निश्चित स्वरूप होना राष्ट्रीय एकता व दृढ़ता की दृष्टि से आवश्यक है, हमारे लिए इसके सिवाय दूसरा मार्ग नहीं रह जाता कि हम उस रास्ते तथा दृष्टिकोण का अनुसरण करें जिसका उन्होंने दिग्दर्शन कराया है।

दयानन्द के आदर्श जीवन और महान व्यक्तित्व तथा वैदिक साहित्य के गहन अध्ययन और प्रकाण्ड पांडित्य के कारण कम से कम हिन्दू धर्म के इस परिष्कृत स्वरूप को निश्चित करने के कार्य में हमें अन्य किसी आधुनिक महापुरुष के मुकावले उनसे अधिक उपयुक्त मार्गदर्शन नहीं मिल सकता। वास्तविकता यह है कि केवल उन्होंने ही हिंदू धर्म के इस आधुनिक व परिष्कृत संस्करण को एक निश्चित, पूर्ण तथा नियमवद्ध रूप देने का प्रयत्न किया है। इसलिए देश के सामने अभी तक हिंदू धर्म का यही एक संस्करण ऐसा है जो किसी नवीनमत या पंथ की स्थापना करने का प्रयत्न करने के वदले प्राय: सर्व सम्मत प्राचीन हिंदू आदर्शों के आधार पर ही हमारी उपरोक्त सुनिश्चितता व नवीन राष्ट्रीयता की दृष्टि से प्रस्तुत करता है।

स्वामी दयानन्द ने हिंदू धर्म को न केवल एक निश्चित और स्वरूप देने का ही प्रयत्न किया, वल्कि उसे वास्तविक और व्यावहारिक रूप में उदार और विस्तृत भी बना दिया। उनसे पूर्व हिंदू किसी गैर हिंदू को अपने धर्म या समाज में प्रवेश नहीं करने देते थे संसार के अन्य देशों और जातियों के लिए उसके दरवाजे बंद स्वामीजी ने उन्हें सबके लिए खोल दिया। शुद्धि या धर्म परिवर्तन का सिद्धांत इस्लाम, ईसाइयत आदि संसार के सब प्रमुख धर्म अपना एक उद्देश्य मानते थे और जिसे प्राचीन काल में हिंद या आर्य भी स्वीकार

थे, उसको पुनः प्रचलित करने का एक परिणाम यह हुआ कि मनुष्य मात्र को विना रंग, जाति, राष्ट्र आदि किसी भेद के हिंदू धर्म में आने की स्वतंत्रता मिल गई। हिन्दूधर्म की उदारता की यह एक कसौटी समझनी चाहिये।

उदारता निष्क्रिय या नकारात्मक (Negative) तथा सक्रिय अथवा सकारात्मक (Positive) दोनों ही प्रकार की हो सकती है। अन्य धर्मों के व स्वयं हिन्दुओं के परस्पर विरोधी विचारों, विश्वासों और रीति रिवाजों को हम विना विरोध सहन करते हैं, इसे हमारी उदारता का प्रमाण मान लें, तो भी यह केवल नकारात्मक उदारता है, क्योंकि उसमें हमें अन्यों के प्रति कुछ नहीं करना पड़ता।

सक्रिय उदारता

किन्तु यदि हिन्दू विचार व विश्वास स्वीकार करने की घोषणा करने पर भी हम अहिन्दुओं को अपने समान हिन्दू स्वीकार नहीं करते, वल्कि म्लेच्छ व अछूत तक समझकर उन्हें सब मानवीय तथा सामाजिक सम्बंधों से बहिष्कृत समझते हैं, तो यह हमारी उदारता व विशालता का कितना बड़ा ढोंग है ? सकारात्मक या सक्रिय उदारता का अर्थ यह है कि जिस धर्म, रीति या समाज-व्यवस्था को हम अपने लिए सर्वोत्तम समझते हैं उसे यदि दूसरा कोई अपनी स्वतन्त्र इच्छा से ग्रहण करना चाहे तो हमें उसका स्वागत करना चाहिए और उसके साथ कम से कम वह उदारता तो दिखानी चाहिये जो हम एक अतिथि के साथ दिखाते हैं।

अन्य धर्मों ने धर्म परिवर्तन के नाम पर लोभ-लालच, या अत्याचार से काम लिया, इसलिए हम अपने यहां स्वेच्छा से आने वालों के धर्म-परिवर्तन को रोकने के लिए भी वैसे ही अत्याचार करें, यह कहां की उदारता है ? अत्याचार तो अत्याचार ही है, चाहे हम उसका उपयोग अन्यों को बलपूर्वक अपने धर्म में लाने के लिए करें अथवा उन्हें उसमें आने से रोकने के लिए करें। हमारा सामाजिक बहिष्कार का अत्याचार तो सम्भवतः अन्यों के तलवार के शारीरिक अत्याचार से भी ज्यादा चिरस्थायी और असहनीय है।

हिन्दू धर्म को सुनिश्चित प्रगतिशील और सबके लिए खोलकर स्वामी जी ने उसे संकीर्ण नहीं, उदार व व्यापक बनाया है, यह हमें स्वीकार करना होगा। उन्होंने स्त्रियों तथा हरिजनों को भी समान अवसर देकर हिन्दू धर्म के अन्दर की संकीर्णता भी दूर कर दी। राजनैतिक सौदेबाजी अथवा अपनी निर्बलता के कारण जो लोग इससचाई को नहीं समझ सकते

उन्हें केवल अपनी जवानी उदारता के स्थान में स्वामीजी की यह व्यावहारिक उदारता अपनाने की कोशिश करनी चाहिये। कम से कम सब धर्मों का आदर करने वाला कोई व्यक्ति यह कैसे कह सकता है कि वह धर्म-परिवर्तन को मुख्य सिद्धान्त मानने वाले इस्लाम व ईसाइयत का तो आदर करता है, व उन्हें भी समान व सत्य मानता है किन्तु यदि हिन्दू धर्म भी इसी सिद्धांत को मानकर धर्म-परिवर्तन की परिपाटी का अनुकरण करता है तो उसे बुरा समझता है। दूसरे शब्दों में यदि धर्म परिवर्तन का सिद्धांत संकीर्णता है, अथवा वह सब धर्मों की समानता के आदर्श के विरुद्ध है, तो इस्लाम तथा ईसाइयत को हमें उनके धर्म-परिवर्तन के आग्रह के कारण संकुचित व अनुदार धर्म मानकर हिन्दू धर्म से घटिया मानना पड़ेगा। जो माप दण्ड ईसाइयत व इस्लाम जैसे महान धर्मों के लिए है, वह हिन्दू धर्म के लिए क्यों नहीं ?

जैसा स्वामी दयानन्द ने स्वयं कहा है : उनका उद्देश्य कोई नवीन धर्म या सम्प्रदाय स्थापित करना नहीं था बल्कि जिसे हम अपना वैदिक, सनातन या वास्तविक हिन्दू धर्म कहते हैं उसी को सदियों से जमी हुई धूल मिट्टी साफ करके उन्होंने अपने असली या परिष्कृत रूप में पुनः हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इसलिए कम से कम जो अपने को हिन्दू समझते हैं उनके लिए इसे स्वीकार करने में विशेष आपत्ति या संकोच नहीं होना चाहिए। क्योंकि ऐसा करके वे किसी नवीन धर्म को स्वीकार नहीं करेंगे बल्कि अपने प्राचीन धर्म को ही प्रगतिशील व आधुनिक रूप में ग्रहण करेंगे। वास्तव में आज शायद ही कोई पढ़ा लिखा हिन्दू ऐसा होगा जिसने किसी न किसी रूप में इस परिष्कृत हिन्दुत्व को स्वीकार न किया हो, चाहे वह ऐसा कहे या न कहे और चाहे उसे इस बात का ज्ञान हो या न हो।

कांग्रेस जैसी राजनैतिक संस्था ने भी प्रायः उन सामाजिक सुधारों को स्वीकार करके उन्हें अपने कार्यक्रम में मिला लिया। यद्यपि कांग्रेस एक पृथक और अधिक व्यापक संगठन बना रहा, इसी प्रकार इन सुधारकों द्वारा प्रतिपादित धार्मिक सिद्धांतों में से भी अनेक या तो पहले से ही सनातन कहे जाने वाले हिन्दू धर्म के अंग थे या बाद में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पुनः स्वीकार कर लिये गए हैं। मूर्तिपूजा आदि संबंधी कुछ सुधार जो अभी तक व्यापकरूप से स्वीकार नहीं किये गए हैं, किन्तु उनके स्वीकार किए जाने की आज नहीं तो कल निश्चित सम्भावना है। जैसा अन्य प्राचीन जातियों तथा देशों के उदाहरणों से स्पष्ट है। ग्रीस और मिस्र में अब देवी-देवता या उनकी मूर्तियां उपासना की नहीं, कला अथवा इतिहास या

साहित्य की चीजें हैं। चाहे जो हो, राष्ट्रीय दृष्टि से आधुनिक हिन्दुत्व का स्वरूप निश्चित करने का हम जो भी प्रयत्न करें, उसकी सफलता के लिए नीचे लिखे कुछ आधार आवश्यक प्रतीत होते हैं :—

१. हिन्दू धर्म की कोई सरल निश्चित परिभाषा या व्याख्या।

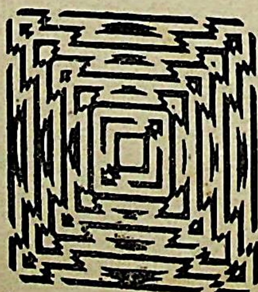
२. उसके आधारभूत धार्मिक सिद्धांत।

३. व्यक्तिगत आदर्श तथा सामाजिक जीवन।

हिन्दुत्व की परिभाषा या व्याख्या :—सबसे पहला प्रश्न जिसका किसी धर्म को उत्तर देना जरूरी है वह यह है कि उस धर्म की परिभाषा क्या है ? ऐसी परिभाषा के विना उसका पृथक् अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जा सकता। अतः हिन्दू धर्म क्या है इसका हमें सन्तोषजनक उत्तर देना होगा। आज हिन्दू धर्म की कोई निश्चित व्याख्या न होने के कारण यह कहना ही कठिन है कि हिन्दू धर्म नाम का कोई धर्म है भी या नहीं। हम देख चुके हैं कि उसमें इतने भिन्न भिन्न तथा परस्पर विरोधी विश्वास, रीति-रिवाज तथा व्यवहार हैं कि उन्हें किसी परिधि में रखकर एक धर्म का निश्चित स्वरूप देना असम्भव है। इस कठिनाई का मुकावला करके उसे दूर करने के स्थान में कुछ लोग उससे शतुर्मुर्ग की तरह आंख मींच लेते हैं और कुछ इसे हिन्दू धर्म की उदारता तथा व्यापकता कह कर इसे उसका एक विशेष गुण समझते हैं। किन्तु इस भ्रम द्वारा हम अपने को भले ही धोखा दे लें, दूसरों को नहीं दे सकते। जैसा विदेशी समालोचकों द्वारा हिन्दुत्व की समालोचनाओं से स्पष्ट है। यह तथाकथित उदारता और विशालता भी कितनी वड़ी संकीर्णताओं और असहिष्णुताओं का पिटारा है, यह भी हम देख चुके हैं। जातपांत और छूआछूत के आधार पर जो धर्म अपने अनुयायियों के साथ भी तिरस्कार और घृणा करे तथा दूसरे धर्म का अनुयायी होने मात्र के कारण दूसरे मनुष्यों को म्लेच्छ कहकर उनके हाथ का छुआ पानी तक न पी सके, उसकी 'सहिष्णुता' और 'उदारता' कितना बड़ा पाखंड है, यह कहने की जरूरत नहीं है। यदि अन्य विश्वासों, कुरीतियों तथा अनैतिक और असामाजिक रीतिरिवाजों को "स्थितप्रज्ञ" या "वीतराग" होकर स्वीकार करने का नाम ही 'उदारता और सहिष्णुता' है तो इस प्रकार की उदारता और सहिष्णुता का संरक्षक हिन्दू धर्म स्वयं अपनी जीवन रक्षा भी अधिक दिन तक नहीं कर सकेगा।

हिन्दू राष्ट्र या धर्म : हिन्दू धर्म की इस अवांछनीय व्यापकता और अनिश्चितता के कारण हमारे कुछ देशभक्त हिन्दू, उसे धर्म न कहकर

हिन्दू राष्ट्र या हिन्दू संस्कृति कहते हैं। उसका यह व्यापक अर्थ भी हमारी समस्या को नहीं सुलझा सकता। हिन्दुत्व को हिन्दू राष्ट्र कहने का स्वाभाविक परिणाम यह स्वीकार करना है कि वह कोई धर्म विशेष नहीं है। अर्थात् फिर वास्तविक अर्थ में हिन्दू धर्म नाम की कोई वस्तु नहीं है, यह हमें मानना होगा। दूसरे, यदि हिन्दू राष्ट्र का अर्थ हिन्दुओं का राष्ट्र है तो फिर भारत में जो मुसलमान तथा ईसाई आदि गैर हिन्दू हैं उनकी क्या स्थिति होगी ? क्या वे पृथक राष्ट्र होंगें या हिन्दू राष्ट्र के अधीन केवल उपराष्ट्र और अल्पसंख्यक जातियां मात्र ? हिन्दूधर्म और राष्ट्र के वारे में ऐसे विचार हमारे संविधान तथा राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से असंगत हैं। राष्ट्र तथा सस्कृति के आधार पर हमें एक भारतीय राष्ट्र को ही अपना आदर्श मानना होगा और उसके व्यापक क्षेत्र में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि सव धर्मों और जातियों को वरावर का स्थान देना होगा। तभी वे सव सच्चे देशभक्त भारतीय वन सकते हैं और तभी हम राष्ट्रीय एकता के नाम पर उनसे अपने को पहले एक देशभक्त भारतीय और पीछे मुसलमान ईसाई आदि समझने की आशा कर सकते हैं। अस्तु इन सब कारणों के वाद स्पष्ट है कि यदि हमें हिन्दुत्व का एक धर्म के रूप में पृथक अस्तित्व रखना है तो उसे एक विशिष्ट धर्म मानकर उसका कोई स्वरूप सीमित तथा निश्चित करना होगा।



जागते रहो आर्यो ! जागते रहो.........

—निर्भय हाथरसी—

हठ धर्मी से धर्म बेधरम न बन जाय !
मक्कारी से मजहब मुहतरम न बन जाय !
लोभ से रिलीजन प्रोब्लम न बन जाय !
सारा देश मीनाक्षीपुरम् न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो।......



वेष बदल करके रावण घूम रहे हैं
सोने की लंका के लोग झूम रहे हैं
दुःशासन शासन का मुंह चूम रहे हैं
असुर—ससुर मचा धूम रहे हैं
कोई सीता—सावित्री मरियम न बन जाय !
मुहतरमा मुबीना मिस मैडम न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो।



सावधान रहना घर में बैठे चोर से
सावधान रहना अफवाहों के शोर से
शक्ति या दबाव या प्रभावाभाव में—
सावधान रहना कुछ पैसों के जोर से—
घर की रानी बुरके की बेगम न बन जाय !
घर का राजा रन्जो-गम-अलम न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो।



न्याय-दण्ड से यदि उद्दण्ड डरेंगे
तो ये जरूरी, है खेत सांड़ चरेंगे
दल वदलू तो सत्ता के सर-दर्द वन गये—
धर्म-वदल घर का सत्यानाश करेंगे
परिवर्तन का कार्यक्रम क्रम न वन जाय !
कर्म-काण्डी धर्म-कर्म भ्रम न वन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो ।



हरिजन न हों तो सत्कर्म न होगा
हरिजन न हों तो हरि का मर्म न होगा
हरिजन रहेंगे वहां हरि भी रहेंगे—
हरिजन न हों तो कोई धर्म न होगा
हरिजन का तत्व कहीं कम न वन जाय !
राम-नाम-सत्य मरघटम् न वन जाय !
जागते रहो आर्यों ! जागते रहो ।



नींव डगमग़ाई तो महल गिर जायेगा
समझदार इसको सुदृढ़तम वनायेगा
ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र कुछ भी समझ लें—
पैरों का महत्व सर से कम न आयेगा ।
उच्चता ऊंचाई से अधम न बन जाय !
नीचता निचाई से उत्तम न वन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो ।



'धर्म क्या है' इसका जिसको ध्यान नहीं है ।
ऐसे परिवर्तन का कोई मान नहीं है ।
फिर भी ऐसा लग रहा है आजकल हमें—
अपना हिन्दुस्तान हिन्दू-स्थान नहीं है ।

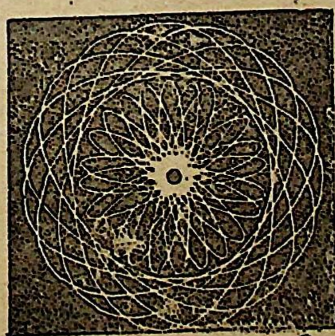
सीधा एकता में कहीं खम न बन जाय !
धर्म-ध्वजा मजहबी परचम न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो ।



सर्व-धर्म ध्याने वाला देश हमारा ।
सबको सुख पहुंचाने वाला देश हमारा ।
मित्रता निभाने वाला देश हमारा ।
विश्व गुरु कहलाने वाला देश हमारा ।
सत्यं—शिवं—सुन्दरम् से तम न बन जाय !
प्यार की छमाछम धमाधम न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो ।



सावधान युग के अवतारो ! सावधान !
छूत और अछूत के विचारो ! सावधान !
सावधान वोटों की सरकारो ! सावधान !
सावधान गद्दी के गद्दारो ! सावधान !
सीधा सादा हरिजन कठिनतम न बन जाय !
बमबम भोलेनाथ कहीं बम न बन जाय !
सारा देश मीनाक्षीपुरम् न बन जाय !
जागते रहो आर्यो ! जागते रहो ।……





शस्त्र-सन्नद्ध

हिन्दू (आर्य) वीर

(श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा निर्मित एक चित्र की अनुकृति)

हम हिन्दू हैं

—वीर विनायक दामोदर सावरकर



हिन्दुत्व के तेज ओर ओज से अपने अन्त:करण को आप्लावित करने के लिए हिन्दू राष्ट्र के ऐतिहासिक दस्दावेज की तरह संरक्षणीय, इस लेख को वार-वार पढ़िये।

अपने हिन्दू-धर्म तथा हिन्दू-समाज को कालचक्र के कारण जो रूढ़ियां हानिकारक हो रही हैं, उनको दूर करक वर्त्तमान परिस्थिति में अपने हिन्दू-राष्ट्र का संगठन, वल एवं प्रगति जिनके द्वारा साध्य हो सके, ऐसे कुछ सुधार करने के लिए जब से हमने जाति-भेदोच्छेदक आन्दोलन प्रारम्भ किया तव से हमें चारों ओर से व्यक्तिश: और सामूहिक रूप से, अनेकों वार पूछा गया कि आप हिन्दू-धर्म, हिन्दू-राष्ट्र, हिन्दुत्व आदि जिन शब्दों का उपयोग करते हैं, उनका अर्थ क्या है ? एक पक्ष के लोग जो स्वयं धर्म-प्रभृति परम्परागत देव विषयक कल्पनाओं के बंधन न मानने वाले और अर्वाचीन बुद्धिवाद का ही केवल अवलंवन करने वाले होने के कारण पूछते हैं, "वेद, यज्ञ, मूर्ति, गाय, परलोक-प्रभृति विषयक धार्मिक कल्पनाओं को तो हम मानते ही नहीं, फिर हम अपने को हिन्दू क्योंकर कहें ? हिन्दू राष्ट्र जिसे आप मानते हैं, उसके लक्षण क्या हैं ? आप भी बुद्धिवाद की कसौटी पर समस्त धार्मिक कल्पनाओं को परख लेने के पक्ष के दिखाई देते हैं, फिर अपने आपको हिन्दू क्यों कहलाते हैं ? हिन्दू-संगठन, शुद्धि आदि धार्मिक उलझनों में आप क्यों पड़ते हैं ? हम हिन्दू एक राष्ट्र हैं क्या ? ऐसे भी समान लक्षण अथवा बन्धन हैं क्या, जिनके कारण यह माना जा सके कि हम लोग एकजीवी राष्ट्र हैं ?'

हमारे इन प्रश्नकर्ताओं में से कुछ को तो वे स्वयं हिन्दू हैं या क्या हैं, यह शंका उत्पन्न हो गई है।

"मुझे अपने को हिन्दू क्यों कहना चाहिए," यह प्रश्न पूछने वालों में से कुछ तो हिन्दू राष्ट्र के सैन्य-शिविर के चारों ओर भटकने वाले वाजारू लोग हैं; इस हिन्दू राष्ट्र के प्राण-संकट के समय जूझते हुए प्राणार्पण करने वाले नहीं अपितु संकट आते हो परिवर्त कर भाग जाने वाले पलायन। वीर ही हैं। हमें हिन्दू रहकर विधान परिषद में अधिक स्थान प्राप्त हो सकेंगे अथवा अहिन्दू होकर, इसी जोड़-वाकी पर उनका हिन्दू रहना या न रहना निर्भर करता है। उन्होंने अगर पूछा कि, "मुझे हिन्दू क्यों रहना चाहिए ?" तो उसका सीधा-सरल उत्तर है—"तुम्हारा हिन्दू न रहना ही आज अच्छा है, क्योंकि तुम हिन्दुत्व की व्याख्या इस दृष्टि से करते हो कि वह द्रव्य-प्राप्ति का केवल एक साधन-मात्र है, जाओ और यथा-शक्य शीघ्र अहिन्दू हो जाओ। कारण, आज नौकरी और पेट के लिए चार दाने अहिन्दुओं को ही अधिक मिल रहे हैं। जब कभी हिन्दुओं का दिन आयेगा तब ऐ पेट के दास ! 'मुझे हिन्दू क्यों न रहना चाहिए,' ऐसा पूछते हुए तुम इस हिन्दू-ध्वज के नीचे अवश्य वापिस आओगे।"

इस प्रकार राष्ट्र, धर्म अथवा समाज ही नहीं अपितु अपने माता-पिता के सम्मान और ममत्व को भी जो वाजार भाव से तोल कर बेचना चाहते हैं, ऐसे लोगों के सम्बन्ध में क्या मानवता की भाषा का प्रयोग किया जाये? आज वे दूसरे लोगों की वंचना कर रहे हैं किन्तु कल वे स्वयं ही निश्चित रूप से मुंह की खायेंगे।

"मैं अपने को हिन्दू क्यों कहूं," पूछने वाले लोगों में से उपर्युक्त बाजारू 'पेट बाबू' निकाल कर जो शेष लोग रह जाते हैं, उनके आक्षेप प्रामाणिक होते हैं। वे अपने बुद्धिप्रमाणवादी मन से मेल खाने वाली हिन्दुत्व की व्याख्या समझते ही नहीं हैं। उनके सम्बन्ध में उनका ज्ञान अधूरा है, जो अज्ञान से भी अधिक घातक और त्याज्य रहा है। उन प्रामाणिक आक्षेपकर्ताओं के समाधान के लिए तथा अपने सनातनी बन्धुओं को जो भय प्रतीत होता है कि यदि बुद्धिवाद के पीछे लग कर हम अपने धार्मिक आचारों एवं संस्कारों को एक-एक करके छोड़ते जायेंगे तो कितना हिन्दुत्व शेष रह जायेगा, उसके निवारण के लिए, तथा हिन्दुत्व के वास्तविक घटक कौन हैं, हिन्दुत्व की कौन सी व्याख्या हमें सत्य और हितकर मालूम देती है, हिन्दू-राष्ट्र का पाया अन्य किसी भी राष्ट्र की नींव की अपेक्षा अधिक वज्र-दृढ़ भूमिका पर कैसे आधारित है और आज भी बुद्धिवाद की भट्टी में से निकालने के पश्चात् वह किस प्रकार कसौटी पर बावन रत्ती सुवर्ण ठहरता है : आदि बातों का संक्षिप्त दिग्दर्शन हम इस लेख में करने जा रहे हैं।

बात निश्चित है कि किसी पगड़ी विशेष में, ब्रह्मसूत्र में, चोटी में या गौमूत्र में हिन्दुत्व नहीं है। हिन्दुत्व कोई ताड़-पत्र पर लिखी हुई पोथी नही है जो ताड़-पत्र के चटकते ही चूर-चूर हो जाये और न आज उत्पन्न होकर कल नष्ट होने वाली कागज पर लिखी हुई घटना ही हिन्दुत्व है। हिन्दुत्व गोलमेज परिषद् का कोई प्रस्ताव नहीं है। हिन्दुत्व एक महान् जाति का जीवन है। वह सहस्रावधि पुण्यात्माओं के, हुतात्माओं के युगानुकूल अथक परिश्रम एवं प्रयत्नों का परिपाक है। आज वह उतार पर है, किन्तु फिर भी समुद्र ही है। सुप्त होने पर भी ज्वालामुखी है। बेसुधी के चक्कर में, वायु के झटके से, उस विराट् पुरुष के द्वारा प्रमाद के कार्य हो रहे हैं, किन्तु यह बेसुध स्थिति ऊर्ध्व की है, मृत्यु की नहीं। इस हिन्दू-राष्ट्र और हिन्दू-धर्म के उत्कर्ष के लिए हवन होने को आज भी जिन शतावधि हुतात्माओं के शरीर का विन्दु-विन्दु मचल रहा है, उन हुतात्माओं की जलन और आत्म-यज्ञ ही हिन्दू-राष्ट्र के अक्षुण्ण जीवन का साक्षी है, इसके पुनरुत्थान का हामी है।

'वास्तव में क्या हिन्दू-राष्ट्र जैसी कोई वस्तु है'--ऐसा साफ-साफ पूछने वाले, हिन्दुत्व के पारलौकिक अथवा धार्मिक बंधनों के विषय में जिन्हें जिज्ञासा नहीं है किन्तु उनके भौतिक और राष्ट्रीय स्वरूप के विषय में जिनको प्रश्न पूछना है, अपने उन स्वकीयों में से ही प्रामाणिक बुद्धिवादियों को और परकीयों में से अप्रामाणिक बुद्धि-भेदियों से बुद्धिवाद की भाषा में हम पूछते हैं कि इंगलैंड, जर्मनी, इटली, अमेरिका, जापान, आयरलैंड आदि देशों के बारे में क्या बतायेंगे कि इन सभी देशों में क्या विशेष घटक हैं, जिनके कारण उन्हें 'राष्ट्र' का पद प्राप्त हो सका है ? यदि वे घटक हिन्दू राष्ट्र की बनावट में भी उसी उत्कृष्टता से स्थित हों तो हिन्दू राष्ट्र का अस्तित्व भी आपको स्वीकार करना पड़ेगा, अन्यथा सारे संसार में राष्ट्र नाम की कोई वस्तु ही नही है, यह कह कर अलग हो जाना पड़ेगा। उस कथन में कुछ तथ्य भी है। अखिल मनुष्य जाति ही केवल राष्ट्र, पृथ्वी ही एक देश, और मानवता ही एक धर्म—यह भी एक ध्येय है, उससे हमारा विवाद नहीं। जब कभी उस ध्येय को आप सभी लोग प्रत्यक्ष व्यवहार में लायेंगे तब और उस समय आपको प्रतीत हो जायेगा कि उस ध्येय के नागरिकत्व की प्रतिज्ञा पर प्रथम हस्ताक्षर यदि किसी का होगा तो इस हिन्दू जाति का ही, इस हिन्दू-राष्ट्र का ही। 'हमारा स्वदेश, भुवन त्रय में वास' ऐसा कहने वाले तुकाराम और 'वाराणसी मेदिनी' को ही समझने वाले अद्वैताचार्य शंकर हिन्दू ही थे। किन्तु जब तक संसार की छोटी-मोटी जाति

स्वतन्त्र राष्ट्रीयत्व के गुट वनाकर दूसरों से अलग हो उन्हें लूटते ही रहना चाहती है, तव तक यह हिन्दू-राष्ट्र भी अपना स्वतन्त्र अस्तित्व वनाये रखना चाहता है। जव तक गांव में चोर हैं, तव तक साहूकारों को भी अपने घरों में पक्की दीवारें वनानी और पक्के ताले लगवाने ही होंगे। संसार के राष्ट्रीयत्व का समर्थन जव तक आप कर रहे हैं, तव तक अंग्रेज, और उसका अस्तित्व अपरिहार्य अथवा इष्ट मान रहे हैं, तव तक अंग्रेज, अमेरिकन, तुर्की आदि राष्ट्रों के समान हम हिन्दुओं की राष्ट्रीय आकांक्षाओं का और हिन्दू-राष्ट्र के अस्तित्व का समर्थन भी उसी न्याय से होना है। यदि इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, रशिया, जापान, और तो और हंगरी, स्विट्ज़रलैंड और अफगानिस्तान जैसे छोटे-छोटे भू-प्रदेश भी एक-एक राष्ट्र हैं तो आसिन्धु सिन्धु-विस्तृत हिन्दुस्तान जिसकी पितृ-भूमि और पुण्य-भूमि है, वह हिन्दु जाति भी अवश्यमेव एक महनीय राष्ट्र है, क्योंकि वह राष्ट्रीयत्व के सम्पूर्ण घटकों से सम्पन्न और लक्षणों से समन्वित है।

राष्ट्रीयत्व का अधिष्ठान

अंग्रेज, फ्रेंच, जापानी, अमेरिकन आदि लोकपदों को राष्ट्र की पदवी निर्विवाद रूप से धारण करने का अधिकार कैसे प्राप्त हुआ? आपकी इस विषय में क्या सम्मति है? राष्ट्रीयत्व का अनन्य भले ही न हो, फिर भी अग्रगण्य घटक ही स्थान है न? इंगलिश लोगों का इंगलैंड, फ्रेंच लोगों का फ्रांस, जर्मनों का जर्मनी, जापानियों का जापान, चीनियों का चीन, रशियनों का रशिया। जिन जनपदों की समग्र और वहुसंख्यक वस्ती जिस भूमि में परामपरागत रहती चली आई हो, ऐसी एक विशिष्ट पितृ-भूमि, स्वदेश 'स्थान' उनके पास है और यदि यह कारण उन्हें राष्ट्र कहलाने योग्य पात्रता प्रदान करा सकता है तो राष्ट्रीयत्व का अग्रगण्य घटक जो 'स्थान' है, वह यहां देखिए। हमारी हिन्दू जाति का स्थान वही हिन्दुस्तान, यह हमारा स्वदेश! यह हमारी आसिन्धु-सिन्धु-पर्यन्त पितृ-भूमि! जब इंगलैंड में आंग्लों का प्रवेश नहीं हुआ था, जव गॉल में उतर कर फ्रांस्को की टोलियों ने उसको फ्रांस नहीं वनाया था, और तो और, जव राम्युलस और रोम भी उत्पन्न नहीं हुआ था, जब मध्य एशिया में तुर्क थे भी या नहीं यह कहना कठिन है, तव फिर अमेरिका, सर्विया, स्पेन, स्विस, प्रभृति देशों के विषय में तो वोलना ही क्या—उस समय से पूर्णतया निर्विवाद रूप से इस भूमि में हम 'सप्त-सिन्धुओं' (हिन्दुओं) की वस्ती अखण्ड परम्परा से रहती हुई चली आई है। यदि पुराणों की कालगणना को छोड़ भी दिया और केवल आज उपलब्ध

इतिहास के अंकगणित की भाषा में ही सोचा, तो भी चन्द्रगुप्त और पुरु के पंजाब से जिस सिन्धु-स्थान पर, भारतवर्ष पर, हम हिन्दुओं का परम्परागत निवास आया है, वह यह विस्तीण देश, हम हिन्दुओं का स्वदेश, इसे हम पितृ-भूमि ही कहें - यह 'हिन्दुस्थान' हिन्दुस्थान ही रहना चाहिए।

राष्ट्रीयत्व अग्रगण्य घटक 'स्थान' है। उसकी अपनी हिन्दू जाति के लिए कमी नहीं हैं। इतना ही नहीं, इस स्थान-सम्पदा के विषय में संसार के आज के राष्ट्र हमारे सम्मुख खड़े भी रहें तो भिखारी के रूप में ही खड़े रह सकेंगे। हमारी इस भरत-भूमि की पहाड़ियों के समान भी उनके देशों के पर्वत ऊंचे नहीं हैं, हमारी उप-नदियों के समान भी उनकी महानदियां प्रवाहिणी नहीं हैं, हमारे वनों के से उनके उद्यान भी सुगन्धित एवं सुमधुर फलों-फूलों से भरे हुए नहीं हैं, हमारे यहां के अकालों के वरावर भी उनके यहां सु-काल में समृद्धि नहीं है। यह व्यर्थ की वकवास नहीं है, सत्य है। हिमालय, विन्ध्य और सह्याद्रि जिसके कुल पर्वत गंगा, यमुना, नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, सिन्धु, शतद्रु जिसकी नदियां—वड़े-वड़े वन्दरगाहों से, महानदियों के मुहाने से, विस्तीर्ण पुलिनों से सुसज्जित शत-शत योजनों का सिन्धु तट, संसार के वाणिज्य एवं सम्पदा का लेन-देन करने के लिए तत्पर और दुर्ग के लिए अलंघ्य खन्दकों की भांति हमारी पितृ-भू का तीनों दिशाओं का संरक्षण करने के लिए उपयुक्त, ऐसे उप-सागर, सागर और महासागर! नैसर्गिक, भौगोलिक खनिज एवं वानस्पत्य सम्पत्ति में जो ऐसी अतुलनीय श्री की स्वामिनी है, वह यह हमारी पितृ-भू देखिये! हमारी हिन्दू जाति का यह अधिष्ठान अंग्रेज, जापान, जर्मनी, फ्रांस, इटली इत्यादि वलिष्ठ राष्ट्रों के अधिष्ठान से, और-तो और, अमेरिका और चीन को छोड़ कर संसार के किसी राष्ट्र के अधिष्ठान से, कुल लाभालाभ तथा न्यूनाधिक्य का विचार करते हुए सर्वोपरि श्रेष्ठ है। और चीन-अमेरिका से भी लव-मात्र भी कनिष्ठ नहीं है।

एक भाषा, एक लिपि

एक भाषा और एक लिपि राष्ट्रीयत्व का दूसरा लक्षण समझा जाता है। इस लक्षण की कमी भी हम हिन्दुओं को पड़ने का कोई कारण नहीं है। हम सारे हिन्दुओं की समान धर्मभाषा संस्कृत और समान धर्मलिपि देव-नागरी अनेक शतकों से वद्धमूल हो चुकी है। वैदिक सनातनियों के कोटि-कोटि लोगों की तो वह प्रत्यक्ष देववाणी ही है। हमारे जैन, वौद्ध, आर्य प्रभृति पन्थों का प्रचण्ड वाङ्मय उसमें ही गुंथा हुआ है। सिक्खों के प्रख्यात दशम गुरु श्री गोविन्दसिंह जी ने अपने शिष्यों को जान-बूझकर काशी भेज-

कर संस्कृत सिखलायी और संस्कृतज्ञ पंडितों का 'निर्मल सिक्ख' नामक एक विद्वान् वर्ग निर्माण किया। उन गुरु गोविन्दसिंह जी का अपना सारा दशम ग्रन्थ नागरी लिपि और हिन्दी भाषा में ही लिखित है। कश्मीर से लेकर महाराष्ट्र तक कोट्यवधि हिंदुओं की अनेकों भाषाएं संस्कृतोद्भूत सगी वहनें हैं और द्राविड़ीय भाषाएं संस्कृतनिष्ठ इस देववाणी के स्तन्य पर ही परिपोषित हैं। किन्तु यह सब होते हुए भी हम हिन्दुओं की समान धार्मिक भाषा कोई भी सीधी-सादी ग्रामीण भाषा नहीं है। लेटिन भी शब्द सम्पत्ति में, नव शब्द-निर्मिति में, जिसके पासंग में नहीं ठहर सकती, ऐसी साहित्य-शास्त्र-शब्द-साम्राज्ञी संस्कृत ! यह संस्कृत भाषा हम हिंदुओं की राष्ट्रीय भाषा हम तुम या एक-दो पीढ़ी की वनाई हुई नहीं, अपितु वेदर्षि से लेकर दयानन्दजी तक की अनेक पीढ़ियों के पंडितों और महन्तों ने अपने अहेतुक और सतत प्रयत्न द्वारा इस गीर्वाण-वाणी को सम्मिलित राष्ट्र-भाषा का पद प्राप्त करा दिया है। हम हिंदुओं की समान धर्मभाषा और लिपि जैसी संस्कृत और नागरी—वैसे ही हमारी व्यावहारिक राष्ट्र-भाषा हिन्दी और राष्ट्र-लिपि नागरी !

गत सहस्र वर्षों से वह हमारी व्यावहारिक राष्ट्र-भाषा अपने-आप बनती आई है और अव तो हमने उसे हेतुतः पूर्णरूपेण पद्धति के अनुसार राष्ट्र-भाषा का अधिकार अर्पण कर दिया है। बित्ते-भर छोटे से ब्रिटेन में वेल्श और स्काच गौण-भाषाएं, जर्मनी में चार प्रमुख भाषाएं, स्विट्जरलैण्ड और पोलैंड जैसे मुट्ठी-भर लोगों में भी तीन-तीन सरकारी भाषाएं चलते हुए भी वे जब 'राष्ट्र' की पदवी प्राप्त कर सकते हैं, तो जो हम तीस कोटि हिन्दुओं की धर्म-भाषा और धर्म-लिपि संस्कृत और नागरी तथा व्यवहार भाषा हिन्दी है, उनका भाषा-ऐक्य की कसौटी की दृष्टि से भी 'राष्ट्र' इस पदवी पर पैतृक अधिकार होना ही चाहिए।

समान भूत, समान भविष्य

अमेरिका की पाठशालाओं में विद्यार्थी को एक राष्ट्रीय गीत सिखाया जाता था। उसमें उनकी राष्ट्रीय एकता एवं महत्ता के गौरव का एक कारण वताने वाला वाक्य इस प्रकार था कि, "दो सौ वर्ष का समान भव्य भूतकाल हमारे पीछे खड़ा है, और अनन्त भविष्यकाल ! एक इतिहास और एक भविष्य ! इन दोनों शक्तियों से हम एकजीवी राष्ट्र हैं !" दो सौ वर्ष के समान भूतकाल से, एकत्र निवास से, सुख-दुःख के समान उपभोग से यदि अमेरिका के सदृश अनेक वंश, जाति तथा भाषा के भेदों से भरा हुआ जनपद एकजीवी राष्ट्र हो सकता है तो पौराणिक रामकृष्ण का श्रुति-रामा-

यण-महाभारत का युगगण्य काल यदि छोड भी दिया जाय तो भी हम हिंदुओं के पीछे चन्द्रगुप्त से लेकर दो सहस्र से अधिक वर्षों के इतिहास का जो समान, महनीय और भव्य भूतकाल हिमालय के समान खड़ा है, उसके कारण यह हिन्दू जाति लक्षणों की कसौटी से भी एकजीवी और एकसंधि राष्ट्र अवश्यमेव है।

सप्त राष्ट्रों में विभाजित डच, डेन्स 'आंग्ल' नार्मनों के आक्रमणों द्वारा वारम्वार पराभूत और गुलावी युद्धादिक (War of roses) यादवी से पुनः-पुनः रक्त-रंजित इंगलैंड का इतिहास जव उस राष्ट्र का समान राष्ट्रीय इतिहास हो सकता है, गत शताब्दी तक एक-दूसरे को छाती पर परकीय फ्रेंच आदि शत्रु का भी देश-द्रोह करके साथ देने वाले भिन्न-भिन्न जर्मन प्रान्तों का इतिहास भी भाषा, संस्कृति, देश, उद्देश्य आदि समान वन्धनों के प्रताप से जर्मन राष्ट्र का यदि समान और राष्ट्रीय इतिहास कहलाया जा सकता है, तो हम हिन्दुओं के गत दो हजार वर्षों के इस अखण्ड, महनीय, समान और भव्य भूतकाल के इतिहास को भी हमारे राष्ट्रीय इतिहास का स्थान प्राप्त करने में समर्थ होना चाहिए। अकेले चीन को छोड़कर संसार के किसी भी वर्तमान राष्ट्र को इस प्रकार की ऐतिहासिक समृद्धि नसीब नहीं है।

इस लेख में केवल बुद्धिवादियों के तर्कशुद्ध कोटिक्रम से ही वताना है, अतएव हिन्दू जाति को एकजीवी राष्ट्र करने में साधनभूत होने वाले समान धर्म-वन्धनों का मैं उल्लेख नहीं करता। किन्तु मनुष्य जाति के आज के मनो-विकास की भूमिका में कोट्यवधि विभिन्न व्यक्तियों को एक सूत्र में पिरो कर उनका एक प्रवल गुट वनाने में समान पुण्य-भूमि, यह साधन अत्यन्त परिणाम-कारक है, यह वात प्रत्यक्ष सिद्ध होने से बुद्धिवादियों को भी उसमें आक्षेप नहीं हो सकता। अतएव उसका विचार भी आवश्यक हो जाता है। सभी मुसलमान मक्का की ओर मुँह करके नमाज पढ़ते हैं। पुण्य-भूमि एक होने के कारण अन्यान्य विरुद्ध अथवा असम्वद्ध जातियां एक हो उठती हैं। एक-दूसरे से छुरी और कद्दू जैसा प्रेम रखने वाले सारे योरुप के राव-राजा एकत्रित होकर फिलिस्तीन पर सौ साल तक जूझते रहे— केवल इसलिए कि वह थी उनको पुण्य-भूमि (Holy land), उनके धर्म-क्षेत्र की भूमि, पैगम्वर की जन्म-भूमि ! संगठित राष्ट्रीय वल का इस प्रकार अत्यन्त प्रवल घटक हो सकने वाली इस पुण्य-भूमि के विषय में तो हम हिन्दू जाति के समान एकाध ही दूसरी जाति भाग्यशाली होगी, क्योंकि जो हमारी पितृ-भूमि वही हमारी पुण्य-भूमि —धर्म-भूमि है। हम सब हिन्दुओं की चाहे वे सनातनी, सिक्ख, जैन अथवा लिंगायत, आर्य अथवा बौद्ध क्यों न हों, हमारी सबकी ही पितृ-भूमि एक ! यह आसिन्धु-सिन्धु पर्यन्त भारत-

वर्ष ! ! केवल पित-भूमि, केवल देश एक होने से इंगलैंड के समान जनपद भी एकजीवी गुट होते हैं, केवल पुण्य-भूमि एक होने के कारण जब यहूदी और मुस्लिम जन-पद एकजीवी गुट हो रहे हैं, तब जिस हमारी हिन्दू जाति की पितृभूमि और पुण्य-भूमि एक ही है, वह एकजीव, एकप्राण, एकराष्ट्र निश्चित रूप से है हीं।

समान त्यौहार

राष्ट्रीयत्व के अन्यान्य जो घटक समझे जाते हैं, उनका पृथक् उल्लेख करना इस लेख की मर्यादा के बाहर है। इसलिए इन सबका समावेश जिसमें हो सकेगा, ऐसी संस्कृति के नाम से ही उन्हें दिग्दर्शित करना ठीक होगा। हम हिन्दुओं के नाम समान हैं। मुहम्मडन लॉं, इंगलिश लॉं, वैसा ही हिंद लॉं। हिन्दू निर्बन्ध-शास्त्र द्वारा साधारण रीति से कोट्यवधि हिन्दुओं का जीवन नियमित है। हमारे त्यौहार समान हैं। दिवाली, देखिए बंग से सिंध और नेपाल से मद्रास तक सारा हिंदू, हिन्दुस्थान एक समयावच्छेद से जगमगा उठा है। यह भैयादूज ! घर-घर बहिन भाई का प्रेम के नीराजन दीप द्वारा मंगल-कामना कर रही है। यह गोकुल अष्टमी ! इस सुविशाल महादेश में कोट्यवधि हिन्दू—यह तीस कोटि का सारा राष्ट्र-का-राष्ट्र मध्यरात्रि के समय हाथ में गुलाल और खीलें लेकर भगवान् श्रीकृष्ण की जन्मवेला की प्रतीक्षा माता देवकी की ही भांति अति उत्सुकता से और उत्कंटता के साथ कर रहा है—वह जन्म होते ही कश्मीर से कन्याकुमारी तक एक ही समय एकदम कोटि-कोटि हिन्दुओं का आनन्द उमड़ आता है। रंगपंचमी को ! दरिद्र कुटिया में रहने वाली बाल-बालिकायें, राजधानी में हाथी पर सुवर्ण-सिंहासन पर राजे-रजवाड़े, सारा हिन्दुस्तान, सारा हिन्दू भारत रंग उड़ाता हुआ लाल-लाल दिखेगा। इन त्यौहारों की धार्मिक भावना को छोड़ दिया जाय, तो भी इन सामाजिक संस्कारों से एकरस हुआ यह जन-पद यदि 'राष्ट्र' नहीं कहा जा सकता है, तब संसार में राष्ट्रीय संस्कृति जैसी कोई वस्तु ही नहीं, यह कहना पड़ेगा।

संख्याबल—कुबेर से जमानत ?

अधिष्ठान के समान ही संख्याबल को भी राष्ट्रीयत्व का पृथक् लक्षण मानते हैं। किन्तु इस प्रकार का प्रमाण-पत्र हिन्दुओं से मांगने का अर्थ होगा, कुबेर से जमानत मांगना। जिन्हें पृथक् देश नहीं, और यदि है भी तो शतकानुशतक से उनके अधिकार में नहीं, जिन्हें भाषा की एकता और संस्कृति के कारण ही एक कहा जा सकता है, उन पोलैंड, हंगरी, रूमानिया, स्पेन, पुर्तगाल आदि का एकाध कोटि संख्याबल भी 'राष्ट्र' कहलाने के लिए

पर्याप्त हो सकता है तो इस हिन्दू जाति का संख्यावल, संदिग्ध वाजारू लोगों की गिनती छोड़कर केवल कट्टर अनुयायी ही गिने जाएं, तो भी तीस कोटि हैं ! एक देश, एक भाषा, एक लिपि, एक इतिहास, एक भूतकाल, एक भवितव्य, एक संस्कृति, एक पितृ-भूमि, एक पुण्य भूमि—इतने आत्मीय सम्वन्धों से एकजीव तीस कोटि संख्यावल का यह हिन्दू-राष्ट्र संसार के महनीय राष्ट्रों में से भी एक महत्तम राष्ट्र है। [यह गणना अनेक दशक पुरानी है। इस समय यह संख्या ५५ कोटि है।—सं०]

परन्तु इन सारे ही वन्धुओं से अधिक जिस एक दृढ़ वन्धन से हम सव हिन्दू एक राष्ट्रीयता प्राप्त कर सकते हैं, एक जीव हो सकते हैं तथा जिस वन्धन के पाये पर ही अन्य कोई भी कहने योग्य सम्बन्ध न होते हुए भी जन पद का 'राष्ट्र' वन सकता है, वह अत्यन्त तीव्र और शक्तिमान् राष्ट्र-वन्धन है हमारी इच्छा !

हम हिन्दू राष्ट्र हैं

यही वह महान् वन्धन है। हमें एक हिन्दू-राष्ट्र चाहिए, इसीलिए हम हिन्दू एक राष्ट्र हैं। हमें हिन्दू के नाम से ही जीवित रहना और उसी नामसे मरना पसन्द है, इसीलिए हम हिन्दू हैं। नदी पहले और पुल वाद में; वैसे ही इच्छा पहले, राष्ट्र पहले और व्याख्या वाद में। सिकन्दर ग्रीक ने आकर—ब्राह्मणों के टुकड़े किये; मुसलमानों ने गुरु तेग वहादुर का सिर उड़ाया; मतिदास के मस्तिष्क पर आरी रखने पर भी जव वह हिन्दुत्व छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुआ, इसीलिए उसे जैसे-का तैसा खड़ा-खड़ा ही चीर डाला, वन्दा वीर का मांस तप्त लोहे के गज भोंक कर टुकड़े-टुकड़े कर डाला, शम्भाजी की आंखें फोड़ीं, जीभ काट डाली; हरपाल को छील डाला; कवि कुलेश को मार डाला; टीपू के हाथों अपना धर्म-परिवर्तन न हो इसलिए जिन वीरों ने अपनी जीभ खींच कर प्राण दिए—इन हुतात्माओं ने जो प्राण त्याग किए; वे हिन्दू शब्द को तुम्हारी पुस्तकीय व्याख्या तथा व्याकरण की मात्रा की गलती न होने पाये, क्या इसीलिए किये थे ? नहीं विल्कुल नहीं ! ! हिंदुत्व के अतिरिक्त उन्हें जीवन ही नहीं भाता था, वे जीना ही नहीं चाहते थे—'धर्म हेतु साका तिन किया, सिर दिया, पर शिरह न दिया।' उनकी तीव्र इच्छा ही उनकी हिंदुत्व की व्याख्या, उनका हृदय ही उनका व्याकरण !

हिंदुओ ! अपना राष्ट्र गत दो सहस्र विशुद्ध ऐतिहासिक वर्षों तक जो जीवित रह सका, वह केवल यदृच्छया जीवित रह गया, इसलिए है

जम सका, जो लोग ऐसा कहते हैं, वे मूर्ख हैं। हम जीवित रहे, क्योंकि जीवित रहने के लिए हम ही सबसे योग्य थे।(We survived because We proved flttest to survive) उन परिस्थितिओं से जूझने के लिए जो-जो भूलना आवश्यक था, वह हम भूल गये और जो कुछ अपनाना आवश्यक था, वह सीखे भी। ओर इसलिए उन परिस्थितियों पर भी विजय पाकर जीवित रह सके।

संसार पर विजय करता हुआ सिकन्दर आया। उसके पास हमसे वहुत कुछ अधिक था। उसने हिसाव से आक्रमण किया, किन्तु शीघ्र ही चाणक्य ओर चन्द्रगुप्त ने ग्रोकों को शस्त्र-संघटना समेट उन्हें आत्मसात् कर लिया। जो अपने मण्डल में कच्चा था, उसे निकाल कर पक्का कर लिया।

ग्रीकों से सवाये होकर उन्हें केवल सिन्धु-पार ही नहीं, अपितु हिंदूकुश के भी उस पार मार कर भगा दिया। हूण आये, शक आये। उन्होंने समस्त एशिया, आधा योरुप विध्वस्त किया था, इतने वे वलशाली थे। उनके घड़ाके से ही आधा भारत कांप उठा था। किन्तु दो शतक तक निरन्तर जूझते हुए, उनसे लड़ने के लिए जिन नये शास्त्रों की, नये अनुसन्धानों की आवश्यकता थी, उन्हें शीघ्रातिशीघ्र अपनाकर, उन हूणों के प्रवलतम सम्राट्र का शिरच्छेद किया। एक के पीछे एक अनेक समरमें शकों की धज्जियां उड़ा दीं, विक्रमादित्यों, हूणारियों और शकारियों की परम्परा निर्माण करके भारतीय विजय के जय-स्तम्भ स्थान-स्थान पर खड़े कर दिये। वे आज भी साक्षी दे रहे हैं। उस समय, उस पीढ़ी में हम जो पुनः-पुनः बलशाली और श्रेष्ठ हो सके वह इसीलिए कि हमने अपने दांव, आचार, दोष, व्यंग्य एकदम चटाक से वदल डाले। सतयुग का जो टिकने वाला-सा नहीं प्रतीत हुआ उसे कलि-वर्ज्य ठहराया और जो नया सीखने योग्य हुआ उसे कलि-ग्राह्य ठहराया। स्मृति में जो परिवर्तन इष्ट था उसे किया, जो विगड़ गया था उसे सुधार दिया और जीवित रहे। क्षत्रियों ने रणाग्नि में और ब्राह्मणों ने शुद्धीकरण यज्ञाग्नि में यवन, हूण, शकों को जला कर ऐसा भस्म किया, उदरसात् कर लिया कि इस समस्त भारतवर्ष में ग्रीक, हूण अथवा शक—कोई नाममात्र को शेष न रहने पाये।

वाद में मुसलमान उठे। उन्होंने सीरिया, ईरान, बैविलोन, अफ्रीका नहीं के वरावर कर दिया। हम उनकी जयिष्णु वृत्ति के सामने कम पड़ गये। वड़ा प्रलय का समय आया, फिर भी छह सौ साल तक हम उनसे जझे, पर दम न छूटने दिया। अन्त में मुसलमानों के लड़ने के लिए पर्याप्त

साधन-सामग्री एवं सामर्थ्य हम अपने में लाये, उन्हीं के शस्त्रास्त्र, उन्हीं के दांव-पेच सीख कर, उन्हीं के हथियार छीन कर हिन्दुस्तान-भर में हिन्दू-मात्र जाग उठा! मुहम्मद विन कासिम से लेकर सन् १६२७ तक साधारणतः जहां-जहां हिन्दू-मुस्लिम लड़े वहां हिन्दू का पराभव निश्चित था, परन्तु सन् १६२७ से १७६५ तक जहां-जहां वे लड़ने आये वहां-वहां हिन्दुओं ने उन्हें पछाड़ दिया। सिक्ख, राजपूत, गोरखा, बुंदेले, मराठा—हिन्दुओं के लक्षावधि वीरों का मानो वन-का-वन उठ खड़ा हुआ। सम्पूर्ण हिन्दुस्तान पुनरपि हिन्दू समाज के अधीन लाया गया। शत-शत युद्धों में हिन्दुओं ने एक के पीछे एक विजय प्राप्त की, पंजाब में सिक्खों का राज्य, नेपाल में गुरखे और दिल्ली से त्रिचनापल्ली—तंजोर तक मराठों का राज्य!

अतएव, हम जीवित रहे तो विजयी होकर। परिस्थिति से टक्कर ले सके इसलिए जीवित रहे। किन्तु यह जितना सत्य है उतना ही सत्य यह भी है कि इसके आगे की वर्तमान परिस्थिति से टक्कर लेने में भी हम टिक सकेंगे। केवल आज तक जीवित रहे इसलिए बैठे-बैठे अब भी जीवित रह सकेंगे, सो नहीं।

अब हमारा सामना विज्ञान से है। इसीलिए जो-जो रूढ़ियां, आचार शास्त्र, शस्त्र, विज्ञान के ढांचे में जोख-परख कर सोलह आने ठीक उतर सकेगा, वही आज के समय का हमारा हिन्दू-धर्म है। जो-जो हल्का, कम टिकाऊ है, उसे जला कर भस्म कर दो; वही इस युग का अधर्म; इस काल का कलि-वर्ज्य! सौभाग्य से अपने हिन्दू-राष्ट्र की नैसर्गिक शक्ति फिर उद्दीपित होती हुई दिखाई दे रही है। यदि तनिक धैर्य के साथ और विज्ञान के हथियार से ही विज्ञान से लड़ेंगे तो संकट से छिड़ी हुई लड़ाई में निश्चित विजयी होकर रहेंगे। हिन्दू रह कर जीतेंगे! जब मरना होगा तब या तो सेनानी के समान मरेंगे या गुरु गोविन्द सिंह के समान! किन्तु कायर के समान हिन्दू से अहिन्दू होकर नहीं, कदापि नहीं! ●●●

धर्मान्तर याने राष्ट्रान्तर

धर्म-परिवर्तन के इस षड्यन्त्र की ओर पैनी दृष्टि से देखते रहो। केवल द्वैत और अद्वैत का विवाद अथवा चेतन-अचेतन वस्तुओं के अनुसंधान का अर्थ धर्म नहीं है। धर्म का अर्थ है—व्यवहार। धर्म अर्थात् इतिहास, धर्म अर्थात् राष्ट्र और इस धर्म का त्याग किसने किया है? यदि इंगलैंड का राजा प्रोटेस्टेंट न हो, तो उसे त्याग-पत्र देना पड़ता है। अमरीका के प्रेजिडेण्ट को प्रोटेस्टेंट बाइबिल की शपथ ग्रहण करनी पड़ती

है। पश्चिम एशिया का हरेक छोटा-मोटा राष्ट्र भी धर्म-प्रधान है। हम सारे जगत् में भ्रमण किये हुए लोग हैं। मिशनरियों से हमें धर्म-निरपेक्षता की गप्पें हांकने से क्या लाभ ? मनुष्य धर्म-रहित जीवित ही नहीं रह सकता है। धर्म ही प्रचण्ड सामर्थ्य है। धर्म-हीन स्टालिन को भी यह मान्य करना पड़ा।

आज हमारे देश में विदेशी ईसाई मिशनरियों ने धूम मचाई है। गोवा और त्रावणकोर में दंगे कराकर उन्होंने धर्म-परिवर्तन कराया है। अन्य स्थानों में शिक्षा, औषधि, अन्न आदि मार्गों से वे धर्म-परिवर्तन करा रहे हैं। किन्तु, 'धर्मान्तर म्हणजेच राष्ट्रान्तर' है। धर्म-परिवर्तन का अर्थ राष्ट्रीयता का परिवर्तन है। हिन्दुओं में सहिष्णुता का पागलपन वहुत वढ़ गया है। विदेशियों ने प्रचारित किया है कि हिन्दू-धर्म के समान सहिष्णु धर्म नहीं है। हिन्दू-धर्म अंशतः सहिष्णु है और अंशतः असहिष्णु। न्याय से सहिष्णुता और अन्याय से असहिष्णुता, यह हिन्दू-धर्म का पाठ है। अन्याय से सहिष्णुता, यह कायरता है। इसलिए हिन्दुओ ! ईसाई-धर्म प्रचारकों की गतिविधियों का साहस से प्रतिकार करना चाहिए। हिन्दू सभा, आर्य-समाज आदि हिन्दुत्वनिष्ठ संस्थाओं को ईसाई मिशनरियों के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा खड़ा करना चाहिए। हिन्दुओं को मिशनरियों का वहिष्कार करना चाहिए। समय रहते सावधान होने से धर्मान्तरान्तर्गत राष्ट्रान्तर का संकट टल सकता है।

हिन्दू जव तक हिन्दू है, तभी तक तक वह भारत की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग कर सकता है, सर्वस्व होम कर सकता है। वह प्यारी मातृभूमि परम पवित्र पुण्य-भूमि के लिए प्राण देकर 'स्वर्ग' व मोक्ष-प्राप्ति की कामना कर सकता है। किन्तु यदि वह धर्म-परिवर्तन करके मुसलमान या ईसाई हो गया तो फिर वह क्यों व्यर्थ ही इस मिट्टी के ढेर को रक्षा के लिए प्राण देगा ? उसकी पुण्य-भूमि भी वदलकर काशी से मक्का-मदीना हो जाएगी। अतः यह निश्चयपूर्वक समझ लेना चाहिए कि इस देश का सच्चा राष्ट्रीय, वास्तविक भक्त हिन्दू ही रहेगा।





शुद्धि-आन्दोलन की उपयोगिता

—स्व० श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय—



यह तो भली भाँति सिद्ध हो चुका है कि पुराने जमाने में दुनिया भर में हिंदू (आर्य) जाति रहती थी और वेद को मानती थी। परन्तु आज हिन्दुस्तान में भी एक तिहाई से अधिक लोग वैदिक धर्म त्याग बैठे हैं, और चोटी जनेऊ रखने वाले तथा गौ की रक्षा करने वालों की संख्या दिन प्रतिदिन कम हो रही है। इसके मुख्य कारण दो हैं—पहिला तो यह है कि हिन्दुओं ने अपने वैदिक धर्म का उपदेश दूसरों को करना छोड़ दिया। दूसरे जब कभी कोई जबरदस्ती मुसलमान या ईसाई बना लिया गया और उसने अपने धर्म में आने के लिए इच्छा प्रकट की तो उसी के भाइयों ने उसे यह कह कर दुत्कार दिया कि अब तुम सदा के लिए गिर गये, हिंदू धर्म में वापिस नहीं आ सकते। जब दूसरे धर्म वालों को यह पता लगा कि हिंदू धर्म ऐसा कच्चा धागा है कि फूंक मारते ही टूट जाता है तो उन्हें हिंदुओं को अपने धर्म में मिलाने में बड़ी आसानी हो गयी। अगर किसी भूले भटके को जबरदस्ती खाना खिला दिया, या मुंह में थूक दिया तो उस बेचारे को मुसलमान बनना पड़ा। हिन्दुओं ने तो उसे अपने में से निकाल कर फेंक दिया। यदि किसी स्त्री का किसी ने सतीत्व भंग कर दिया तो उसके घर वालों की चढ़ बनी। बिना परिश्रम के ही उनके धर्म वालों की संख्या बढ़ने और हिंदुओं की संख्या घटने लगी।

मुसलमानी राज्य के समय लाखों ऐसे हिंदू थे जो बलात् मुसलमान बना लिये गये। इनको मुसलमानी धर्म तो पसन्द न था परन्तु हिंदू उनको अपने में रहने नहीं देते थे। इसलिए उन बेचारों में से बहुत से तो मुसलमान हो ही गये। परन्तु लाखों ऐसे राजपूत भी थे जिनको हिंदुओं में वापिस आने की बड़ी लालसा थी। मुसलमानी धर्म तथा संस्कारों को ग्रहण करने

में उनको ग्लानि होती थी। उनके बाप दादों ने गौ को माता कह कर पुकारा था। मुसलमानी धर्म में रह कर वह गाय की कुर्बानी नहीं कर सके। उनके बाप दादों ने चोटी रक्खी। इसलिए चोटी काटने से उनका जी दुखता था। मुसलमानी धर्म में चचेरे भाई बहिन का विवाह धर्मानुसार समझा जाता था। हिन्दुओं में एक गोत्र में विवाह महापाप समझते थे। मुसलमानों में जिस लोटे में पाखाना जाते उसे विना मिट्टी से साफ किये पानी पी सकते थे। हिन्दुओं को इन बातों से सैंकड़ों पीढ़ियों से घृणा थी। ऐसी दशा में इन लोगों की मुश्किल थी। एक ओर उनकी रुचि मुसलमानी धर्म में न थी। दूसरी ओर उनके हिन्दू रिश्तेदार उनको अपने में मिलाने के लिए राजी न थे। अब उन्होंने एक उपाय सोचा। वे मुसलमान तो न हुए परन्तु उन्होंने अपने को 'नौ-मुस्लिम' (नये मुसलमान) या अधवरिया कहना शुरू किया। उन्होंने रस्म-रिवाज हिन्दुओं के से ही रक्खे। वे राम राम कहते, हिन्दुओं की तरह चौका लगा कर खाना खाते, विवाह शादी हिन्दुओं की भाँति करते, अपने नाम हिन्दुओं की तरह "सिंह" पर रखते, परन्तु विवाह में कभी-कभी मुसलमान मौलवी को भी बुला लेते थे। मौलवी को कभी-कभी बुला लेने से उस समय के राज कर्मचारी उनको मुसलमान समझकर अत्याचार न करते थे। दूसरी बात यह थी कि मुसलमान समझते थे कि अब ये हिन्दू धर्म में जा ही नहीं सकते, समय पाकर इनको मुसलमान ही होना पड़ेगा।

इस प्रकार लाखों राजपूतों ने, जिनको मलकाना कहा जाता है, अपनी एक अलग जाति बना कर कई सौ वर्ष इस मुश्किल के साथ गुजार दिये जैसे दांतों के बीच में जीभ होती है। इधर उनको मुसलमानी धर्म से ग्लानि, उधर हिन्दुओं को उनसे घृणा। करते तो क्या करते। ऐसे नौ-मुस्लिम आगरा, एटा, इटावा, मथुरा, फर्रुखाबाद, गिरगांव, दिल्ली, भरतपुर आदि प्रान्तों में लाखों हैं। कई हिसाब लगाने वालों ने तो इनकी संख्या २७ लाख तक लिखी है। आगरा जिले के सरकारी गजेटियर में लिखा है, "धर्म परिवर्तन किये हुए हिन्दुओं के अनेकों वंशज इस जिले में सर्वत्र पाये जाते हैं। पर कारोली तालुके के छः गांवों में इनकी विशेष वस्ती है। इसके बाद मथुरा, एटा और मैनपुरी जिलों में भी इनकी खासी वस्ती है। ये मलकाना कहे जाते हैं। वे धर्म परिवर्तन किये हुए राजपूतों की श्रेणी में रखे जाते हैं। भिन्न-भिन्न स्थानों में वे अपनी भिन्न-भिन्न उत्पत्ति वतलाते हैं, पर इसमें सन्देह नहीं कि उनके पूर्व पुरुष उच्चवंश-सम्भूत राजपूत जमींदार थे। यद्यपि दुःख के साथ वे अपने को मुसलमान कहते हैं, पर पूछने पर अपनी

पहली जाति ही बतलाते हैं और मलकाना के नाम से पुकारे जाना नहीं चाहते। उनके नाम हिन्दुओं के से होते हैं और वे हिन्दू मन्दिरों में पूजा करते हैं और उनके आपस में शिष्टाचार का शब्द "राम-राम" है। वे शिखा रखते हैं और अपनी ही जाति में ब्याह करते हैं और 'मियां ठाकुर' कहलाना चाहते हैं।

मलकाने हिन्दू राजपूत थे

इससे सिद्ध है कि मलकाने राजपूत हिन्दू ही हैं। वहुत से मुसलमान लोग इनको पक्का मुसलमान वनाने के लिये इनमें पहुंचे और तहकीकात करके जो रिपोर्ट मुसलमानी अखवारों में दी उससे भी यही सिद्ध होता है– कु० मुहम्मद अशरफ साहव, बी० ए० (अलीगढ़)।

सहयोगी 'जमींदार' लिखता है—"मुस्लिम राजपूतों की वसावट जिला आगरा और मथुरा के निकट पांच-छः लाख के लगभग है साधारणतया नाम 'सिंह' और 'नारायण' पर होते हैं। रीति रिवाज में सव हिन्दू हैं; कोई इनमें मुसलमानीपन नहीं। गौरी, खिलजी या औरंगजेव के समय में इनके पूर्वज मुसलमान हुए थे। ये ग्राम २५ के लगभग हैं।"

मुस्तफा रजा कादर सदर गफर इस्लाम वरेली आगरा से 'वकील' अखवार, अमृतसर को लिखते हैं—उनके नाम हिन्दुओं के हैं, सिर पर चोटी रखते हैं। न "अपना वर्तन किसी को देते हैं न दूसरों का स्वयं व्यवहार करते हैं।"

ऐसे लोगों की उनके हिन्दू भाइयों ने वहुत दिनों तक परवाह न की और हिन्दुओं की दिन प्रतिदिन घटती ही होती रही। परन्तु जब आर्यसमाज ने अन्य धर्मावलम्बियों की शुद्धि करके उन्हें वैदिक धर्म में मिलाना आरम्भ किया और सैकड़ों चोटी विहीन शिरों पर चोटी रखाकर वैदिक-धर्म का अमृतपान उनको कराया, उस समय से मलकाना राजपूत भी फिर अपनी पुरानी विरादरी में लौटने के स्वप्न देखने लगे और उनकी लालसा दिन प्रतिदिन वढ़ती गई। वे केवल यह चाहते थे कि उनके पुराने रिश्तेदार राजपूत उनको अपने में मिला लें। यह मामला बहुत दिना तक क्षत्रियों के सम्मुख उपस्थित रहा। ३० अगस्त १९२२ को क्षत्रिय उपकारिणी महासभा की प्रतिनिधि सभा की बैठक वनारस में हुई। अध्यक्ष का आसन माननीय राजा श्री रामपालसिंह साहव के०सी०आई०ई० मेम्बर स्टेट कौंसिल ताल्लुकेदारान सभा अवध ने ग्रहण किया। उसमें इस आशय का प्रस्ताव किया गया कि जो राजपूत शाही समय में वलात् मुसलमान बनाये गये थे, परन्तु उनके वंशज अब फिर अपने धर्म और बिरादरी में वापिस आना चाहते हैं, उनको

शुद्ध करके विरादरी में मिला लिया जाय। फिर २६ दिसम्वर १६२२ को क्षत्रियप्रतिनिधि सभा की बैठक आगरा में लेफ्टिनेण्ट राजा दुर्गानारायणसिंह जी तिरवा (फर्रुखावाद) नरेश के सभापतित्व में हुई और उस समय क्षत्रिय जनता की सम्मति जानकर मलकाने राजपूतों को विरादरी में मिला लेने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। इसके वाद क्षत्रिय महासभा का २६ वां वार्षिकोत्सव ३१ दिसम्वर को आगरा में श्रीमान् राजाधिराज सर नाहर सिंह जी के० सी० आई० ई० शाहपुराधीश की अध्यक्षता में हुआ। उसमें उपर्युक्त प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

इसे स्वीकृति की ही देर थी। स्वीकृति पाते ही मलकाना राजपूतों को शुद्ध करना प्रारम्भ हो गया।

इच्छा तो दोनों ओर थी ही; केवल संस्कार की कसर थी। सो शुद्धि सभा ने पूरी कर दी। स्वामी श्रद्धानन्द जी दिल्ली, श्री महात्मा हंसराज जी लाहौर से तथा कई सनातनधर्मी, जैनी तथा अन्य महाशयों ने मिलकर कार्य करना आरम्भ किया। हवन किये गये और मलकाना राजपूतों को फिर अपनी विरादरी में मिला लिया गया। समस्त हिन्दू जाति में इस शुद्धि से कितनी जागृति हुई है, उसके समाचार पत्रों में छपते ही रहते हैं। हम यहां केवल 'अभ्युदय' से कुछ अंश उद्धृत करते हैं—

"अव आशा प्रवल होती है कि हिन्दू जाति फिर एकवार शक्तिशाली होगी। हिन्दू भाइयों ने हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति की लाज रख ली। जो साढ़े चार लाख राजपूत किसी समय में दवाव से अपनी कमजोरी से मुसलमान हो गये थे, उनको शुद्ध कर अंक में ले लेने का हिन्दू जाति जोरों से प्रयत्न कर रही है। वास्तव में जीती जागती जाति का यह एक ज्वलन्त प्रमाण है कि यह गैरों को अपना लें और अपना सा वना ले। हिन्दू जाति का इतिहास यदि देखा जाय तो यह छिपा नहीं है कि कितने अवसरों पर इसने दूसरों को अपने गर्भ में ले लिया था। इसके विपरीत इतिहास की यह भी घोषणा है जिस दिन से हिन्दू जाति ने अपनी संख्या में इस तरह की वृद्धि का खयाल छोड़ा उसी दिन से उन्नति के मार्ग की ओर उसकी पीठ हो गई। आज हिन्दू जाति को फिर अभियान करने का अवसर प्राप्त है क्योंकि हमारा दृढ़ विश्वास है कि इन साढ़े चार लाख विछुड़े हुए भाइयों के मिलने के साथ ही ऐसे ही अन्य भाइयों के भी मिलने से हमारा सौभाग्य-सूर्य्य शीघ्र ही गगनमंडल में चमकता हुआ दिखाई देगा। हम हिन्दू जाति को इस अवसर पर वधाई देते हैं।"

वहुत से लोग समझते हैं कि इसमें केवल आर्यसमाज ही काम करता है, परन्तु यह कहना भूल और भ्रम है। शुद्धि की स्वीकृति सभी सभाओं ने

दी हुई है। कुछ सभाओं के नाम यहां दिये जाते हैं—सनातन धर्म की सर्व-प्रधान संस्था भारत धर्म महामण्डल ने मलकाना राजपूतों की शुद्धि को पास कर दिया है। जिस अधिवेशन में यह प्रस्ताव पास हुआ उसके सभापति श्री दरभङ्गा नरेश स्वयं थे। कवीरमठ और शारदा पीठ के जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी पहले ही शुद्धि की व्यवस्था दे चुके हैं। महाराष्ट्र परिषद्, साधु महासभा, गुर्जर महासभा, जाट महासभा, राजपूत क्षत्रिय महासभा ने भी हर्षपूर्वक शुद्धि को अपनाने का निश्चय किया है। अमृतसर, लाहौर, लायलपुर आदि शहरों से सनातनी पण्डित लिखित व्यवस्था दे चुके हैं। सनातन धर्म के प्रसिद्ध वक्ता श्री पण्डित दीनदयालु शर्मा आगरा में पधारे और शुद्धि के कार्य को न केवल पसन्द किया किन्तु उसमें भाग लेने का निश्चय किया था।

शुद्धि के कार्य में वह कौन सा गुण है जिसने आज भारतवर्ष की हिन्दू जाति को आकर्षित कर रखा है? वस्तुतः अपने सजातीय लोगों को अपने में मिलाने से सभी जीती जगती जातियाँ खुश होती हैं। मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपने दूसरे भाई से मिलकर खुश हो। केवल कुत्ता ही ऐसा प्राणी है जो दूसरे कुत्ते को देखकर भौंकता है। इसलिये यदि हिन्दू लोग अपने विछुड़े भाइयों को मिलाने से प्रसन्न होते तो इसमें आश्चर्य ही क्या? आश्चर्य तो इस वात का है कि हिन्दू जाति इतने दिनों तक सोती रही और अपने भाइयों के मिलाने में तत्पर न हुई। परन्तु आज हिन्दू जाति के वच्चे-वच्चे को शुद्धि के गुण मालूम हो गये हैं। सवको भली प्रकार यह मालूम हो गया है कि यदि हम शुद्धि में भाग न लेंगे तो एक दिन रही-सही हिन्दू जाति सृष्टि से उड़ जायेगी। राम और और कृष्ण के नाम भूमण्डल पर न रहेंगे। जनेऊ और चोटी का चिह्न संसार से मिट जायेगा। आर्य-सभ्यता का वृक्ष जड से काट कर फेंक दिया जायेगा। आज हिन्दू लोग सोते से जाग बैठे हैं। उनके हृदय में जाति उन्नति की लगन काम करने लगी है। शुद्धि का प्रश्न उनके जीने मरने का प्रश्न है। शुद्धि का काम छाड़ा और हिन्दू जाति की मृत्यु आई।

पर हमारे मुसलमान भाई रुष्ट हैं। तरह-तरह के इलजाम लगा रहे हैं। हमारे अदूरदर्शी हिन्दू भाई भी यह कहने लगे हैं कि शुद्धि वन्द हो अन्यथा मुसलमान नाराज होंगे। परन्तु यह कितनो वड़ी भूल है। मुसलमान सैंकड़ों हिन्दुओं को वलात् मुसलमान वनाते हैं, उस समय तो हिन्दू कुछ नहीं करते। यदि हिन्दू अपने विछुड़े भाइयों को गले लगायें तो न्यायशील मुसलमानों को रुष्ट नहीं होना चाहिये। अपना धर्म पसन्द करने के लिए

हर एक को स्वतंत्रत्रता है और इस स्वतंत्रता को छीनना पाप है। हम किसी की गर्दन पर तलवार रखकर यह नहीं कहते कि 'शुद्ध हो जाओ।' परन्तु जो स्वयं शुद्ध होना चाहते हैं उनको तो रोकना महापाप है। कुछ लोग कहते हैं कि मुसलमान लोग शुद्धि से चिढ़कर अधिक गोहत्या करेंगे। मुसलमानों ने भी यही धमकी दी है। परन्तु हिन्दुओं को ६ मास की राह चलकर साल भर की राह न चलनी चाहिये। प्राचीन काल में जब मुसलमानों ने हिन्दुओं पर आक्रमण किया तो वे अपनी सेना के आगे गायें खड़ी कर देते थे। समझते थे कि हिन्दू तो गायों को बचाने लिये हम पर हथियार न चलायेंगे और हम हिन्दुओं को मार लेंगे। यही हुआ और हिन्दू जब हार गये तो अन्य गायों को भी न बचा सके। यही चाल मुसलमान लोग अब चल रहे हैं। हमारे ये अनजान भाई इस धमकी में आ जाते हैं। वे यह नहीं सोचते कि ऐसी धमकियों में आकर कब तक दबते जाएंगे। हर बात पर मुसलमान ऐसी धमकी दिया करेंगे। यह गोरक्षा कितने दिन चलेगी। सब से अच्छा उपाय गोरक्षा का यही है कि शुद्ध होने वालों को शुद्ध करके भविष्य में गोहत्या का बीज ही मिटा दिया जाए।

शुद्धि नई बात नहीं

बहुत से लोग कहते हैं कि शुद्धि नई बात है। परन्तु इतिहास देखने से पता चलता है कि जब हिन्दू प्रबल थे तो दूसरे देशवासियों को अपने धर्म में मिला लेते थे। सिकन्दर के साथ बहुत से यूनानी भारतवर्ष में आये। हूण लोग भी बहुत से आये। परन्तु उनकी अलग जाति नहीं मिलती। वे सब हिन्दू ही हो गये। जब हिन्दू जाति गिरने लगी, उस समय इसने दूसरों को मिलाना छोड़ दिया। १९११ की मर्दुम-शुमारी की रिपोर्ट में लिखा है कि सौ वर्ष से कम दिन हुए कि बम्बई प्रान्त के उरप और वरप अग्री (Urap and Varap Agris) हिन्दू जो ईसाई हो गये थे, फिर हिन्दू हो गये। इसी जिले के कृपाल भन्डारी लोगों को पुर्तगालियों ने बलात् ईसाई कर लिया था, परन्तु वे फिर हिन्दू हो गये। बड़ौदा के सुपरिंटेण्डेण्ट ने लिखा है कि तीन सौ वर्ष हुए कुछ लोग मुसलमान हो गये थे, परन्तु वे धीरे-धीरे रामानन्द और स्वामी नारायण के मत में आ गये। इस प्रकार हिन्दुओं में प्रायश्चित्त करा के शुद्ध करने का रिवाज नया नहीं है।

और इस समय तो हिन्दू जाति को बचाने का एक ही उपाय है—तन मन धन से शुद्धि के काम में भाग लिया जाय। प्रत्येक गो-भक्त और शिखा-सूत्रधारी हिन्दू का कर्त्तव्य है कि जब कभी कोई शुद्ध होना चाहे तो झट

ही किसी शुद्धि सभा द्वारा उसको शुद्ध कर लेना चाहिये। यदि आपने अभी तक शुद्धि सभा को सहायता नहीं की तो देर न लगाइये और तुरन्त ही अपना कर्तव्य पालन कीजिये। जो पैसा आप शुद्धि-सभा को देते हैं उससे जन्म-जन्मातर की गो-सन्तान की रक्षा होती है। वेदों का उद्धारहोता है और हिन्दू जाति की उन्नति होती है। सोचो और देर न करो। यही समय है, समय पर चूके और गये।

कुछ लोगों ने आजकल यह कहना आरम्भ किया है कि हम जानते हैं कि शुद्धि अच्छी चीज है। हम यह भी जानते हैं कि हिन्दुओं का अधिकार है कि उनके धर्म में मिलने वालों को मिला लिया जाय, परन्तु इस समय हिंदुओं और मुसलमानों में मेल है। शुद्धि को वन्द कर देना चाहिये। नहीं तो हमारे मुसलमान भाई हमसे रूठ जाएंगे। हमको ऐसा कहने वालों की बुद्धि पर हंसी आती है। यदि यह मानते हैं कि हिंदुओं को अपने धर्म में मिला लेने का उसी प्रकार अधिकार है जैसे मुसलमानों को, तो मेल के समय इस अधिकार को काम में लाने में क्या हानि ! हमने मेल तो इसीलिए किया है कि हमारे अधिकार सुरक्षित रहें। मेल इसीलिये किया जाता है कि परस्पर एक दूसरे के अधिकारों की रक्षा हो। हमने इस समय शुद्धि का काम छोड़ दिया तो फिर कब करेंगे ? यदि हमारे मुसलमान भाइयों में न्याय है तो उनको बुरा नहीं मानना चाहिए। क्योंकि जिनकी शुद्धि की जा रही है, वे हिन्दू ही हैं और अपने भाइयों में मिलना चाहते हैं।

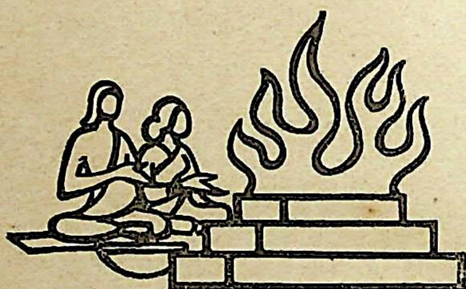
कुछ मुसलमान भाई कहते हैं कि यदि किसी एक परिवार के चार आदमी शुद्धि के लिए तैयार हुए औरएक न हुआ तो बेचारे परवड़ा अन्याय होगा। परन्तु वह यह नहीं जानते कि आज तक लाखों और करोड़ों हिन्दुओं को मुसलमान कर लिया गया। उस समय यह दलील कहाँ गई थी ? आज सैंकड़ों लोग अपने मां बाप को छोड़कर ईसाई मुसलमान हो जाते हैं। फिर लोग इनको दोष क्यों नहीं देते ?

वात यह है कि इस समय हिंदू जाति में जीवन के चिह्न पैदा हो रहे हैं। उठी पैंठ आठवें दिन लगती है। जव लोहा ठण्डा हो गया तो उसको पीटने से क्या बनेगा ?

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मुसलमान हमारे हिंदू भाइयों को मुसलमान बनाने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। हसन निजामी ने लिखा है कि जो मुसलमान दस हिंदुओं को मुसलमान नहीं बनाता वह सच्चा मुसलमान नहीं है। हमारे हिंदू भाइयों को भी. इससे उचित शिक्षा लेनी

चाहिये और जहाँ कोई मुसलमान शुद्ध होना चाहे उसको फौरन शुद्ध कर लेना चाहिए। साथ ही यह भी प्रयत्न करना चाहिए कि हमारे भाई मुसलमानों के फंदे में न पड़ जाएं। जो हिन्दू मुसलमान हो रहा हो, उसे समझाना चाहिए।

नगर नगर में हिन्दू संगठनों का खुल जाना आवश्यक है। विना संगठन किये हम में शक्ति नहीं आ सकती। हिन्दुओं को चाहिये कि आपस में प्रीति पूर्वक व्यवहार करें और अपने धर्म की रक्षा करें।

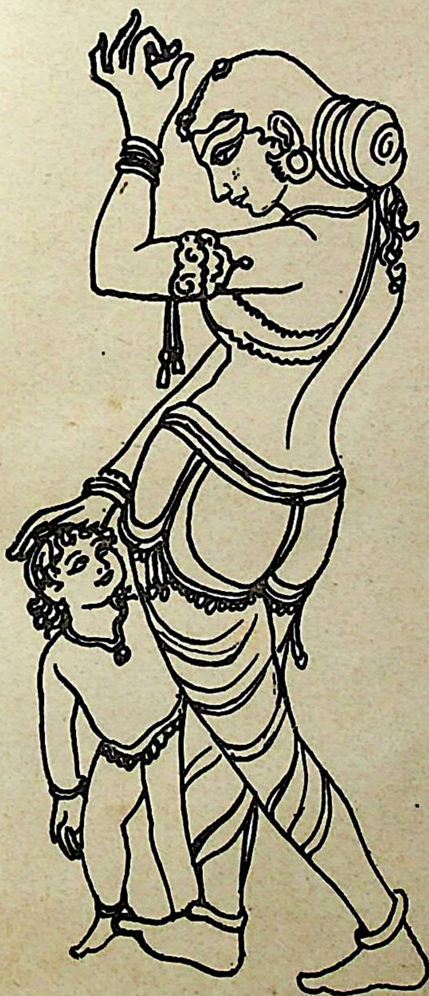


खुदाबख्श और ईश्वरदत्त

भारत के मुसलमान चौराहे पर खड़े हैं। यहां उन्हें स्पष्ट करना होगा कि वे भारतीयता को अपनायेंगे या अपना प्रेम और आदर्श भारत भूमि से वाहर रखेंगे। भारतीयता के अपनाने का अर्थ यह नहीं है कि वे हिन्दुओं की देवमाला मानें या हिन्दू वनें। वे भले हो पाँच वार नमाज पढ़ें, लेकिन क्यों वे ईश्वरदत्त की जगह फारसी के खुदावख्श को तो पसंद करते हैं, परन्तु भारतीय नाम को नहीं।

—महापंडित राहुल सांकृत्यायन

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः



भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं

क्या पुनः अखण्ड भारत बनाया जा सकता है ?

—म० म० आचार्य विश्वश्रवाः व्यास वेदाचार्य एम०ए०

यह खण्डित भारत अब पुनः अखण्ड भारत (पाकिस्तान, बंगला देश, बर्मा युक्त) किया जा सकता है या नहीं, इसका उत्तर प्रत्येक व्यक्ति यह देगा कि 'नहीं'। क्यों ? इसका भी उत्तर सबका यह होगा कि अब संसारका वातावरण और प्रकार का है, पहले जैसा नहीं। आज कोई देश दुर्बल नहीं, हरेक के सिर पर कोई न कोई महान् शक्ति बैठी है। हमारी दृष्टि में यह उत्तर गलत है।

यह भारत अनेक बार छोटा हुआ है और अशोक विक्रम आदि ने इस भारत को फिर बृहत्तर भारत बनाया है।

चीन ने समस्त तिब्बत पर कब्जा कर लिया, किस महान् शक्ति ने उसका संरक्षण किया ? जो तिब्बत चीन का कभी नहीं था, वह चीन का हो गया। हम तो अपने गये हुए देश को वापिस लेने की सोच रहे हैं, किसी अन्य के देश को नहीं।

हां हिन्दुओं का इतिहास मूर्खता का इतिहास रहा है। उसे ये छोड़ दें तो अब भी सब कुछ हो सकता है।

मूर्खता का इतिहास

१—महाभारतकाल में क्षत्रिय धर्म समझ कर जो कुछ किया गया उसे आने वाली सन्तान ने मूर्खता ही कहा—

महर्षि व्यास महाभारत युद्ध के समय उपस्थित थे। कलियुग के प्रथम दिन राजा बने परीक्षित के पूरे जीवनकाल तक व्यास जी जीवित रहे। दीर्घायु व्यास परीक्षित-पुत्र जनमेजय काल में भी जीवित थे। उस समय जनमेजय

के पूछने पर व्यास ने महाभारत इतिहास रचा। व्यास से जनमेजय ने पूछा—

कुरूणां पाण्डवानां च भवान् प्रत्यक्षदर्शिवान्।

कौरव पाण्डवों का युद्ध आप ने प्रत्यक्ष देखा था इन मेरे पूर्वजों को क्या हो गया था। जनमेजयन ने अपने पूर्वज दादे परदादों को स्पष्ट शब्दों में कहा कि—**दैवेन नष्ट चेतसाम्**—अर्थात् दैव ने मेरे पूर्वजों को बुद्धि नष्ट कर दी थी।

२—राजपूतों का सारा इतिहास—राजपूती आन वाली सारी कहानियां—अज्ञान की कहानियां हैं।

३—और अब महामूर्खता का इतिहास बन रहा है—

(क) सृष्टि के आदिकाल से आर्यावर्त हिन्दुओं का एक मात्र देश रहा—पर अब ऐसा कहने वाले को सांप्रदायिक और धर्म-निरपेक्षता को बढ़िया बात समझा जाता है। सांप्रदायिकता और धर्म-निरपेक्षता इन दोनों शब्दों को आगे के इतिहासकार महामूर्खता कह कर पुकारेंगे।"

(ख) आगे के इतिहासकार लिखेंगे कि हिन्दुओं ने अपनी मूर्खता से देश को खण्डित कराया और फिर खण्डित देश को भी अपना देश न बना सके।

आगे के इतिहासकार हमें ऐसा न कहें, अतः समय रहते इस खण्डित भारत को पहले हिन्दू राष्ट्र बनाओ, फिर कोई न कोई अशोक या विक्रम पैदा हो जावेगा, जो इस खण्डित भारत को बृहत्तर भारत बनाएगा।

राष्ट्रीय और अराष्ट्रीय

भारत हिन्दू राष्ट्र है, ऐसा कहने वाला इस देश में राष्ट्रीय है और मुस्लिम परस्त लोग अराष्ट्रीय हैं। कांग्रेस से लेकर भारतीय जनता पार्टी तक सब राजनीतिक पार्टियां अराष्ट्रीय हैं, जिस दिन यह भावना हिन्दुओं में भर जावेगी, उस दिन सब अराष्ट्रीय राजनीतिक संगठन धराशायी हो जावेंगे।

हर राजनीतिक पार्टी के सदस्य संख्या में बहुत कम हुआ करते हैं। देश की आबादी बहुत अधिक होती है। जनता जिधर को झुक जावेगी उस के हाथ में देश होगा। सब से दृढ़ संगठन कांग्रेस भी एक छक्के में कहीं से

कहीं गया। अतः कोई राष्ट्रीय संगठन खड़ा हो और इन सब अराष्ट्रीय राजनीतिक संगठनों को धराशायी किया जावे। स्पष्ट घोषणा हो कि—

जो संरक्षण चाहता है उस को वोट नहीं।
जो वोट चाहता है उस को संरक्षण नहीं।

वीर सावरकर के अन्तिम शब्द—

अंग्रेज उस समय गया नहीं था, जाने वाला था। कानपुर के अधिवेशन में सावरकर जी ने निम्न शब्द कहे थे—

क. अंग्रेज के जाने पर खून की नदियां बहेंगी। अतः हिन्दुओ! तत्क्षण पुलिस और सेना में भर्ती होकर हथियार अपने हाथ में ले लो।

ख. नैपाल नरेश को निमन्त्रित करो और नैपाल को भारत का प्रान्त वनाओ।

भारत का वर्तमान विधान गलत है

भारत का वर्तमान विधान गलत है। इसके होते हुए यदि हम समस्त पाकिस्तान और बंगला देश पर युद्ध द्वारा विजय प्राप्त भी कर लें तो भी हानि होगी, लाभ कुछ नहीं। विजय प्राप्त करके भारत में मिला लेने पर उन प्रदेशों की विधान सभाएं उन की ही रहेंगी और उनके उतने संसत्सदस्य लोक सभा और राज्यसभा में लेने पड़ेंगे। यह स्पष्ट हानि ही होगी।

पाकिस्तान का विधान सही है। यदि वह भारत पर विजय प्राप्त करले तो उसका कुछ नहीं विगड़ेगा। वह वृहत्तर पाकिस्तान वना सकता है।

हिन्दू जाति के सबसे बड़े शत्रु

सृष्टि के आदिकाल से चल रही इस हिन्दू जाति को न अंग्रेज नष्ट कर सके, और न मुसलमान वादशाह। पर इस का नाश धर्म-निरपेक्षता का नारा लगाने वाले सरलता से कर देंगे। अतः हिन्दू जाति के सवसे बड़े शत्रु इन धर्मनिरपेक्षवादियों से कोई इस हिन्दू जाति की रक्षा करले, अन्यथा यह महाग्राह सव को निगल जावेगा।

इन महाग्राहों का लक्ष्य एक मात्र यह रहता है कि चाहे हिन्द जाति नष्ट हो जावे, पर राजसत्ता हमारे हाथ में आ जावे। यह समझते हैं कि हिन्द तो मर्ख हैं ही, हमें वोट देंगे ही, मुसलमानों की खुशामद करो, इनका वोट और ले लो—

वोट धर्म वोट कर्म वोट ही परमं पदम् ।
जिस से वोट न मिले वह मात पिता भी परम अधम ॥

अब सुनो महावाक्यों को

१. सम्राट् अशोक ने भारत को बृहत्तर भारत बनाया था। अब भारत के राष्ट्रीय झण्डे में रखा अशोक चक्र भारत को बृहत्तर भारत बनायेगा।

२. भारत में कोई गैर हिन्दू नहीं है। मुसलमानों ने झूठे अपने नाम के साथ कुरेशी आदि शब्द लगा रखे हैं। ये सब हमारे पूर्वजों की सन्तान हैं। इन्हें वापिस लेकर रहेंगे।

३. भारत की मुस्लिम बहनें वे ही गाने आज गा रही हैं जो गाने हमारी नानी या दादी गाती थीं। जैसे—

क. बेला भी बोया चमेली भी बोई बिच बिच न बोया गुलाब रे।

ख. मधुबन में न जाना सखी मधुबन में।

ग. द्रुपदसुता के गीत गाते हमने भूतपूर्व हिन्दू बहनों (मुस्लिम स्त्रियों) को देखा है। ये सब हमारी हैं। 'यथापूर्वमकल्पयत्' करना है।

४. हिन्दुओं के पूर्वजों की जन्म भूमियां जिन से हमारा इतिहास ओत प्रोत है, हमारी हैं, हमारी होंगी।

५. हिन्दुओं में राष्ट्रीय भावना भर कर अराष्ट्रीय राजनीतिक संगठनों को निरस्त करके लोकसभा और राज्यसभा में बैठकर ऐसा विधान बनायेगे

जिस व्यक्ति का भारतेतर किसी देश के साथ धार्मिक या राजनैतिक सम्बन्ध न हो वह इस देश में वोट का एक मात्र अधिकारी है।

६. इतिहास सदा से यह रहा है कि पहले असुरों की विजय होती है, फिर अन्त में देव ही विजयी होते हैं।

७. अराष्ट्रीय भारतीय सेनाएं कश्मीर को अधूरा छोड़ कर लौट आईं, लाहौर पहुंच कर वापिस आ गईं।

८. अब राष्ट्रीय सेनाएं पंजाब सिन्ध को पार करती हुई फ्रंटियर जाकर काबुल की सड़क पर रुकेंगी।

९. बंगला देश और बर्मा को सादर सप्रेम निमन्त्रित करेंगे।

१०. फिर असली पूर्वजों का स्मरण करते हुए सब राष्ट्रीकृत नये पुराने जन एक स्वर में बोलेंगे—

वन्दे मातरम्-वन्दे मातरम्।

—०—

कुछ भविष्य का ध्यान करो !

—प्रो॰ सारस्वत मोहन 'मनीषी'—

भूत काल को रोने वालो
वर्तमान को ढोने वालो

ऐसे कब तक काम चलेगा कुछ भविष्य का ध्यान करो
चाहो देश रह सके जीवित अपना जीवन दान करो

बंटवारा जो करवाया है प्रकट उसी पर खेद करो
जिस थाली में खाना खाते उसमें तो मत छेद करो
अपने होकर गैरों जैसा मत निर्दय बर्ताव करो
अपनी माता की छाती में रोज नये मत घाव करो

समय बड़ा नाजुक है भैया
नचवा देगा ता-ता-थैया

बनकर कृष्ण कन्हैया फिर कंसों पर शर-संधान करो
चाहो...

औरंगजेब हुआ फिर जीवित 'राणा-शिवा' तलाश करो
आस्तीन के सांपों का तुम जरा नहीं विश्वास करो
'राम-कृष्ण' के बेटो जागो पानी सर तक आ पहुंचा
सोचो, समझो, संभलो अब तो दुश्मन घर तक आ पहुंचा

ओ कुर्सी के ठेकेदारों
ओ शरीफ दिखते बटमारो !

ज्यादा ही चढ़ जाय न सिर पर इतना मत सम्मान करो
चाहो...

भारत मां का कभी खून से हो सकता श्रृंगार नहीं
घावों को राहत शीतलता दे सकते अंगार नहीं
देश पेट के लिए बेचकर कोई निशदिन हंसता है
केवल कुर्सी पूज रहे हैं ऐसी क्या परवशता है

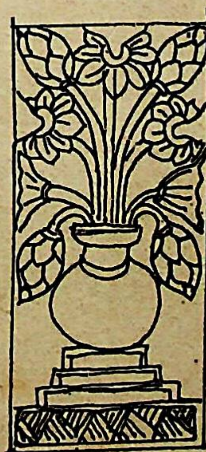
देशभक्त लगते गद्दारो !
अरे स्वस्थ लगते वीमारो !

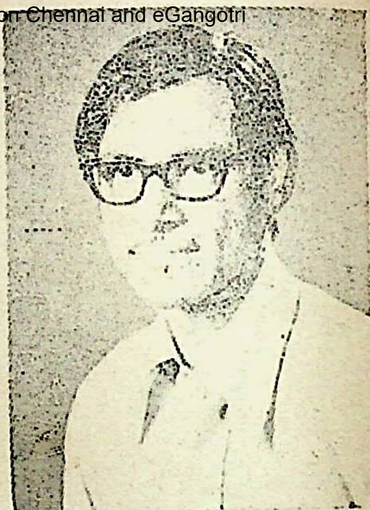
धुंध वढ़ गई है मजहव की इसका तुरत निदान करो
चाहो ....

तुमको पाकिस्तान मिल गया, हिन्दुस्तान हमारा है
हिन्दुस्तान हिन्दुओं का है, यही हमारा नारा है
अपना व्रत है भारत को फिर 'हिन्दू राज्य' वनायेंगे
जाने कितने वीर हकीकत हंसकर शीश कटायेंगे

नई चेतना आ जायेगी
अन्धकार को खा जायेगी

अपने हित के लिए राष्ट्र हित को तो मत कुर्बान करो
ऐसे कव तक काम चलेगा कुछ भविष्य का ध्यान करो





धर्मान्तरण एक समाज-नृवैज्ञानिक की दृष्टि

—डॉ० श्यामसिंह शशि

अंग्रेजी तथा हिन्दी में लगभग पचपन पुस्तकों के लेखक डा० शशि ने काव्य से लेकर समाज, नृ-विज्ञान तक और बाल साहित्य से सैन्य-विज्ञान तक विविध विषयों पर समान रूप से कलम चलाई है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस विद्वान् ने साहित्य-सर्जन, अनुसंधान और समाज-सेवा के क्षेत्र में विभिन्न उपलब्धियां अर्जित की हैं। वेद, उपनिषद्, दर्शन तथा आर्यग्रन्थों के अतिरिक्त बाइबिल और कुरान का भी अध्ययन किया है। प्रस्तुत है समाज नृ-विज्ञान अध्येता की कलम से एक ज्वलंत समस्या—धर्मान्तरण—पर ये विचार, धर्मपरायण व्यक्तियों को नवचिंतन देगें। डा० शशि हाल ही में योरोप तथा अमरीका के चौदह देशों की शोधयात्रा से लौटे हैं। उन्होंने एक करोड़ से ऊपर भारतीय नृवंश के रोमा (जिप्सी) समाज का नृ-वैज्ञानिक अध्ययन किया है। ये लोग न पूरी तरह से ईसाई ही बन पाए हैं और हिन्दू होते हुए भी हिन्दू नहीं कहलाते।

— संपादक

धर्म भूखे व्यक्ति को रोटी नहीं देता। धर्म बेकारों को नौकरी पर नहीं लगाता। धर्म आडंबर और ढोंग से जकड़ा हुआ है। धर्म जातीयता और वर्गवाद से ऊपर नहीं उठने पाता। धर्म मानव-मानव के बीच खाई पैदा करता है। धर्म अधर्मी का साथ देता है। धर्म का अधर्म बन गया है! इत्यादि इत्यादि।

—इस प्रकार के अनेक प्रश्नों से घिरा मेरा समाज वैज्ञानिक मुझे सीधे ले जाता है पूर्वांचल भारत के नागा तथा अन्य आदिवासियों में।

यहां ईसाई मिशनरियों की सतत साधना और अनवरत सेवा को देखकर हृश्र होता है। इन वियावान जंगलों में वर्षों पूर्व निर्मित चर्च उनके श्रम और साहस की कहानी सुना रहे हैं। नागाओं की तरह गारो, खासी, मिजो आदि जनजातियां केवल ईसाई वनतीं तो शायद कोई वड़ी वात न होती। किन्तु जव पूरा सीमांत प्रदेश असुरक्षित लगने लगा और सैन्य शक्ति को भी चुनौती दी जाने लगी तो हमारे धर्म गुरू जागे। तव तक वहुत देर हो चुकी थी।

आप कह सकते हैं आदिवासी अलग थलग थे, वहुत दूर रहते थे, इसलिए हमारी दृष्टि उन पर नहीं जा सकती थी। क्षमा करें, यह हमारी अदूरदर्शिता का परिणाम था। पर दक्षिण के पैरिया तो दूर जंगलों में नहीं थे, जिन्हें कभी अपने हाथ में झाड़ू उठाकर चलना होता था ताकि लोग दूर से ही देख लें कि कोई अस्पृश्य जा रहा है। सवर्णों को देखते ही या तो वे रास्ता छोड़ देते अथवा एक किनारे पर लेट जाते ताकि उनकी छाया सवर्णों पर न पड़े। दक्षिण में यद्यपि ब्राह्मण तथा अब्राह्मण वर्गों में धर्म अधिक बंटा किन्तु एक पांचवा वर्ण 'अन्त्यज' वन गया था जिसकी दशा उत्तर भारत के शूद्रों से भी बुरी थी। स्वतंत्रता के चौंतीस वर्ष उन्हें सामाजिक तथा आर्थिक समानता नहीं दे सके। महात्मा गांधी के सपनों का देश राजा राम मोहन राय, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी दयानन्द तथा अन्य धर्मगुरुओं के संदेष नहीं पचा सका।

उत्तर भारत में अनेक सुधार आन्दोलन हुए जिसमें आर्यसमाज की भूमिका विशेष रुप से उल्लेखनीय रही। पर यह संस्था भी उत्तर भारत तक ही अधिक सीमित रही। पारसवीघा तक पूरी तरह नहीं पहुंची। गुरुकुलों में सभी जातियों के विद्यार्थियों को प्रवेश मिला। हां, हरिजनों की अपेक्षा पिछड़ी जातियां अधिक लाभान्वित हुईं। लेकिन केवल वेद-उपनिषद् पढ़कर तो रोटी नहीं मिल जाती। हरिजनों की वात छोड़िए। गुरुकुल महाविद्यालय के मेरे एक परिचित सवर्ण स्नातक ने अपने परिवार के पेट की आग में स्वाहा कर दिया था अपने धर्म को। यह वीस वर्ष पुरानी घटना है जव वाइविल को पत्र-व्यवहार द्वारा प्रलोभनों के परोक्ष पथ से जन-जन तक पहुंचाया जा रहा था। हम दोनों ने यह कोर्स किया था किन्तु वपतिस्मा मेरे तरुण मन को झुकाने में असमर्थ रहा जवकि मेरे वे मित्र वहुत दूर चले गए मुझे और मेरे समाज को छोड़कर।

इस्लाम तलवार के वल पर आया था या ईसाई धर्म प्रायः प्रेम के वल पर—यह सव इतिहास के विषय हैं। वौद्ध धर्म वैदिक धर्म पर क्यों हावी हो गया। हिन्दू धर्म से सिख अपने को क्यों अलग मानने लगे। क्या इसके लिए हमारी कुप्रथाएं उत्तरदायी हैं या हमारे विप्र वर्ग द्वारा निजी स्वार्थों में वांधी गई सामाजिक परम्पराएं ? संगठन जव क्षीण होने लगते हैं अथवा एक वर्ग-विशेष के हाथ में आ जाते हैं तो मनमानी प्रवृत्तियां पनपती हैं। शोषक तथा शोषित वर्गों का जन्म होता है और असमानता का विस्तार होता जाता है।

विषवृक्ष की जड़

इस सामाजिक विषमता में सवसे अधिक विष वृक्ष उगाए पोंगापंथी धर्मगुरुओं ने जिन्होंने मनुस्मृति तथा अन्य आर्य ग्रंथों तक को नहीं वख्शा और जो जी में आया, उनमें मिलाते गए। नई टीकाएं घड़ते रहे ताकि वेद पढने का अधिकार स्त्री और शूद्र तक न पहुंच सके। श्रद्धेय गुरुवर्ग—शंकराचार्यों को भी तव होश आता है जव मीनाक्षीपुरम रहमतनगर वनने लगता है। कानून से समाज का वाह्य रूप किसी सीमा तक वदला जा सकता है, किन्तु भीतरी रूप नहीं। अस्पृश्यता को दण्डनीय वताने वाला कानून कभी का वन गया। किन्तु हमारे हृदय नहीं वदले। आज भी मेहतरानी रसोई घर में नहीं जा सकती। उसे मिसरानी का दर्जा नहीं मिल सकता। पश्चिम में सफाई मजदूर की कोई जाति नहीं होती, लेकिन भारत में हर कार्मिक जाति-व्यवस्था में बंध गया है। डा० भीमराव अम्बेडकर ने इस भयंकर स्थिति को भांपा था। इसीलिए उन्होंने आरक्षण को आवाज उठाई ताकि शोषित जातियां समानता के स्तर पर पहुंच सकें और विधर्मी होने से वचें। हां, आरक्षण लम्बे अरसे तक चलते रहना न तो हरिजनों के हित में है और न ही देश के हित में, क्योंकि इससे स्वावलंवन को क्षति पहुंचती है। पराश्रयता की वृत्ति पनपती है। किन्तु जहां जाति-व्यवस्था ने समाज को रोग की भयावह स्थिति तक पहुंचा दिया हो, वहां आरक्षण की अपेक्षा को कुछ अवधि तो चाहिए ही।

पिछले दिनों आरक्षण के पक्ष-विपक्ष में अनेक आंदोलन हुए। एक अहम् सवाल है। आरक्षण आर्थिक स्थिति पर भी आधारित होता तो कितना अच्छा होता। आज पुराहिताई समाप्त होती जा रही है। अनेक ब्राह्मण भी आर्थिक दृष्टि से दयनीय स्थिति में जी रहे हैं। जिन प्रदेशों में पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण नहीं, वहां की हालत वदतर होती जा रही है।

आर्थिक समस्याओं को किसी एक वर्ग या व्यक्ति—विशेष के परिप्रेक्ष्य में हल नहीं किया जा सकता। मैंने हाल ही में योरोप तथा अमेरिका के समाज का निकट से अध्ययन किया है। वहां किसी को आरक्षण नहीं, फिर भी प्रत्येक नागरिक आरक्षित है। जिनके पास रोजगार नहीं अथवा जिनकी नौकरी छूट जाती है या व्यापार समाप्त हो जाता है, उन्हें उनके जीवन-स्तर के अनुसार खाने के लिए भोजन मिलता है तथा रहने के लिए आवास। इसी संदर्भ में बड़ी जन संख्या वाले चीन तथा अन्य देशों के उदाहरण भी दिए जा सकते हैं।

समानता की शत्रु

अधिकांश समाज-वैज्ञानिकों का मत है कि भारत में सामाजिक समानता को जाति-व्यवस्था ने अधिक भ्रष्ट किया है। एक हरिजन विधायक या मंत्री बनने के बाद भी शिवालय के पुजारी का स्थान नहीं पा सकता। यह बात अलग है कि कुछ पंडित काम पड़ने पर उस हरिजन विधायक के पांव छूकर उसकी 'ईगो' को एक क्षण के लिए तुष्ट कर देते हों। यही स्थिति इन वर्गों के अधिकारी वर्ग की भी है। हमारा समाज 'हिप्पोक्रेट' अधिक है। सामने कुछ, पीछे कुछ। लेकिन क्या राजनीति भी इसके लिए जिम्मेवार नहीं है?

आज धर्मान्तरण क्यों हो रहे हैं? उपर्युक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में जब हम और गंभीरता से विचार करते हैं तो कुछ कारण स्पष्ट होने लगते हैं। लोग सामाजिक समानता को प्राप्त करने के लिए धर्म बदलते हैं. हालांकि उन्हें नहीं पता कि इस्लाम में जुलाहा और पठान दो भिन्न भिन्न वर्ग हैं और पठान कभी अपनी लड़की का विवाह जुलाहों में नहीं करेगा। लोग धन पाने के लिए धर्म बदलते हैं, पर वह धन कब तक उनका साथ देगा, यह उन्हें नहीं पता। लोग रोजी रोटी की तलाश में धर्मान्तरित होते हैं, लेकिन उन्हें यह ज्ञात नहीं कि यह रोटी उन्हें अपने पूर्वजों के साथ विश्वासघात का पाठ सिखा रही है। आप कह सकते हैं—'बुभुक्षितः किं न करोति पापम्' और 'भूखे भजन न होहिं गुपाला। यह लो अपनी कंठी माला।' लेकिन इस देश की संस्कृति यह भी सिखाती है—'स्वधर्मे निधनं श्रेयः।' स्वधर्म में मरना श्रेयस्कर है। गीता विश्व में बेजोड़ ग्रंथ है, किन्तु उसका अनुवाद विश्व की कितनी भाषाओं में हुआ है? स्वामी दयानन्द का सत्यार्थ प्रकाश यदि रोमानी भाषा में उपलब्ध होता तो आज योरोप के एक करोड़ रोमा लोग वैदिक धर्म को अपना लेते।

रोमाओं को संभालो—वे हिन्दू हैं

उल्लेखनीय है कि रोमा यानो जिप्सी भारतीय नृवंश के हैं। स्वीडन और फिनलैंड के रोमा जब 'तु मेरा रक्त' शुद्ध हिन्दी में कहकर मेरे गले मिलते थे, तो मेरी आंखें प्रेमाश्रुओं से गीली हो जाती थीं। भारत के दो हजार वर्ष पूर्व बिछड़े इन लाखों लालों को न किसो धर्मगुरु को चिंता है और न ही समाज-सुधारकों के व्यावसायिक वर्ग को। भारतीय नृवंश के रोमाओं को जिप्सी कहकर तिरस्कृत किया जाता रहा है। ईसाई होते हुए भी ये पूर्ण ईसाई नही बन पाए। काश! कृण्वंतो विश्वमार्यम् का संदेश उन तक पहुंच पाता। काश! कुछ धर्म गुरु इन तक पहुंच पाते! उन्हें तो पैसा नहीं चाहिए, पर मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक आहार पश्चिम नहीं, पूर्व ही दे सकता है। इसके लिए उनके बीच काम करने वाले मिशनरी कार्य-कर्त्ताओं की अपेक्षा है।

आप कहेंगे, यह तो वाद की बात है। ठीक है, फिर घर को पहले ठीक कीजिए। डा० थुरये, डा० श्रोनिवास तथा डा० मजूमदार के समाज-शास्त्रीय विवेचनों में मैंने जातोयता की जड़ों को समझने को कोशिश की और संतराम के जात-पाँत तोड़क मंडल तक पहुंचा, किन्तु निराशा ही अधिक मिली। इसलिए नहीं कि मैं आशावादी नहीं हूं, बल्कि इसलिए कि राजनीति स्थिति को और कमजोर करती जा रही है। हरिजनों पर प्रति-दिन के बढ़ते अत्याचारों के घिनौने दृश्य धर्मान्तरण की भयमिश्रित आशंका के भ्रूण को आरक्षण देते रहे हैं।

शुतुर्मुर्ग की गलतफहमी

और अंत में एक चेतावनी। जो लोग यह कहते हैं कि हिन्दू धर्म विशाल और व्यापकता को उस परिधि तक पहुंचा है जिसे कोई नष्ट नहीं कर सकता—यह सरासर गलत फहमी है। वह उस शुतुरमुर्ग की तरह है जो सोचता है—मेरी आंखें जब तक बंद हैं मुझपर कोई आक्रमण नहीं करेगा। इन्हीं भ्रांतियों के कारण देश के टुकड़े-टुकड़े हुए।

और अब? और अब?

इस प्रश्न का उत्तर केवल मिलेगा हमारी दूरदर्शिता से, हमारे व्यावहारिक कदम से, नव चिंतन पर आधारित हमारे कार्यक्रमों और द्रुतगामी गतिविधियों से, केवल भाषणों या प्रीतिभोजों से नहीं। ●

हिन्दू—
एक राष्ट्रीय संबोधन



—ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ—

हिन्दू नाम न तो साम्प्रदायिक है और न राष्ट्र-विरोधी ही। यह युगों से इस देश की राष्ट्रीयता का बोधक बना हुआ है। किसी राष्ट्रीय समूह को हिन्दू की संज्ञा देना दोषपूर्ण या देश-विरोधी बात नहीं है। हिन्दुत्व को थाती राष्ट्रीय एकता की सर्वाधिक सुगठित शक्ति रही है, जिसने विभिन्न जातियों, विरोधी जलवायु अनेक भाषाओं और धार्मिक विश्वासों की भिन्नताओं के बीच इस देश को एक राष्ट्र बनाया है। हम देखते हैं कि आज भूतल से सभी पुरातन सभ्यतायें मिट चुकी हैं और संसार की महानतम शक्तियों के निरन्तर आघातों के पश्चात भी; भारत विविध जलवायु, जातियों, भाषाओं और धार्मिक विश्वासों के होने पर भी, एक राष्ट्र के रूप में जीवित है। इसका कारण है कि भारत के इतिहास में केवल एकात्म का भाव हिन्दुत्व ही रहा है। हिन्दुत्व एक ऐसा एकीभत तत्व रहा है, जिसने सबको एक राष्ट्र के रूप में मिला दिया है।

दुर्भाग्य से हमारे राष्ट्रीय नेता देश में हिन्दुत्व की एकीकरण शक्ति को अंगीकार करने में असफल रहे हैं। अगर हमारे धर्म-निरपेक्षतावादी विचारक विसेंण्ट स्मिथ, सरदार पणिक्कर तथा अन्य लेखकों द्वारा लिखित भारत का इतिहास पढ़ें तो देखेंगे कि देश के विभेदक और विरोधी तत्वों की एक सूत्रता और राष्ट्रीय एकता का आधार एक मात्र हिन्दुत्व की भावना ही रही है। बहुत से विचारक हिन्दू शब्द के अर्थ से घबरा जाते हैं क्योंकि वे यह समझने में असफल रहते हैं कि हिन्दू उस ऐतिहासिक प्रक्रिया की संज्ञा है, जिसने सभी धर्मों संस्कृतियों और सामाजिक प्रभावों को एक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्टापित किया है।

अतः जो हिन्दुत्व को विभेदक और पक्षपात-पूर्ण बताकर उसकी निन्दा करते हैं वे इस ऐतिहासिक प्रक्रिया की गरिमा को नहीं समझ सके हैं। जो लोग भारत में राष्ट्रीय एकता की स्थापना करना चाहते हैं, उन्हें इस एकीकरण की शक्ति हिन्दुत्व का अधिकाधिक उपयोग करना है जो

भिन्न भाषा-भाषियों, विपरीत जलवायु में निवास करने वालों विभिन्न रीति-रिवाजों और विश्वासों के लोगों को राष्ट्र के रूप में ढाल सके।

राष्ट्रीयता का परिचायक हिन्दुत्व

भाषा, जाति, प्रदेश और अन्य विघटनकारी प्रवृतियों की बढ़ती हुई दुश्चिन्ताओं का एक मात्र निदान हिन्दुत्व ही है। भारत के विभिन्न तीर्थ-स्थान, हमारी प्राचीन सामाजिक मान्यतायें और सामान्य आचरण संहिता हमारे हिन्दुत्व के व्यक्तिगत सिद्धांत और धार्मिक ग्रन्थों में प्रतिपादित अनुष्ठान, इन सबने एक राष्ट्र के रूप में हमें एकत्र करके महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत की है। हमारी पैतृक भाषा के रूप में संस्कृत, और राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी ने भी देश की राष्ट्रीय एकता के गठन में बहुत बड़ा कार्य किया है।

हमारे नेताओं ने राष्ट्र के समस्त खण्डों को एक सूत्र में बांधने के लिए इस महान् राष्ट्रीय प्रभाव को भुला दिया है। हम जानते हैं कि दक्षिण भारत के महान् आचार्यों का सम्मान दक्षिण भारत की अपेक्षा उत्तर भारत में कहीं अधिक हुआ और भारत के उत्तरी अंचल में प्रवाहित होने वाली गंगा को समूचे देश में दक्षिण पूर्व और पश्चिम की किसी भी नदी की अपेक्षा अधिक पवित्र समझा गया है। राम और कृष्ण जैसे हमारे राष्ट्र नायकों और उनके जन्म स्थानों को सम्पूर्ण देश में श्रद्धा का केन्द्र माना जाता है। यह केवल हिन्दुत्व के व्यापक प्रभाव के ही कारण सम्भव हुआ।

हिन्दू मुस्लिम एकता के मिथ्या नारे के परिणाम स्वरूप भारत का विभाजन हुआ और इस समय अलग-अलग नाम के आधार पर देश के विघटन का भय पुनः उत्पन्न हो गया है। देश की पूर्ण राजकीय एकता का प्रश्न आज राष्ट्रीय क्षितिज पर पूरी तरह छाया हुआ है जो करीब १०० वर्षों से चली आ रही सम्प्रदायातीत राष्ट्रीयता का ही प्रत्यक्ष परिणाम है। हमें उन अवसरों को ढूंढना है जब हम सारे तत्वों को एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में बांधने के लिए हिन्दू राष्ट्रीयता का उपयोग कर सकें। ●

शुद्धि-आन्दोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि



—प्रो० सूर्यप्रकाश स्नातक—

लेखक ने जितने परिश्रम से यह लेख तैयार किया है उसकी सार्थकता इसी में है कि शुद्धि आन्दोलन के विरोधी इस लेख को ध्यानपूर्वक पढ़ें।

विभिन्न पुराणों में शुद्धि का अत्यन्त विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। भविष्य पुराण में विक्रमादित्य के राज्य में व्याधकर्मा नामक चाण्डाल को शुद्ध कर यज्ञाचार्य बनाने की चर्चा की गई है। (भविष्य पुराण प्रति सर्ग पर्व ३, खण्ड २, अ० ३४) इसी पुराण में अन्यत्र वर्णन आता है कि सरस्वती की आज्ञा से कण्व ऋषि मिस्र देश में जा कर दश हजार म्लेच्छों को शुद्ध कर व्रह्मावर्त देश में लायें—

सरस्वत्याज्ञया कण्वो मिश्रदेशमपाययौ।
म्लेच्छान् संस्कृत्य चाभाष्य तदा दश सहस्रकान्॥

(भविष्य पुराण पर्व ३, खण्ड ४, अ० २१)

बौद्धों ने जब आर्य जाति और वर्णाश्रम धर्म के नाश करने का उद्योग किया, तो अग्नि वंश के राजाओं ने चारों वेदों के प्रभाव से बौद्धों को वर्णाश्रमधर्मी आर्य बनाया। (भविष्य पुराण पर्व ३, खण्ड ४, अ० २१)

बौद्धों के समान ही मुसलमानों को, जगन्नाथ आदि सातों पुरियों में कृष्ण चैतन्य के समस्त वैष्णव शिष्यों ने उन्हें पुनः वैष्णव मत में दीक्षित कर हिन्दू बनाया। रामानन्द के शिष्य ने अयोध्या में जाकर मुसलमानों को हिन्दू बनाया, तो निम्बादित्य ने अपने शिष्यों के साथ कांची में जाकर उन्हें वैष्णव बनाने का कार्य किया। इधर वैष्णव स्वामी ने हरिद्वार में, माध्वाचार्य ने मथुरा में, स्वामी शंकराचार्य ने काशीपुर में, श्री रामानुजाचार्य ने तोताद्रि में, वराहमिहिर ने उज्जयिनी में, वाणीभूषण ने कात्यकुब्ज

में, धन्वन्तरि ने प्रयाग में और भट्टोजि ने देश भर में घूम-घूम कर भारी संख्या में मुसलमानों को शुद्ध कर उन्हें हिन्दू धर्म में दीक्षित किया।

भविष्य पुराण में शुद्धि के सम्बन्ध में और अनेक उदाहरण मिलते हैं—नित्यानन्द शान्तिपुर में, हरिनदिया शहर में, कबीर मगध देश में, व रैदास कलिञ्जर प्रान्त में जाकर मुसलमान आदि को आर्य धर्म में दीक्षित करते हैं। (भविष्य पुराण पर्व ३ खण्ड ४, अ० २१)

श्री मद्भागवत में एक श्लोक आता है, जिसमें कहा है कि किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, कंक, यवन और खस आदि, इनके अतिरिक्त जो अन्य लोग हैं, वे सब जिस भगवान् के भक्तों का आश्रय लेकर पवित्र हो जाते हैं, उन प्रभविष्णु भगवान् को मेरा प्रणाम है—

किरात हूणान्ध्र पुलिन्द पुल्कसाः
आभीर कंका यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः॥

(श्री भागवत स्कन्ध २, अ० २, श्लोक १८)

इससे स्पष्ट है कि पूर्व काल से ही यवन किरातादिकों की शुद्धि की जाती थी और उनके शुद्ध करने का सरल से सरल प्रायश्चित्त भक्तों के साथ सत्संग द्वारा ईश्वर स्मरण कराकर शुद्ध कर लेना था।

तुलसी कृत 'रामचरित मानस' के अरण्य काण्ड में कहा है कि उलटे नाम का जाप करने मात्र से वाल्मीकि जी ब्रह्म के समान हो गए। श्वपच (चांडाल), शवर (भील), यवन (म्लेच्छ मुसलमान), मूर्ख, पामर (कोल), किरात आदि पुरुषोत्तम राम का नाम जपने से संसार में प्रसिद्ध हो जाते हैं—

राम नाम कहि जे जम्हांही।
तिन्हिं न पाप पुञ्ज जग माहीं॥
उलटे नाम जपत जग जाना।
बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना॥
श्वपच, शबर, खल, यवन, जड़, पामर, कोल, किरात
राम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात॥

इतिहास प्रकरण

ऐतिहासिक दृष्टि से शुद्धि-आन्दोलन का अवलोकन करने से यह बात सिद्ध हो जाती है कि मुसलमानी शासनकाल में हिन्दू राजे-महाराजे धर्म-रक्षार्थ अनेक शुद्धियां करते रहे हैं। इधर महाराष्ट्र तो उधर पंजाब, राजपूताना, उत्तर प्रदेश और बंगाल में भी शुद्धि प्रथा जोरों पर थी। शिवाजी के शासन काल में अनेक शुद्धियां हुई थीं। प्रथम बालाजीराव निम्बालकर फलटन नामक ताल्लुके के बड़े सरदार थे। बीजापुर के बादशाह द्वारा मुसलमान बना लिए जाने पर शिवाजी और जीजाबाई ने धर्म-सचिव पंडित राव से व्यवस्था लेकर सिंगनपुर नामक तीर्थ क्षेत्र में ले जाकर इनकी शुद्धि करवाई। यही नहीं, शिवाजी की मृत्यु के पीछे मुसलमानों द्वारा अनेक प्रलोभनों से जो ब्राह्मण अथवा मराठा जाति के लोग मुसलमान हो जाते थे, उन सब को प्रायश्चित्त करवा के शुद्ध कर लिया जाता था।

छत्रपति शाहू के राज्य में भी अनेक शुद्धियां हुईं। पूताजी बंडकर नामक एक मराठा जबरन मुसलमान बना लिए जाने पर, जब वह उनकी सेना में भर्ती हुआ और उसने अपनी शुद्धि के लिए प्रार्थना की, तो वह शुद्ध कर लिया गया। इसी प्रकार दो ब्राह्मणों में एक अहमदनगर जिले के पुणतांबे नामक स्थान का तथा दूसरा निजाम राज्य के पैठन नामक ग्राम का था, उनमें से एक को धोखे से व दूसरे को प्रलोभन से मुसलमान बना लिये जाने पर उन्हें शुद्ध किया गया। इसी प्रकार एक कोंकणस्थ ब्राह्मण को हैदरअली द्वारा राजनीतिक कैदी बना कर मुसलमान बनाने पर विद्वानों और पेशवा सरकार की सम्मति से शुद्ध कर लिया गया।

बाजीराव और मस्तानी

सवाई माधवराव के शासन काल में नरहरि रावलेकर नामक एक ब्राह्मण के मुसलमान हो जाने पर उसे शुद्ध किया गया। ब्राह्मण कुल के बाजीराव पेशवा ने हैदराबाद के निजाम की कन्या मस्तानी से विवाह किया था जिसे मराठों ने शुद्ध कर लिया। इसी प्रकार सम्भा जी के राज्य में हरसूल निवासी गंगाधर रघुनाथ नामक ब्राह्मण के जबरदस्ती मुसलमान बना लिए जाने पर उसको शुद्ध कर ब्राह्मण बना लेने का वर्णन आता है।

पेशवाओं के शासन काल में दक्षिण भारत के कई प्रान्तों में फ्रेन्च लोग राज्य करते थे। इनमें बसई नामक प्रान्त में हिन्दुओं को राज्य भय से

ईसाई वना लिया जाता था। फ्रेंच सरकार की ओर से हिन्दुओं के लिए निम्न आज्ञाएं भी निकाली गयी थीं—

१. मूर्ति पूजा की परिपाटी नष्ट कर दी जाय।

२. जो हिन्दू ईसाई हो जायं उनको फ्रेंच राज्य में सुविधाएं दी जायें।

३. ईसाई मत के स्कूल स्थापित किये जायें और उनमें हिन्दू लड़कों को वाइविल की शिक्षा देकर ईसाई वनाने का प्रयत्न किया जाय।

ईसाइयों की शुद्धि के प्रमाण

'इतिहास संग्रह' नामक एक मराठी पत्रिका में पेशवाओं के शासन काल के सन् १८१२ और सन् १८१५ में हिन्दुओं द्वारा पेशवाओं की सेवा में शुद्धि के लिए भेजे गए प्रार्थना-पत्रों में हिन्दुओं पर होने वाले ईसाइयों के अत्याचारों का दिग्दर्शन कराया गया है। पत्रिका में प्रकाशित पत्रों में एक पत्र सन् १८१२ में मोगले नामक वंश की ओर से प्रधान की सेवा में भेजा गया था, जिसमें लिखा था कि 'पादरी लोग हिन्दुओं को अपने यहां बुला कर उन पर झूठा पानी डाल कर ईसाई वना लेते हैं। पादरी अभी तक तो हिन्दुओं के विवाह मात्र ही इसाई रीति से कराते थे परन्तु अव हिन्दुओं से सभी आचार-व्यवहार को छोड़ देने का आग्रह करते हैं तथा साथ ही वहुत सा द्रव्य मांगते हैं।' इस प्रार्थना पत्र पर जो आज्ञा लिखी गई, उसके अनुसार प्रायश्चित्त करने के उपरान्त हिन्दू धर्म में पुनः प्रवेश की अनुमति दी गई।

सन् १८१५ ई० में गावड़ नामक वंश वालों ने इसी प्रकार दूसरा प्रार्थना पत्र दिया, जिसमें लिखा था कि फिरंगियों ने अपने राज्य काल में वहुत सी प्रजा को भ्रष्ट कर ईसाई वना लिया है। उसमें लिखा था कि 'ईसाई हो जाने पर भी हमारेरीति रिवाज आचार-विचार हिन्दुओं जैसे ही हैं, सिर्फ विवाह मात्र पादरियों के गिर्जे में होते हैं। ईसाई हुए हिन्दुओं से हिन्दू लोग व्यवहार करने को तैयार हैं परन्तु पादरी लोग हिन्दुओं के साथ व्यवहार करने नहीं देते।' इस प्रार्थना पत्र पर भी उन लोगों को शुद्ध कर के हिन्दू धर्म में प्रविष्ट होने की आज्ञा दी गई और उन सव को शुद्ध करके हिन्दू वना लिया गया।

उपर्युक्त दोनों पत्रों के आधार पर स्पष्ट है कि महाराष्ट्र राज्य में शुद्धि-प्रथा पूरे जोरों पर थी। शुद्ध हुए हिन्दुओं के साथ समानता का व्यवहार होता था, यह वात भी स्पष्ट है।

राजस्थान में शुद्धियों की धूम

मुसलमानों के राज्य में राजपूताने में भी शुद्धियों की धूम मची हुई थी। 'आर्य मार्तण्ड' के १३ जून सन् १९२८ के अंक में जयपुर की छपी चिट्ठी के अनुसार अनेक तथ्य प्रकाश में आए हैं। आम्बेर में दादू जी महाराज द्वारा ५२ मुसलमानों की शुद्धि के अतिरिक्त सांभर के शाही काजी द्वारा दादू जी का आदेश सुन कर हिन्दू धर्म में प्रविष्ट होने की चर्चा आती है। शुद्धि के वाद इनका नाम गरीवदास रखा गया।

कर्नल टाड के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'टाड राजस्थान' के अनुसार महाराणा वापा रावल ने मुसलमान राजकुमारी के साथ विवाह किया था। उनकी संतान आज तक सूर्य वंशी मानी जाती है। उदयपुर मेवाड़ के महाराणा कुम्भा जी ने भी मालवा और नागौर की मुसलमानियों का हिन्दुओं के साथ विवाह कराया था।

मारवाड़ के इतिहास में लिखा है कि वहां के वीर राजपूत मुसलमान वादशाहों से कभी भी भय नहीं खाते थे और मुसलमान औरतों को शुद्ध कर उनके साथ विवाह भी करते थे। जोधपुर के राजा गजसिंह ने शाहजहां के प्रसिद्ध वजीर असदतखां की वीवी अनारा को अपनी पत्नी बनाया था। मारवाड़ के महाराजा रायपाल ने ६०० मुसलमानियों के साथ अपने हिन्दू सरदारों के विवाह कराये थे। रावकुंवर जगमाल का माडू के मुसलमान वादशाह की लड़की गींदौली से विवाह हुआ था। खेड़ मारवाड़ के राजपूत सिंध के मुसलमान अमीरों की लड़कियां जीत कर ले आते थे। सं० १५४८ वि० की चैत्र सुदी तृतीया को वादशाह का मल्लूखां नामक हाकिम पीवाड़ (मारवाड़) के ग्राम कोसाने के तालाव पर एक सौ चालीस क्षत्रिय कन्याओं को जवरदस्ती पकड़ कर ले गया था। इसे देख मारवाड़ के राजा 'राव सातलजी' ने चढ़ाई कर घोर संग्राम के वाद अपहृत एक सौ चालीस कन्याओं को तो छुड़ाया ही, साथ ही ब्याज में कई मुसलमान अमीरजादियों को तथा उनके साथ सेनापति घुडेलखां की सुन्दर कन्या को भी लाकर शुद्ध किया।

जेत बन्ध और आना सागर

सोलहवीं शताब्दी में सिन्ध में मुसलमानी आक्रमणों द्वारा भट्टी राजपूतों के मुसलमान बना लिये जाने पर जैसलमेर के भट्टी राजपूत राजा जेतसिंह ने जेतबन्ध नामक तालाब खुदवा कर और उसमें

स्नान कराकर इन मुसलमानों को काशी के पण्डितों द्वारा यज्ञ करवा के शुद्ध किया। इसी प्रकार अजमेर में बारहवीं सदी में अरुणोदेव नामक वीर राजा ने आना सागर में स्नान करा मुसलमानों की शुद्धियां कीं। मिरजा अब्दुल कादिर साहब औरंगजेब के समय साठ वर्ष की अवस्था में विट्ठल दास की कृपा से मधुपुरी जाकर हिन्दू बने और चन्द्र वदन नाम रखा। उन्होंने फारसी भाषा में रामायण भी लिखी थी। श्री यदुनाथ सरकार अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि औरंगजेब ने एक पत्र में मारवाड़ के महाराणा जसवन्तसिंह द्वारा मस्जिदों के स्थान पर मन्दिरों के निर्माण कार्य के विषय में शिकायत लिखी है। वस्तुतः मुसलमानी शासन काल में मारवाड़, मेवाड़ और राजपूताने में शुद्धि-चक्र बराबर चलता रहा।

दिल्ली, पंजाब, कश्मीर

मुसलमानों के शासन काल में राजधानी दिल्ली प्रान्त में मुसलमानों का जोर होने पर भी समय पाकर ब्राह्मण लोग मुसलमान हुए हिन्दुओं को शुद्ध कर लेते थे। मिस्टर इरविन लिखित 'लेटर मुगल्स' (वाल्यूम प्रथम १७०७ से १७२० अध्याय ५ सैक्शन १५) के अनुसार फर्रुखसियर बादशाह की बेगम दिल्ली में हिन्दू धर्म की रीति के अनुसार शुद्ध होकर जोधपुर चली गयी। 'फ़िरोजशाही तारीख' के पृष्ठ ३७९ में लिखा है कि फिरोजशाह तुगलक के जमाने में एक ब्राह्मण ने मंदिर बनवा कर वहां एक मुसलमानी को हिन्दू बनाया था।

मुसलमानों के शासन काल में पंजाब और सिन्ध में समयानुसार बराबर शुद्धियां होती रहीं। जम्मू कश्मीराधिपति महाराजा श्री रणवीर सिंह ने धर्म शास्त्र के विद्वानों द्वारा 'रणवीर कारित प्रायश्चित्ताध्याय' नामक ग्रन्थ तैयार कराकर व्यवस्था दी कि जो हिन्दू मुसलमान हो गए हैं वे प्रायश्चित्त करके शुद्ध हो सकते हैं और जो जन्मतः मुसलमान आदि हिन्दू होना चाहें, वे भी हिन्दू धर्म में प्रवेश कर सकते हैं। इस व्यवस्था के आधार पर अनेक मुसलमानों को हिन्दू बनाया गया।

सुलतान जैदअल आबदीन उर्फ शाही खान मुजफ्फर मंसूर के गद्दी पर बैठते ही सिकन्दर के जमाने में जोर और जुल्म से जो मुसलमान बनाये गये थे, वे फिर हिन्दू बन गए। बहाला निवासी मुंशी आलमनाथी सुजान राय द्वारा औरंगजेब के समय लिखी 'खुलासा अल तवारीख' से यह बात प्रमाणित होती है—"व जमईए ब्रिह्मनां कि दर जमाने सिकन्दर

व जोर व अकरः मुसलमान करदः बूदन्द अज़ इस्लाम वरगश्तह वाजार-सूमे हनूद दरपेश गिरफ्तन्द।" इससे अनुमान होता है कि मुसलमान हुए हिन्दुओं को अपने धर्म में लौटने की कितनी तीव्र अभिलाषा बनी रहती थी।

बादशाह मुहम्मदशाह ने पंजाब के सूबेदार दीवान मंशाराम मोहन मुह्याल के पुत्र राजाराम के पुत्र जयराम को वलपूर्वक मुसलमान बना कर उसका नाम यूसुफसानी रखा और उसके साथ अपनी बेटी का विवाह कर दिया। किन्तु कुछ ही दिनों वाद उसे शुद्ध कर पुनः हिन्दू वना लिया गया।

सम्वत् १०८१ वि० में महमूद गजनवी के भारत आने पर अनहिल-वाड़ा के राजा भीमदेव ने उसकी फौज के अनेक सरदारों को हिन्दू बनाया और हिन्दुओं ने मुगल, तुर्क, अफगान आदि अनेक अविवाहित मुसलमान कन्याओं को शुद्ध कर उनसे विवाह भी कर डाले।

पंजाब में सिक्खों द्वारा मुसलमानों की अनेक शुद्धियां की गईं। जहां कहीं मुसलमानों ने हिन्दुओं को धर्म भ्रष्ट किया, वस सिक्खों ने 'वाहे गुरु जी का खालसा, वाहे गुरु जी दी फतह' "सत् श्री अकाल" कह कर अपना कड़ा और सुअर की हड्डी धर्म भ्रष्ट हुए हिन्दुओं पर अथवा उनके भोजन पर फिरा कर शुद्धि कार्य किया। धर्म की रक्षा के लिए गुरु नानक देव और गुरु गोविन्दसिंह आदि गुरुओं का योगदान स्मरणीय और स्तुत्य है।

सिन्ध में वहां के राजा गंगासिंह मुसलमानों को शुद्ध कर पुनः हिन्दू बनाते थे। तीन सौ अट्ठानवे हिजरी में राजा सुखपालसिंह के मुसलमान हो जाने पर प्रायश्चित्त कराकर उन्हें हिन्दू बना लिया गया।

मुसलमानों के शासनकाल में बंगाल में शुद्धि-कार्य बहुत हुआ। चैतन्य महाप्रभु ने हजारों मुसलमानों को वैष्णव मंत्र की दीक्षा देकर शुद्ध किया। इनका एक भक्त मुसलमान था जिसका नाम हरिदास था। उसकी मृत्यु पर चैतन्य महाप्रभु ने कीर्तन किया था। इसी प्रकार कृष्ण भक्त रसखान, ताजखां बेगम आदि अनेक मुसलमानों ने हिन्दू धर्म की दीक्षा ग्रहण की। ताजखां बेगम आगरा शहर में पालकी में बैठ कर जा रही थी कि मार्ग में ब्राह्मण की कथा सुनने के लिए पालकी को खड़ा कर लिया। कथा सुन कर उन्हें इतना आनन्द आया कि कृष्ण भक्ति में दिन रात मग्न रहने लगीं और कुरान से उनका विश्वास हट गया। उनकी निम्नलिखित कविता में उनकी मनोभावना व्यक्त हुई है—

सुनो दिल जानी मेरे दिल की कहानी,
तेरे हाथ हूं बिकानी बदनामी भी सहूंगी मैं।
देव पूजा ठानी तज कलमा कुरानी,
मैं नमाज हूं भुलानी तेरे गुन न तजूँगी मैं ।।
सांवला सलौना सिरताज सिर कुल्ले दार,
तेरे नेह दाघ में निदाघ ह्वै दहूंगी मैं।
नन्द के कुमार कुर्बान तेरी सूरत पर,
हूं तो मुगलानी हिन्दुआनी ह्वै रहूंगी मैं ।।

कलमा कुरानी छोड़ आई हूं तिहारे पास,
भाव में भजन में मैं दिल को लगाऊंगी।
पाऊंगी विनोद भर भरके सुबह और शाम,
गाऊंगी तिहारे गीत नेक न लजाऊंगी ।।
खाऊंगी प्रसाद प्रभु मन्दिर में जाय जाय,
माथ पे तिहारी पद्‌रज को चढ़ाऊंगी।
आशिक दिवानी बन श्याम पद पूजि पूजि,
प्रेम में पगानी राधिका सी बन जाऊंगी ।।

पठान रुस्तमखां तो शुद्ध होकर भक्त कवि रसखान के नाम से इतने प्रसिद्ध हुए कि 'या लकुटी अरु कामरिया पर' जैसे अनेक छंद साहित्य रसिकों की जवान पर चढ़ गए। इसी प्रकार अनेक मुसलमान भक्तों की कथाएं मिलती हैं, जिन्होंने वाद में हिन्दू धर्म ग्रहण किया। रहीम के दोहे और जमालउद्दीन की भक्ति रस पूर्ण कथा हिन्दू समाज में अत्यन्त प्रचलित है। मलिक मुहम्मद जायसी ने तो 'पद्‌मावत' नामक पूरा काव्य ही लिख डाला है जो साहित्य की दृष्टि से वेजोड़ है।

इन्ही भक्त मुसलमान कवियों को लक्ष्य करके भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने यहां तक लिख दिया था –

'इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिक हिन्दू वारिये।'

कहने का अभिप्राय यह है कि शुद्धि का यह क्रम आज का न होकर काफी प्राचीन है। प्राचीन काल से ही विधर्मी लोगों ने हिन्दू धर्म की गहराई और इसके मर्म को जानकर तथा हिन्दू धर्म की विश्व बन्धुत्व आदि

विशेषताओं से प्रभावित होकर समय-समय पर हिन्दू धर्म की दीक्षा ग्रहण की है। उपर्युक्त ऐतिहासिक विवेचन के आधार पर यह बात स्वयं प्रमाणित हो जाता है।

न कोई ऊंचा, न कोई नीचा

मेरे मत से जन्मगत अथवा प्राप्त श्रेष्ठता जैसी कोई चीज नहीं है। अद्वैत का मेरा अर्थ ऊंच-नीच के फर्क को स्वीकार करने से इनकार करता है। हर मनुष्य चाहे वह हिन्दुस्तान में पैदा हो या इंग्लैण्ड अमेरिका में—बरावरी के दर्जे पर पैदा होता है। मैं इस सिद्धान्त को मानता हूं। इसीलिए हम पर राज्य करने वाले अपने को हमसे ऊंचा मनवाने की जो कोशिश करते हैं, उनके खिलाफ मैं लड़ रहा हूं; दक्षिण अफ्रीका में ऊंच-नीच के भेद के खिलाफ मैं पग-पग पर लड़ा हूं; और इसी वजह से मैं अपने को भंगी, कतवैया, जुलाहा, किसान और मजदूर कहने में गौरव समझता हूं। ब्राह्मण भो जब अपनी उच्चता का घमण्ड करते हैं, तो मैं उनसे भो लड़ता हूं। मुझे तो यह पोरुषहीनता को निशानी लगती है कि आदमी आदमो को अपने से नोचा समझे। जो सबसे ऊंचे होने का दावा करते हैं वे अपनी अयोग्यता सिद्ध करते हैं। मेरा यह मत है कि जो बड़प्पन का दावा करता है, वह मनुष्य नहीं रह जाता।

—महात्मा गांधी

भारत को हिन्दू राज्य घोषित करने के लिए राष्ट्रपति को ज्ञापन

श्रद्धेय डा० संजीव रेड्डी, नई दिल्ली
१२-८-८१

हमारा देश इस समय बहुमुखी संकटों से ग्रस्त है। आर्थिक संकट तो बढ़ती हुई महंगाई, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति के कारण सर्वविदित है। यह मूलतः गलत आर्थिक नीतियों और गलत नेतृत्व का परिणाम है जिन्होंने प्रकृति और परमात्मा द्वारा समृद्ध बनाये गये हमारे देश को निर्धनतम देशों की श्रेणी में खड़ा कर दिया है।

इससे अधिक खतरनाक चरित्र का संकट है। इसके अनेक कारण हैं। परन्तु प्रमुख कारण देश के नये राजाओं-मंत्रियों, सांसदों, विधायकों और सरकारी तथा विरोध पक्ष के राजनीतिज्ञों द्वारा अपने चरित्र से जनता के सामने रखा जाने वाला गंदा उदाहरण है।

इस चरित्र के संकट के कारण, विश्वास का संकट खड़ा हो गया है। जनता का विश्वास राजनीतिज्ञों, राजनीतिक दलों और उनके नेताओं पर से उठ गया है। इतना ही नहीं, उनकी आस्था संसदीय प्रणाली के राजतंत्र से भी उठने लगी है।

इन सबसे अधिक बुरा और भयानक संकट अस्तित्व का संकट है। न केवल हमारी राष्ट्रीय एकता और सुरक्षा के लिए नये खतरे पैदा हो रहे हैं अपितु हमारे विशिष्ट राष्ट्रीय चरित्र और पहचान को भी नष्ट करने के सुनियोजित प्रयत्न हो रहे हैं। मैं आपका ध्यान-विशेष रूप में इस संकट की ओर आकर्षित करना चाहता हूं।

जैसा कि आप जानते हैं, हमारा देश १४ अगस्त १९४७ को दो राष्ट्रों के सिद्धान्त के आधार पर विभाजित किया गया था। इसके बाद कटा फटा हिन्दुस्तान १५ अगस्त को ब्रिटिश दासता से मुक्त हुआ। मातृ-भूमि का यह विभाजन राष्ट्रवादी हिन्दुस्तान को आजादी के मूल्य के रूप

में मुस्लिम लीग को, जो उस समय भारत में रहने वाले लगभग सभी मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करती थी, देना पड़ा था।

मुसलमानों के अलग राष्ट्र होने की परिकल्पना का आधार इस्लाम के "मिल्लत" और "कुफ्र" सम्बन्धी बुनियादी सिद्धान्त हैं। इस्लाम मानव जाति को दो भागों में बांटता है। एक वह जो इसके पैगम्बर और धर्म ग्रन्थ पर ईमान लाते हैं और दूसरे वह जो ऐसा नहीं करते। पहिले वर्ग को यह "मिल्लत" की संज्ञा देता है और संसार के सभी मुसलमान इसके अन्तर्गत आते हैं। अन्यस व को यह "काफिर" कहता है। इन्हें मुसलमान वनाना या खत्म करना मसलमानों का मजहवी कर्तव्य है। इस्लाम के अनुसार किसी मुसलमान के लिए सवसे वड़ा सम्मान "गाजी" बनना है और गाजी वह होता है जिसने कम से कम एक गैर मुसलमान को खत्म किया हो।

इस्लाम संसार की भूमि को भी दो भागों में बांटता है। जिन देशों पर मुसलमानों का राज्य हो वे "दार-उल-इस्लाम" कहलाते हैं और जिन पर उनका राज न हो वे 'दार-उल-हरव' हैं। मुसलमानों और मुस्लिम देशों का यह मजहवी कर्तव्य है कि आंतरिक तोड़ फोड़, वाहरी आक्रमण द्वारा ऐसे देशों को दार-उल इस्लाम में परिवर्तित किया जाय। इस हेतु लड़े गये युद्ध को "जिहाद" यानी धर्म युद्ध कहा जाता है।

क्योंकि हिन्दुस्तान में रहने वाले अधिकांश मुसलमान तलवार के वल पर मुसलमान वनाये गये थे, इसलिए उन्हें इस्लाम के इन सिद्धान्तों के विषय में अधिक जानकारी नहीं थी। इसका योजनावद्ध प्रचार तो पहले पहल १९२० के वाद खिलाफत आन्दोलन के द्वारा हुआ। इन सिद्धान्तों की जानकारी का मुसलमानों पर क्या प्रभाव पड़ा, इसका उदाहरण कवि इकवाल के जीवन से मिलता है।

एक काश्मीरी ब्राह्मण परिवार का वंशज होनें के कारण शुरु में इकवाल राष्ट्रवादी आन्दोलन की ओर सहज में ही झुके थे। उनकी उस काल की लिखी इस विख्यात कविता में उनकी देश भक्ति और राष्ट्र भावना की झलक मिलती है—

सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा,
हम बुलबुले हैं इसकी यह गुलसितां हमारा।
मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना,
हिन्दी है हम वतन है हिन्दोस्तां हमारा॥

परन्तु यही इकवाल जव खिलाफत आन्दोलन के प्रभाव में आये और इस्लामी सिद्धान्तवाद के पोषक वने तव वे मुस्लिम राष्ट्रवाद और पान इस्लामवाद के प्रवक्ता बन गये। राष्ट्रवादी से सम्प्रदायवादी और अलगाववादी मुस्लिम बनने का यह परिवर्तन उनकी खिलाफत आन्दोलन और उसके वाद की लिखी—"मुस्लिम हैं हम वतन है सारा जहां हमारा।" जैसी कविताओं में स्पष्ट झलकता है।

जव इस्लामी सिद्धान्तों के ज्ञान और उनमें आस्था से डा० इकवाल जैसे-पढ़े लिखे मुसलमान में यह वदल आ सकता है तो साधारण मुसलमानों के मानस पर उसके प्रभाव की कल्पना सहज में ही की जा सकती है। देश में और विशेष रूप से आज के कटे फटे हिन्दुस्तान में रहने वाले मुसलमानों द्वारा १९४७ के निर्णायक चुनाव में मुस्लिम लीग और उसके द्वारा उठायी गयी पाकिस्तान की मांग को पूर्ण समर्थन देना इसी का परिणाम था।

अंग्रेज शासकों को भारतीय मुसलमानों में साम्प्रदायिकता और अलगाव की भावना पैदा करने का दोष देना गलत है। इस भावना का, जो इस्लाम के सिद्धान्तों में निहित है, अपने साम्राज्यवादी हितों के लिए उन्होंने उसी प्रकार लाभ उठाने का प्रयत्न किया जिस प्रकार स्वतन्त्र भारत के अधिकांश राजनैतिक दल मुसलमानों की इस भावना का राष्ट्र हित की कीमत पर अपने दलगत स्वार्थों की पूर्ति के लिए लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

पाकिस्तान भारत माता के तन का वह टुकड़ा है जो भारत के मुसलमानों ने राष्ट्रवादी भारत से खंडित भारत की आजादी की कीमत के रूप में प्राप्त किया। इस प्रकार पाकिस्तान भारत की प्राकृतिक सीमाओं के अन्दर एक नया "दार-उल-इस्लाम" वन गया। पाकिस्तान के निर्माता इससे संतुष्ट नहीं हुए। वे तो सारे हिन्दुस्तान को ही दार-उल-इस्लाम बनाना चाहते थे। उनके मनों का यह भाव १९४७ में लाहौर में लगने वाले इस नारे से स्पष्ट झलकता था—

"हंस के लिया है पाकिस्तान, लड़के लेंगे हिन्दुस्तान॥"

इस्लाम के प्रारम्भिक काल में मुस्लिम राज्यों में रहने वाले अमुस्लिमों के सामने केवल एक विकल्प था—इस्लाम मजहव में प्रवेश या मौत।" वाद में अपवाद के रूप में उन्हें जजिया कर देकर "जिम्मी" के

रूप में घटिया नागरिक की तरह जीवित रहने की अनुमति दी गई। पहिले यह अपवाद मूर्तिपूजकों पर लागू नहीं होता था—बाद में उन पर भी लागू किया गया। शेख हमदाही द्वारा लिखित 'जखीरात उल मुल्क के' अनुसार खलीफा उमर ने अग्नि पूजकों को इस्लामी देशों में जीवित रहने की अनुमति के लिए निम्न शर्तें लगाई थीं—

(१) वे नये मन्दिर या पूजा गृह नहीं वनायेंगे।

(२) वे पुरानी इमारत का, जो तोड़ दी गई हैं, पुनर्निर्माण नहीं करेंगे।

(३) मुस्लिम यात्रियों पर मंदिरों में ठहराने पर कोई रोक नहीं होगी।

(४) कोई मुसलमान किसी गैर मुस्लिम के घर में तीन दिन तक रह सकता है और इस काल में उसके द्वारा किये गये किसी कृत्य को गुनाह नहीं माना जायेगा।

(५) यदि कोई अमुस्लिम मुसलमान वनना चाहे तो उसे रोका नहीं जायेगा।

(६) मुसलमानों का आदर किया जायगा।

(७) यदि अमुस्लिम कहीं सभा कर रहे हों तो मुसलमानों को उसमें आने से रोका न जाय।

(८) वे मुसलमानों जैसे कपड़े न पहनें।

(९) वे मुसलमानों जैसे नाम न रखें।

(१०) वे काठी और लगाम वाले वाले घोड़ों पर न चढ़ें।

(११) वे अपने पास खड्ग और तीर कमान न रखें।

(१०) वे अंगूठी न पहनें।

(१३) वे शराव का न प्रयोग करें और न बेचें।

(१४) वे अपना पुराना लिवास न छोड़ें।

(१५) वे अपने रीति रिवाजों और धर्म का प्रचार न करें।

(१६) वे अपने घर मुसलमानों के घरों के निकट न बनायें।

(१७) वे अपने मृतकों के शव मुसलमानों के कब्रिस्तानों के निकट न लायें।

(१८) वे अपने मृतकों के लिए ऊंची आवाज में मातम न करें।

(१९) वे मुस्लिम गुलाम न ख़रीदें।

(२०) वे न गुप्तचरी करें और न किसी गुप्तचर को किसी प्रकार की सहायता दें।

यदि अमुस्लिम इनमें से किसी भी शर्त को तोड़ेंगे तो मुसलमानों की उनकी जान और माल को लेने का अधिकार होगा जैसा कि उन काफिरों की जान व माल पर उनका अधिकार होता है जिनसे वे युद्ध कर रहे हों।

डा० भीमराव अम्वेडकर इस्लाम के इतिहास और कानून से भली प्रकार परिचित थे। इसलिए १९४६ में अपनी विचार उद्ववोधक 'थाट्स आन पाकिस्तान' नामक पुस्तक लिख कर उन्होंने सभी राष्ट्रवादियों को चेतावनी दी थी कि पाकिस्तान वन जाने के वाद किसी हिन्दू का उस इस्लामी राज्य में रहना सम्भव नहीं होगा। इसलिए उन्होंने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में वची मुसलमान और हिन्दू जन संख्या का योजनावद्ध अदला-वदली का सुझाव दिया था। उनके अनुसार दो राष्ट्रों के आधार पर विभाजन का यह तर्क संगत फलितार्थ था। उन्होंने इस काम को सम्पन्न करने के लिए पहिले महायुद्ध के वाद तुर्की और यूनान के वीच मुस्लिम और ईसाई जनसंख्या की अदला-वदली के अनुभव के आधार पर एक विस्तृत योजना भी इस पुस्तक में प्रस्तुत की थी।

१९४७ के विभाजनका दूसरा तर्क संगत फलितार्थ १५ अगस्त को ही खंडित हिन्दुस्तान को हिन्दू राज्य घोषित करना था। सारा संसार खण्डित भारत को पाकिस्तान से विभक्त करने के वाद "हिन्दू इण्डिया" कहता है। हिन्दुस्तान हिन्दू राष्ट्र है और यह हिन्दू राज्य होना चाहिए। इस वास्तविकता को स्पष्ट रूप में स्वीकार करना चाहिए था।

हिन्दू कोई मजहव नहीं। स्वर्गीय डा० राधाकृष्णन के अनुसार यह भारतीय उद्‌गम के सभी पंथों का महासंघ है। यहां सव सर्व-धर्म-समभाव में आस्था रखते हैं। इसलिए हिन्दू राज्य यहूदी, ईसाई और इस्लामी राज्यों जैसा मजहवी राज्य न कभी हुआ है और न हो सकता है। धार्मिक सहिष्णुता तथा विचार और मत की स्वतन्त्रता वैदिक, शैव, वैष्णव, वौद्ध, जैन, सिक्ख इत्यादि सभी भारतीय उद्‌गम के पंथों का साझा गुण है। इसीलिए उस काल में भी जव मजहव के नाम पर भारत में भी मार काट ओर हिन्दुओं पर जघन्य अत्याचार हो रहे थे, महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी और पंजाव में महाराजा रणजीतसिंह द्वारा संस्थापित हिन्दू राज्य सर्व-धर्म-सम भाव, धार्मिक स्वतन्त्रता और समानता के उज्जवल उदाहरण थे।

स्वतन्त्रता के ३४ वर्षों में भारत के अन्दर और इसके आस पास के देशों में चलने वाले घटनाचक्र ने विभाजन के इस तर्कसंगत परिणाम को

स्वीकार करना और कार्यरूप देना भारत के एक स्वतन्त्र और विशिष्ट राष्ट्र के रूप में अस्तित्व के लिए अनिवार्य वना दिया है। इस काल में पाकिस्तान हम पर तीन युद्ध थोप चुका है और चौथे की तैयारी कर रहा है। जो मुसलमान विभाजन और मुस्लिम लीग का सामूहिक रूप में समर्थन करने के वाद भारत में ही टिके रहे उन्होंने कुछ अपवादों को छोड़कर अपने व्यवहार से यह सिद्ध कर दिया है कि वे न केवल भारत की राष्ट्रीय धारा में आने को तैयार नहीं, अपितु वे योज नावद्ध ढंग से पाकिस्तान के पांचवे दस्ते का काम कर रहे हैं।

हिन्दुस्तान की सरकार और यहां की हिन्दूजनता की सहिष्णुता और मुसलमानों के प्रति उदार नीति के परिणाम स्वरूप इन वर्षों में इस देश के मुसलमानों की जन संख्या वढ़ कर लगभग चार गुणा हो गई। इसके विपरीत बंगला देश समेत पाकिस्तान में वची लगभग उतनी ही हिन्दुओं की जन संख्या का लगभग सर्वनाश कर दिया गया। इतना वड़े पैमाने पर नरसंहार शायद ही कभी हुआ हो।

१९७० के वाद मुसलमानों का रुख अधिकाधिक आक्रात्मक होता जा रहा है। इसका मूल कारण अरबों के पास से तेल का अथाह धन आना है जिसका प्रयोग वे पान-इस्लामवाद को फैलाने के लिए कर रहे हैं। प्रो० अली मजुम राही ने जो स्वयं मुसलमान हैं और एक अमरीकी विश्व विद्यालय में राजनीति के प्रोफेसर हैं, 'इण्टर नेशनल एफेयर' में छपे अपने हाल के लेख में इस घटना चक्र का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि १९७० के वाद तीन प्रकार के घटना-चक्रों ने मुस्लिम संसार और उसके शेष संसार के प्रति रुख को प्रभावित किया है। उनमें से पहला है इस्लाम का राजनीतिकरण, दूसरा है इस्लाम का पेट्रोलीकरण और तीसरा है इस्लाम का आणवीकरण और इस्लामी अणु वम का निर्माण। पहले का सम्वन्ध इस्लामी संसार में वढ़ती हुई राजनैतिक चेतना से है। दूसरे का सम्वन्ध पैट्रोल जन्य धन -शक्ति का मुस्लिम देशों के भाग्योदय में योग से है और तीसरे का सम्वन्ध युद्ध क्षेत्र में इस्लाम की अणुशक्ति के सम्भावित प्रभाव से है।

इस्लाम के इस राजनीतिकरण, पेट्रोलीकरण और आणवीकरण के हिन्दुस्तान के लिए वहुत गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। पाकिस्तान संसार का सव से शक्तिशाली इस्लामी राज्य है। अरबों द्वारा मिलने वाले धन के बल पर यह इस्लाम के आणवीकरण और इस्लामी अणुवम के निर्माण का सव से वड़ा केन्द्र वन गया है। अमरीका और चीन इसे सैनिक

सहायता दे रहे हैं। इन कारणों से इसने इस्लामी सिद्धान्तवाद, सैनिक तानाशाही और उसके भारत स्थित पांचवे दस्ते की अन्दरूनी तोड़-फोड़ तथा वाहरी आक्रमण के वल पर हिन्दुस्तान को भी इस्लामी राज्य वनाने की योजना को कार्य रूप देने की ओर अग्रसर किया है।

हिन्दू समाज के गरीब और पिछड़े वर्ग के अरवों से प्राप्त आर्थिक सहायता के वल पर सामूहिक रूप से मुसलमान वनाने के घटनाचक्र को इस परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए और इसके राजनीतिक उद्देश्यों को समझाना चाहिए। यह न केवल भारत की एकता और सुरक्षा के लिए एक नया और भयानक खतरा है, अपितु भारत के एक राष्ट्र के रूप में अस्तित्व को भी चुनौती है।

जव भारतीय पंथों का अनुयायी कोई हिन्दू मुसलमान वनता है तो वह अपनी पूजा विधि ही नहीं वदलता, अपितु उसकी राष्ट्रीयता और आस्थाएं भी वदल जाती हैं। उसकी आस्था का प्रथम केन्द्र इस्लामी "मिल्लत" और मुस्लिम राज्य विशेष रूप में पाकिस्तान वन जाते हैं और हिन्दुस्तान के प्रति उसकी आस्था संदिग्ध हो जाती है।

इन हालात में हिन्दुस्तान के राष्ट्रपति होने के नाते देश के अन्दर और वाहर का यह घटनाचक्र आपके लिए विशेष चिन्ता का विषय है। दलगत स्वार्थ के कारण देश के राजनैतिक दल और उनके नेता इस स्थिति में निहित खतरों की ओर आवश्यक ध्यान नहीं दे रहे। इसलिए आपसे ही आशा की जाती है कि आप इस स्थिति का यथार्थवादी और राष्ट्रवादी मूल्यांकन कर के देश को ठीक दिशा देंगे।

इतिहास और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के एक विद्यार्थी के नाते जिसने पाकिस्तान और बंगला देश के रुख और भारत में उनके एजेन्टों की गति विधियों के परिप्रेक्ष्य में हिन्दुस्तान के एक राष्ट्र के रूप में निर्माण और प्रगति की समस्याओं पर गम्भीरता से विचार किया है, मेरा यह सुविचारित मत है कि हिन्दुओं की रक्षा और राष्ट्र के भविष्य के सम्वन्ध में आश्वस्त होने के लिए दो पग उठाने अति आवश्यक हैं। पहला पग है हिन्दुस्तान को हिन्दू राज्य घोषित करना। दूसरा है भारतीय पंथों के किसी भी अनुयायी को किसी भी सैमेटिक पंथ, जिनके मूल सिद्धान्त सर्व धर्म-समभाव, और मजहवी स्वतन्त्रता तथा सहिष्णुता की भारतीय मान्यताओं से मेल नहीं खाते, प्रवेश पर कानूनी रोक लगाना।

यदि यह पग १९४७ में ही उठा लिये गये होते तो विभाजन के समय की परिस्थितियों का पुनरोदय रोका जा सकता था। परन्तु भूल सुधार में कभी देर नहीं होती। जो काम १९४७ में होना चाहिए था, उसे अब कर लेना चाहिए।

भारत के चहुंओर के राज्य या तो हिन्दू-बौद्ध राज्य हैं या इस्लामी राज्य। पाकिस्तान और बंगला देश के इस्लामी राज्य व्यावहारिक रूप में पुनः भारत के विरुद्ध एक हो गये हैं। बंगला देश की स्वतन्त्रता के लिए भारत की जनता और जवानों द्वारा किये गये सारे बलिदानों को बंगला देश के मुसलमान शासकों ने भुला दिया है। इससे यह धारणा और अनुभव पक्के हुए हैं कि मुसलमान, मुसलमान पहले होता है, फिर कुछ और। जब उनमें इस्लामी धर्मान्धिता जगती है तो वे गैर मुस्लिम लोगों के प्रति भाई चारे, कृतज्ञता और मानवता की भावना खो बैठते हैं। हिन्दुस्तान की जनता और सरकार इस कटु सत्य की अवहेलना अपनी बरबादी की कीमत पर ही कर सकती है।

राष्ट्रपति होने के नाते आप हमारी सशस्त्र सेनाओं के सर्वोच्च सेनापति भी हैं। सेना के जवानों और अफसरों को ही युद्ध में पाकिस्तान से लोहा लेना पड़ता है। कुछ अपवादों को छोड़कर पाकिस्तान के साथ युद्ध में मुस्लिम सैनिकों की भूमिका का अनुभव सुखद नहीं है। सरकार द्वारा नियुक्त "डिफेंस स्टडी टीम" के उपाध्यक्ष के नाते मुझे इस सम्बन्ध में तथ्यों और सेना के जवानों और अफसरों को जानने का अवसर मिला था। उनसे १९४७ में पाकिस्तान द्वारा कश्मीर पर आक्रमण के समय मैंने जो प्रत्यक्ष अनुभव किया था, उसकी पुष्टि हुई।

किसी देश भक्त भारतीय को 'हिन्दू राज्य' से बिदकने का कोई कारण नहीं। ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दू 'इण्डियन' का पर्यायवाची शब्द है। इन दोनों नामों का उद्गम हमारे देश का महान भौगोलिक मान-चिह्न सिन्धु नदी है। यूनानियों ने सिन्धु का उच्चारण इन्डस किया और इसलिए सिन्धु स्थान अथवा हिन्दुस्तान को इण्डिया और यहां के लोगों को इण्डियन की संज्ञा दी। हर इण्डियन या भारतीय जिसका मजहब देश के प्रति उसकी आस्था में आड़े नहीं आता, वह हिन्दू है। सभी सच्चे भारतीयों से यह अपेक्षा है कि वे इस्लाम के उन सिद्धान्तों का परित्याग करें जो भारतीय राष्ट्रीयता और सर्व धर्म समभाव से मेल नहीं खाते।

मुझे आशा और विश्वास है कि राष्ट्र के सर्वोच्च नेता होने के नाते आप ऊपर लिखित बातों पर गम्भीरता से विचार करेंगे। समय पर किया काम अनेक भावी कठिनाइयों से बचाता है।

सम्मान सहित।

भवदीय
बलराज मधोक

सेवा में,
डा० संजीव रेड्डी
राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली।



हाय हुसैन ! हम न थे !!

(हिन्दुओं की धर्म-निरपेक्षता के प्रति इस्लाम की श्रद्धांजलि की ऐतिहासिक घटना)

स्वयं इस्लाम के इतिहास में एक ऐसा हृदय-द्रावक उदाहरण है जिसमें हिन्दुओं की धर्मनिरपेक्षता के प्रति अत्यन्त सार-गर्भित श्रद्धांजलि निहित है।

हजरत मोहम्मद साहब के पोते इमाम हुसैन अपने ७२ व्यक्तियों की टोली के साथ, जिसमें महिलाएं और दूध पीते बच्चे भी शामिल थे, जब कर्बला के मैदान में यजीद की भारी सेना से घिर गए और उन्हें पानी की बूंद तक से तरसा तरसा कर मरने के लिए विवश कर दिया गया, तब इमाम हुसैन ने भारत जाकर शरण प्राप्त करने की अनुमति मांगी। परन्तु यह अनुमति देने से इंकार कर दिया गया। उसके बाद कर्बला में जो दुःखान्त घटना घटी, उसके लिए इस्लामी दुनियां में प्रति वर्ष शोक मनाया जाता है।

उक्त ऐतिहासिक घटना शिया-परम्परा का अंग है और यदि अयातुल्ला खोमैनी से पूछा जाय तो वे इसका समर्थन करेंगे।

परन्तु शिया-परम्परा इसके आगे भी चलती है। उसके अनुसार, इमाम हुसैन की शहादत के बाद, उनका सिर काट दिया गया और शव यजीद के पास ले जाया गया। कर्बला के मैदान में बिना सिर का शव धरती पर उपेक्षित पड़ा रहा। उस शव की देखभाल करने वाला कोई नहीं था। अकस्मात् दत्त ब्राह्मणों की एक टोली उधर से गुजरी। वह टोली यह दृश्य देखकर वहीं रुक गई और उसने शव को उचित सम्मान के साथ दफनाया। उन दत्त ब्राह्मणों के वंशज आज भी भारत में विद्यमान हैं और वे 'हुसैनी ब्राह्मण' कहलाते हैं। वे हिन्दू विधि-विधान का पालन करते हैं किन्तु आज भी इमाम हुसैन की शहादत की यादगार को श्रद्धा सहित मनाते हैं।

—न्याय मूर्ति श्री शिवनाथ काटजू

हिन्दू और मुस्लिम दोनों जातियों को, जो हिन्दुस्तान में रहती हैं, मैं हिन्दू नाम से पुकारता हूं।

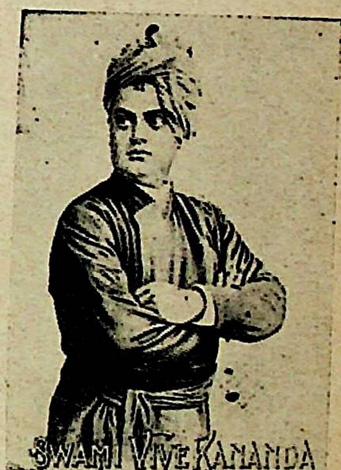
—अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय
के जन्मदाता सर सैयद अहमद खां

इकबाल उवाच

मैं असल का सोमनाथी
आबा मेरे लातियो-मुनाती।
तू सैयदे हाशमी की औलाद
मेरी कफे—खाक ब्राह्मन जाद॥

मैं सोमनाथ अर्थात् मन्दिरों की पैदावार हूं, मेरे पूर्वज मूर्तिपूजक थे। तुम भले ही सैयदों की औलाद हो, मैं तो ब्राह्मणों की सन्तान हूं।

भारत का भविष्य



—स्वामी विवेकानन्द—

[मद्रास का यह अन्तिम व्याख्यान एक विशाल मण्डप में हजारों श्रोताओं के सम्मुख दिया गया था। विवेकानन्द शिला स्मारक और जीवन व्रती संघ की स्थापना इसी ऐतिहासिक भाषण के आधार पर हुई थी।]

यह वही प्राचीन भूमि है जहां दूसरे देशों को जाने से पहले ही तत्वज्ञान ने आकर अपनी वासभूमि बनाई थी – यह वही भारत है जहां के आध्यात्मिक प्रवाह का प्रतिरूप उसके बहने वाले समुद्राकार नद हैं—जहां चिन्तन हिमालय स्तर में उठा हुआ अपने हिम-शिखरों द्वारा मानो स्वर्गराज्य के रहस्यों की ओर निहार रहा है। यह वही भारत है जिसकी भूमि पर बड़े बड़े ऋषियों ओर महर्षियां की चरण-रज पड़ चुकी है। यहीं सबसे पहले मनुष्य-प्रकृति तथा अन्तर्जगत् के रहस्योद्घाटन की जिज्ञासाओं के अंकुर उगे थे। आत्मा का अमरत्व, अन्तर्यामी ईश्वर एवं जगत्प्रपंच तथा मनुष्य के भीतर ओतप्रोत भाव से विराजमान परमात्मा-विषयक मतवादों का पहले पहल यहीं उद्भव हुआ था। और यहीं धर्म और दर्शन के आदर्शों ने अपनी चरम उन्नति प्राप्त कर ली थी। यह वही भूमि है जहां से उमड़ती हुई बाढ़ को तरह धर्म तथा दार्शनिक तत्वों ने समग्र संसार को प्लावित कर दिया है, और यहीं से पुनः ऐसी ही तरंगें उठकर निस्तेज जातियों में शक्ति और जीवन का संचार कर देंगी। यह वही भारत है जो शत शत शताब्दियों के आघात, विदेशियों के शत शत आक्रमण और सैकड़ों आचार-व्यवहारों के विपर्यय सहकर भी अक्षय बना हुआ है। यह वही भारत है जो अपने अविनाशी वीर्य और जीवन के साथ अब तक पर्वत से भी दृढ़तर भाव से खड़ा है। आत्मा जैसे अनादि, अनन्त

और अमृतस्वरूप है, वैसे ही हमारी भारतभूमि भी है, और हम इसी देश की सन्तान हैं।

भारत के बच्चो, तुमसे आज मैं यहां कुछ काम की बातें कहूंगा। तुम्हारे पूर्व गौरव की तुम्हें याद दिलाने का उद्देश्य केवल तुम्हें कर्म-पथ पर बुलाना ही है। कितनी ही बार मुझसे कहा गया है कि अतीत की ओर नजर डालने से सिर्फ मन की अवनति ही होती है और इससे कोई फल नहीं होता अतएव हमें भविष्य की ओर दृष्टि रखकर कार्य करना चाहिए। यह सच है। परन्तु अतीत से हो भविष्य का निर्माण होता है। अतएव जहां तक हो सके, पीछे—अतीत की ओर देखो, पीछे जो चिरन्तन निर्झर वह रहा है, आकण्ठ उसका जल पीओ और इसके बाद सामने देखो और भारत को उज्ज्वलतर, महत्तर, पहले से और भी उन्नत करो। हमारे पूर्वज महान् थे। पहले यह बात हमें याद करनी होगी। हमें समझना होगा, हम किन उपादानों से बने हैं—कौनसा खून हमारी नसों में वह रहा है। उस खून पर हमें विश्वास करना होगा। इस विश्वास और अतीत गौरव के ज्ञान से हम अवश्य एक ऐसे भारत की नींव डालेंगे जो पहले से श्रेष्ठ होगा। अवश्य ही यहाँ बीच-बीच में दुर्दशा और अवनति के युग भी बीत चुके हैं पर उनको मैं अधिक महत्त्व नहीं देता। हम सभी यह जानते हैं। ऐसे युगों की आवश्यकता थी। किसी विशाल वृक्ष ने एक सुन्दर पका हुआ फल पैदा किया, फल जमीन पर गिरा, वह मुरझाया और सड़ा, इस विनाश से जो अंकुर उगा, सम्भव है वह पहले के वृक्ष से बड़ा हो जाय। अवनति के जिन युगों के भीतर से हमें गुजरना पड़ा है, वे सभी आवश्यक थे। इसी अवनति के भीतर से भविष्य का भारत आ रहा है, वह अंकुरित हो चुका है, उसके नये पल्लव निकल चुके हैं और उस शक्तिधर विशालकाय वृक्ष—उस 'ऊर्ध्वमूलम्' वृक्ष का निकलना शुरू हो चुका है और उसी के सम्बन्ध में मैं तुमसे कहने जा रहा हूं।

किसी भी दूसरे देश की अपेक्षा भारत की समस्याएं अधिक जटिल और गुरुतर हैं। जन्मगत भेद, धर्म, भाषा, शासन-प्रणाली—ये ही एक साथ मिलकर एक जाति की सृष्टि करते हैं। यदि एक एक जाति को लेकर हमारी जाति से तुलना की जाय तो हम देखेंगे, कि जिन उपादानों से संसार की दूसरी जातियाँ संगठित हुई हैं वे संख्या में यहां के उपादानों से कम हैं। यहां आर्य हैं, द्राविड़ हैं, तातार हैं, तुर्क हैं, मंगोल हैं, युरोपीय हैं—मानो संसार की सभी जातियां इस भूमि पर अपना अपना खून मिला रही हैं। भाषा के सम्बन्ध में यहाँ एक विचित्र ढंग का जमाव है; आचार-व्यवहारों

के सम्बन्ध में दो भारतीय जातियों में जितना अन्तर है उतना पूर्वी और यूरोपीय जातियों में नहीं।

धर्म-हमारा मिलन-बिन्दु

हमारी एकमात्र सम्मिलन भूमि हमारे परम्परागत धार्मिक विचार हैं—हमारा धर्म है। एकमात्र साधारण भूमि वही है, और उसी पर से हमें जाति का संगठन करना होगा। यूरोप में राजनीतिक विचार ही जातीय एकता का कारण हैं। किन्तु एशिया में जातीय ऐक्य का आधार धर्म ही है। अतएव, भारत के भविष्य संगठन की पहली शर्त के तौर पर, उसकी धार्मिक एकता की ही आवश्यकता है। देश भर में एक ही धर्म सबको स्वीकार करना होगा। एक ही धर्म से मेरा क्या मतलब है? यह उस तरह का एक ही धर्म नहीं जिसका ईसाइयों, मुसलमानों या बौद्धों में प्रचार है। हम जानते हैं, हमारे विभिन्न सम्प्रदायों के सिद्धांत तथा दावे चाहे कितने ही विभिन्न क्यों न हों, उनमें कुछ सिद्धांत ऐसे हैं जो सभी सम्प्रदायों द्वारा स्वीकृत हैं। अस्तु, हमारे सम्प्रदायों के ऐसे कुछ साधारण सिद्धांत अवश्य हैं, और उनको स्वीकार करने पर हमारे धर्म में अद्भुत विविधता के लिए गुंजाइश हो जाती है, और साथ ही विचार और स्वच्छन्द जीवन-निर्वाह के लिए हमें सम्पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त हो जाती है। हम लोग, कम से कम वे, जिन्होंने इस पर विचार किया है, यह बात जानते हैं। और अपने धर्म के ये जीवनप्रद साधारण तत्व हम सबके सामने लाएं और देश के सभी स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध उन्हें समझें, तथा जीवन में परिणत करें—यही हमारे लिए आवश्यक है। यही हमारा प्रधान कार्य है। हम देखते हैं कि एशिया में और विशेषतः भारत में जाति, भाषा, समाज सम्बन्धी सभी बाधाएं धर्म की इस एकीरण-शक्ति के सामने उड़ जाती हैं। हम जानते हैं कि भारतीय मन के लिए धार्मिक आदर्श से बड़ा और कुछ भी नहीं है। धर्म ही भारतीय जीवन का मूल मन्त्र है, और हमें सबसे कम बाधा वाले मार्ग में ही सफलता प्राप्त होगी।

यह केवल सत्य ही नहीं कि धार्मिक आदर्श यहां सबसे बड़ा आदर्श है, किन्तु भारत के लिए कार्य करने का एकमात्र सम्भाव्य उपाय यही है। पहले उस पथ को सुदृढ़ किए बिना, दूसरे मार्ग से कार्य करने पर उसका फल घातक होगा। इसीलिए भविष्य के भारत-निर्माण का पहला सोपान, जिसे युगों के इस भारतरूपी महाचल पर खोदकर बनाना होगा—धार्मिक एकता लाना है। यह शिक्षा हम सबको मिलनी चाहिए कि हम हिन्दू—द्वैतवादो,

विशिष्टाद्वैतवादी या अद्वैतवादी, अथवा दूसरे सम्प्रदाय के लोग, जैसे शैव, वैष्णव, पाशुपत आदि, भिन्न भिन्न मतों के होते हुए भी आपस में कुछ साधारण भाव भी रखते हैं, और अव वह समय आ गया है कि अपने हित के लिए, अपनी जाति के हित के लिए हम इन तुच्छ भेदों और विवादों को त्याग दें। सचमुच ये झगड़े बिलकुल वाहियात हैं, हमारे शास्त्र इनकी निंदा करते हैं, हमारे पूर्वपुरुषों ने इनके वहिष्कार का उपदेश दिया है, और वे महापुरुषगण जिनके हम वंशज हैं, जिनका खून हमारी नसों में वह रहा है, अपने वच्चों को थोड़े से भेद के लिए झगड़ते देखकर उनको घोर घृणा की दृष्टि से ताक रहे हैं।

आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र की एक उपमा लीजिए। हम जानते हैं कि किसी बीमारी के फैलने के दो कारण होते है,—एक तो वाहर से कुछ विषैले जीवाणुओं का प्रवेश; दूसरा, शरीर की अवस्था-विशेष। यदि शरीर की अवस्था ऐसी न हो जाय कि वह जीवाणुओं को घुसने दे, यदि शरीर की जीवनी-शक्ति इतनी क्षीण न हो जाए कि जीवाणु शरीर में घुसकर बढ़ते रहें, तो संसार में किसी भी जीवाणु में इतनी शक्ति नहीं जो शरीर में पैठकर वीमारी पैदा कर सके। वास्तव में प्रत्येक मनुष्य के शरीर के भीतर से सदा करोड़ों जीवाणु निकलते-पैठते रहते हैं; परन्तु जब तक शरीर वलवान है, हमें उनकी कोई खवर नहीं रहती। जब शरीर कमजोर हो जाता है, तभी ये विषैले जीवाणु उस पर अधिकार कर लेते और रोग पैदा करते हैं। जातीय जीवन के बारे में भी यही बात है। जव जातीय जीवन कमजोर हो जाता है तभी हर तरह के रोग-जीवाणु उस जाति के शरीर में इकट्ठे जमकर उसकी राजनीति, समाज, शिक्षा और बुद्धि को रुग्ण वना देते हैं। अतएव उसकी चिकित्सा के लिए हमें इस वीमारी की जड़ तक पहुंचकर रक्त से कुल दोषों को निकाल देना चाहिए। जोर एक मात्र इस वात पर दें कि मनुष्य वलवान हो, खून साफ हो और शरीर तेजस्वी हो, जिससे ये सब बाहरी विषों को दवा और हटा देने लायक हो सकें। हमने देखा है कि हमारा धर्म ही हमारे तेज. हमारे बल, यही नहीं, हमारे जातीय जीवन की भी मूल भित्ति है।

अभी और चिरकाल के लिए भी तुम्हें उसी का अवलम्बन करना होगा और तुम्हें उसी के आधार पर खड़ा होना होगा, चाहे तुम्हें इस पर वह विश्वास न हो जो मुझे हैं। तुम इसी धर्म में बंधे हुए हो, और अगर तुम इसे छोड़ दो तो तुम चूर-चूर हो जाओगे। वही हमारी जाति का जीवन है और उसे अवश्य ही सवल वनाना होगा। तुम जो युगों के धक्के

सहकर भी अक्षय हो, इसका कारण केवल यही है कि धर्म के लिए तुमने वहुत कुछ किया था, उस पर सव कुछ निछावर किया था। तुम्हारे पूर्वजों ने धर्मरक्षा के लिए सव कुछ साहस पूर्वक सहन किया था, मृत्यु को भी उन्होंने हृदय से लगाया था।

विदेशी विजेताओं द्वारा मन्दिर के वाद मन्दिर तोड़े गये, परन्तु उस वाढ़ के वह जाने में देर नहीं हुई कि मन्दिर की चूड़ा फिर खड़ी हो गई। दक्षिण के इन्हीं पुराने मन्दिरों में से कुछ, और गुजरात के सोमनाथ के जैसे मन्दिर तुम्हें राशि राशि ज्ञान की शिक्षा देते हैं। वे जाति के इतिहास की जो गहरीं अंन्तर्दृष्टि खोलते हैं, वह ढेरों पुस्तकों से नहीं मिल सकती। ध्यान से देखो—किस तरह वे मन्दिर सैकड़ों आक्रमणों और सैकड़ों पुनरुत्थानों के चिह्न धारण करते हैं; ये वार वार नष्ट हुए और ध्वंसावशेष से उठकर वार वार नया जीवन प्राप्त करते हुए अव पहले ही की तरह अटल भाव से खड़े हैं।

समस्त भारत आर्यमय है

इसके साथ मैं और एक प्रश्न पर विचार करना चाहता हूं, जो खासकर मद्रास से सम्वन्ध रखना है। एक मत है कि दक्षिण-भारत में द्रविड़ नाम को एक जाति के मनुष्य थे जो उत्तर भारत की आर्य जाति से विलकुल जुदा थे और दक्षिण-भारत के ब्राह्मण ही उत्तर-भारत से गए हुए आर्य हैं; वहां की अन्यान्य जातियां दक्षिणी ब्राह्मणों से सम्पूर्ण पृथक् जाति की हैं। भाषातत्ववित् महाशय, मुझे क्षमा कीजिएगा, यह मत विल्कुल निराधार है। इसका एकमात्र प्रमाण यह है कि उत्तरऔरदक्षिण की भाषा में भेद हैं। दूसरा भेद मेरी नजर में नहीं आता। यहां हम उत्तर-भारत के इतने मनुष्य हैं, मैं अपने यूरोपीय मित्रों से कहता हूं, वे इस सभा में उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत के मनुष्यों को चुनकर अलग कर दें। भेद कहां है? जरा सा भेद भाषा में है। पूर्वोक्त मतवादी कहते हैं कि दक्षिणी ब्राह्मण जव उत्तर से आए थे तव वे संस्कृत वोलते थे, अभी यहां आकर द्राविड़ी भाषा वोलते बोलते संस्कृत भूल गए। यदि ब्राह्मणों के सम्वन्ध में ऐसी वात है तो फिर दूसरी जातियों के सम्वन्ध में भी यही बात क्यों न होगी? क्यों न कहा जाय कि दूसरी जातियाँ भी एक एक करके उत्तर-भारत से आई हैं—उन्होंने द्राविड़ी भाषा को अपनाया और संस्कृत भूल गई? वह युक्ति तो दोनों ओर लग सकती है। ऐसी वाहियात वातों पर विश्वास न करो। सारे भारत के मनुष्य आर्यों के सिवा और कोई नहीं।

हमारे शास्त्रों में एक भी शब्द नहीं है जो प्रमाण दे सके कि आर्य भारत के वाहर से किसी देश से आये। हाँ, प्राचीन भारत में अफगानिस्तान भी शामिल था, बस ! और यह सिद्धान्त भी कि शूद्र अनार्य और असंख्य थे, विलकुल अयौक्तिक है। उन के लिए यह सम्भव ही नहीं था कि मुट्ठी भर आर्य यहां आकर लाखों अनार्यों पर अधिकार जमाकर वसने लगे हों। अजी, पांच ही मिनट में वे अनार्य उन्हें खा जाते, उनकी चटनी वना डालते।

ब्राह्मणों का कर्त्तव्य

मुझे विशेष दुःख इस पर होता है कि वर्तमान समय में भी जातियों के बीच में इतना तर्क-वितर्क होता रहता है। इसका अन्त हो जाना चाहिए। यह उभय पक्षों के लिए व्यर्थ है, खास कर ब्राह्मणों के लिए, क्योंकि इस तरह के एकाधिकारों के दिन चले गए। हरएक अभिजात जाति का कर्तव्य है कि अपनी समाधि वह आप ही खोदे, और जितना शीघ्र इसे दफन कर सके उतना ही अच्छा है। जितनी ही वह देर करेगी, उतनी ही वह सड़ेगी और उसकी मृत्यु भी उतनी ही भयंकर होगी। अतएव ब्राह्मण जाति का कर्तव्य है कि भारत की दूसरी सव जातियों के उद्धार की चेष्टा करे। यदि यह ऐसा करे एवं जव तक ऐसा करे तभी तक वह ब्राह्मण है और अगर वह धन के फेर में चक्कर लगाती रहे तो वह ब्राह्मण नहीं।

यह ब्राह्मणों का दोष नहीं कि वे उन्नति के मार्ग पर अन्यान्य जातियों से आगे बढ़े। दूसरी जातियों ने भी ब्राह्मणों की तरह समझने और करने की चेष्टा क्यों नहीं की ? क्यों उन्होंने सुस्त बैठे रहकर ब्राह्मणों को वाजी मार लेने दी ? परन्तु दूसरों की अपेक्षा अधिक अग्रसर होना तथा सुविधाएं प्राप्त करना एक वात है और दुरुपयोग के लिए उन्हें बनाए रखना दूसरी वात। शक्ति जव कभी बुरे उद्देश्य के हेतु लगाई जाती है तो वह आसुरी हो जाती है, उसका उपयोग सदुद्देश्य के लिए ही होना चाहिए। अतएव युगों की यह संचित, शिक्षा तथा संस्कार, जिनके ब्राह्मण रक्षक होते आए हैं, अव साधारण जनता को देना पड़ेगा। और चूंकि उन्होंने साधारण जनता को वह सम्पत्ति नही दी, इसीलिए मुसलमानों का आक्रमण सम्भव हो सका था। हम जो हजारों वर्षों तक, जिस किसी ने भारत

पर धावा बोलना चाहा उसी के पैरों तले कुचले जाते रहे, इसका कारण है कि ब्राह्मणों ने शुरू से साधारण जनता के लिए वह खजाना खोल नहीं दिया। हम इसीलिए अवनत हो गए।

हमारा पहला कार्य यही है कि हमारे पूर्वजों के बटोरे हुए धर्मरूपी अनमोल रत्न जिन कोठरियों में छिपे हुए हैं उन्हें तोड़कर उन रत्नों को बाहर निकालें और उन्हें सबको दे दें। यह कार्य सबसे पहले ब्राह्मणों को ही करना होगा। बंगाल में एक पुराना कुसंस्कार हैं कि जो गोखुरा साँप काटता है, वह अगर खुद अपना विष खींच ले तो रोगी जरूर बच जाएगा। अतएव ब्राह्मणों को ही अपना विष खींच लेना होगा।

संगठन में ही बल है

यदि भारत को महान् बनाना है, उसका भविष्य उज्ज्ल बनाना है, तो इसके लिए आवश्यकता है संगठन करने की, शक्ति-संग्रह करने की और बिखरो हुई इच्छा-शक्तियों को एकत्र करने की। मुझे ऋग्वेद-संहिता की एक ऋचा याद आ गई, जो सदा ध्यान में रखने योग्य है। उसमें कहा गया है कि "तुम सब लोग एक-मन हो जाओ, सब लोग एक ही विचार के बन जाओ, क्योंकि प्राचीन काल में एक-मन होने के कारण ही देवताओं ने हवि पाई है!" **संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे०"** इत्यादि। देवता मनुष्य द्वारा इसीलिए पूजे गए कि वे एक-चित्त थे। एक-मन हो जाना ही समाज-गठन का रहस्य है। और यदि तुम 'आर्य' और 'द्रविड़', 'ब्राह्मण' और 'अब्राह्मण' जैसे तुच्छ विषयों को लेकर 'तू-तू मैं-मैं' करोगे—झगड़े और पारस्परिक विरोध-भाव को बढ़ाओगे—तो समझ लो कि तुम उस शक्ति-संग्रह से दूर हटते चले जाओगे, जिसके द्वारा भारत का भविष्य गठित होने वाला है। इस बात को याद रखो, कि भारत का भविष्य सम्पूर्णतः उसी पर निर्भर करता है। बस, इच्छा-शक्ति को केन्द्रीभूत और शतमुखी शक्तियों को एकमुखी करने में ही सारा रहस्य है।

जन्म भूमि ही देवता

आगामी पचास वर्ष के लिए यह जननी मातृभूमि ही तुम्हारी

आराध्य देवी वन जाय। इस आधी शताब्दी के लिए अपने मस्तिष्क से अन्यान्य देवी-देवताओं को हटाने में भी कुछ हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, देश को जगाओ, जाति को जगाओ, इसी में उस परब्रह्म परमात्मा को देखो। सर्वत्र उसके हाथ हैं, सर्वत्र उसके पैर हैं और सर्वत्र उसके कान हैं। समझ लो कि अन्यान्य देवी-देवता सो रहे हैं। जिन देवी-देवताओं को हम देख नहीं पाते हैं उनके पीछे तो हम वेकार दौड़ें और ईश्वर के जिस विराट रूप को हम अपने चारों ओर देख रहे हैं, उसकी पूजा ही न करें? जव हम इस सामने आए हुए देवता की पूजा कर लेंगे, तभी हम अन्यान्य देव-देवियों की पूजा करने योग्य होंगे, अन्यथा नहीं। आधा मील चलने की तो हममें शक्ति ही नहीं और हम हनुमानजी की तरह एक ही छलांग में समुद्र पार करने की इच्छा करें! नहीं, ऐसा हो हो नहीं सकता। जिसे देखो वही योगी होने की धुन में है, जिसे देखो वही समाधि लगाने जा रहा है।

सवसे पहले ईश्वर के उस विराट रूप की पूजा करो, जिसे तुम अपने चारों ओर देख रहे हो। उनकी पूजा करो, सेवा नहीं; सेवा शब्द से मेरा अभिप्रेत भाव ठीक समझाया नहीं जाता। ये मनुष्य और अन्य प्राणी जिन्हें हम आस-पास और आगे-पीछे देख रहे हैं, ये ही हमारे ईश्वर हैं। इनमें सवसे पहले पूजा करो अपने देशवासियों की। इनकी सेवा करो, इनका सम्मान करो, ईर्ष्या-द्वेष का भाव अपने मन से निकाल दो, यही सच्ची पूजा है। झगड़ा मिटाकर सद्भाव स्थापित करने का ही नाम पूजा है। हमारे लिए यह परम कर्तव्य है जिसे न करने का फल हम हाथों हाथ पा रहे हैं। फिर भी हमारी आँखें नहीं खुलती!

ऐसा मंदिर चाहिए

सवसे पहले हमें एक मन्दिर की आवश्यकता है, क्योंकि सभी कार्यों में हिन्दू प्रथम स्थान धर्म को ही देते हैं। आप कहेंगे कि ऐसा होने से हिन्दुओं के विभिन्न मतावलम्बियों में परस्पर झगड़े होने लगेंगे। पर मैं आपको किसी मतविशेष के अनुसार वह मन्दिर बनाने को नहीं कहता। वह इन साम्प्रदायिक भेद-भावों के परे हो। उसका एकमात्र उपास्य ॐ हो जो कि हमारे सभी धर्म-सम्प्रदायों का मूल-मन्त्र है। यदि हिन्दुओं में कोई

ऐसा सम्प्रदाय हो, जो इस ओङ्कार को न माने, तो समझ लीजिए कि वह हिन्दू कहलाने योग्य नहीं है। वहां सब लोग अपने-अपने सम्प्रदाय के अनुसार ही उस ओङ्कार की व्याख्या कर सकेंगे, पर मन्दिर सबके लिए एक होगा। उसमें जो उपासक हों, वे अपने सम्प्रदाय के अनुसार जिस देव-देवी की प्रतिमा-पूजा करना चाहें, अन्यत्र जाकर करें; पर इस मन्दिर में वे औरों से झगड़ा न करें। इस मन्दिर में वे ही धार्मिक तत्व समझाये जायेंगे जो सब सम्प्रदायों में समान हैं।

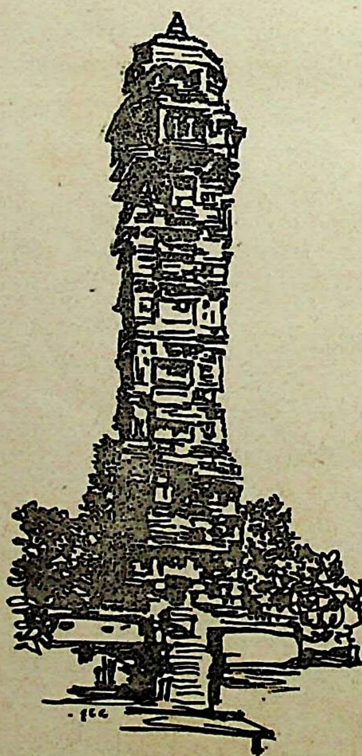
इस मन्दिर के साथ ही एक और संस्था हो जिससे धार्मिक शिक्षक और प्रचारक तैयार किये जायं और वे सभी घूम-फिरकर धर्म-प्रचार करने को भेजे जाएं। परन्तु वे केवल धर्म का ही प्रचार न करें, वरन् उसके साथ-साथ लौकिक ज्ञान का भी प्रचार करें। जैसे हम धर्म का प्रचार द्वार-द्वार जाकर करते हैं वैसे ही हमें लौकिक ज्ञान का भी प्रचार करना पड़ेगा। यह काम आसानी से हो सकता है। इन्हीं धर्म-प्रचारकों तथा व्याख्यान-दाताओं के द्वारा हमारे कार्य का विस्तार होता जायेगा; और क्रमशः अन्यान्य स्थानों में ऐसे ही मन्दिर प्रतिष्ठित होंगे और इस प्रकार समस्त भारत में यह भाव फैल जायेगा।

मद्रास के नवयुवको! तुम्हारे ऊपर ही मेरी आशा है। क्या तुम अपनी जाति और राष्ट्र की पुकार सुनोगे? प्यारे युवको! अपने आप पर अगाध, अटूट विश्वास रखो। मैं बाल्यकाल में अपने ऊपर बहुत विश्वास रखता था और उसी के बल से मेरे हृदय में जो उच्च अभिलाषाएं थीं, उन्हें अब कार्य-रूप में परिणत कर रहा हूं। तुम अपने आप पर विश्वास रखो। यह विश्वास रखो, कि प्रत्येक की आत्मा में अनन्त शक्ति विद्यमान है। बस तभी तुम सारे भारतवर्ष को पुनरुज्जीवित कर सकोगे।

युवक चाहिएं

इसके लिए मुझे युवक चाहिए। वेदों में कहा है—('आशिष्ठो बलिष्ठो द्रढ़िष्ठो मेघावी'—तैत्तिरीय उपनिषद्, २ – ८)—"युवक दृढ़, बलशाली, तीव्र मेघावाले और उत्साहयुक्त मनुष्य ही ईश्वर के पास पहुंच सकते हैं।" तुम्हारे भविष्य को निश्चित करने का यही समय है। इसीलिए मैं कहता हूं कि अभी इस भरी हुई जवानी में, इस नये जोश के जमाने में ही काम करो।। काम करने का यही समय है। इसीलिए अभी अपने भाग्य

का निर्णय कर लो और काम में लग जाओ; क्योंकि जो फूल मसला नहीं गया है, जो ताजा है और जो सूंघा नहीं गया है, वही भगवान के चरणों पर चढ़ाया जाता है और वे उसे ही ग्रहण करते हैं। इस बात को सदा याद रखो। अपने पैरों पर आप खड़े हो जाओ, देर न करो, क्योंकि जीवन क्षण-स्थायी है। वकील-बैरिस्टर बनने की अभिलाषा ही जीवन की सर्वोच्च अभिलाषा नहीं है। इससे तो झगड़े-झंझट बढ़ाने की प्रवृत्ति ही अधिकतर पुष्ट होती है। इससे भी ऊंची अभिलाषा रखो और अपनी जाति, देश, राष्ट्र और समग्र मानव-समाज के कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग करना सीखो। इस जीवन में क्या है? तुम हिन्दू हो और इसीलिए तुम्हारा यह दृढ़ विश्वास है कि तुम अनन्त काल तक रहने वाले हो।



चित्तौड़ का विजय स्तम्भ

महात्मा हंसराज



महात्मा हंसराज ने हिन्दू समाज के उत्थान के लिए निम्न उपाय सुझाए थे—

१. व्यक्ति की योग्यता को महत्व दिया जाए, उसकी जाति को नहीं।

२. झूठे जातिभेद को समाप्त किया जाए।

३. दलितों की उन्नति के लिए सब प्रकार से सहायता दी जाए।

४. हिन्दुओं में एकत्व की भावना भरना और उन्हें बताना कि वे एक महान् धर्म के अनुयायी हैं।

५. वेदों को पढ़ने का अधिकार सबको देना।

६. त्यौहारों का इस ढंग से पुनर्गठन करना कि वे जाति के बिखराव में नहीं, उसके संगठन में सहायक बनें।

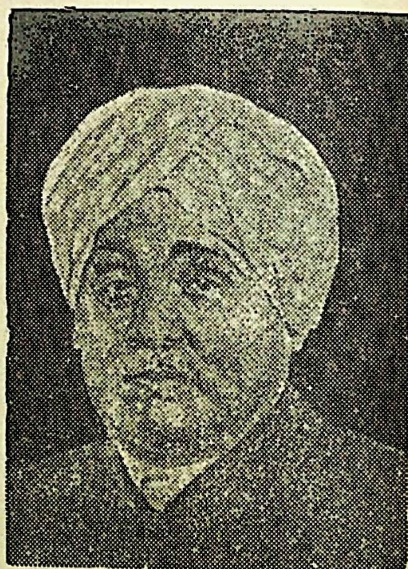
७. हिन्दुओं में सम्मिलित प्रार्थना की प्रथा जारी करना।

८. हिन्दुओं के निष्कासन को रोकना और विधर्मी बने बन्धुओं को पुनः अपने में मिलाना।



हिन्दू--शब्द धर्मवाचक कम, राष्ट्रवाचक अधिक

—पंजाब केसरी लाला लाजपतराय—



मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि हमें हिन्दू नाम सबसे पहले मुसलमान आक्रमणकारियों ने दिया और यह नाम घृणा को प्रकट करता है। इसके बजाय मैं यह मानता हूं कि हमारी अवनति से इस शब्दके अर्थ का भी अवमूल्यन हो गया। इस शब्द के इतिहास का अध्ययन करने से यह पता लग जाएगा कि इसके साथ जो घृणा का भाव जड़ गया है, वह बहुत कुछ बाद के समय की देन है और वह हिन्दू जाति के पतन का ही परिणाम है। मुसलमानों के आक्रमण से बहुत पहले, बल्कि इस्लाम धर्म के पैगम्बर आगमन से भी बहुत पहले, अन्य देशों के लोग हमें हिन्दू नाम से जानते थे।

यदि ऐसा है, तो इस नाम का महत्त्व क्या है? वह क्या किसी कबीले का नाम था? मेरा कहना है—नहीं, क्योंकि हिन्दू तो अनेक कबीलों के लोग थे। तो क्या यह किसी नस्ल या जाति का नाम था? मैं फिर जोर देकर कहता हूं—नहीं, क्योंकि ईरान के पारसी भी उसी नस्ल के थे। तो क्या यह शब्द किसी धर्म का वाचक था? हाँ, अंशतः यह धार्मिक था, इसमें

सन्देह नहीं: परन्तु मुख्य रूप से यह राष्ट्रवाचक था और मैं इस सम्बन्ध में प्राचीन ग्रीक इतिहासविदों और मुसलमान लेखकों के अनेक उद्धरण दे सकता हूं। उदाहरणार्थ, फारस के होमर, प्रतिभाशाली महाकवि फिरदौसी ने, जिसने ईरानियों और तूरानियों के बीच उच्चता के लिए संघर्ष को अमर कर दिया है, 'शाहनामा' के पदों में हिन्दू शब्द का इस्तेमाल क्यों और किस अर्थ में किया है।

हमें अपने लोगों के लिए पारसियों की 'वेन्दिदाद' तथा अन्य पुस्तकों में हिन्दू शब्द का प्रयोग मिलता है। जहां तक इस नाम का सम्बन्ध है, हमें दिक्कत तव होती है जव हमें अपने साहित्य में इस नाम का कहीं अता-पता नहीं मिलता, क्योंकि वहां हमें आर्य कहा गया है। पर यहाँ भी हमें उन स्थलों में राष्ट्रीयता की भावना पर्याप्त रूप से मिलती है जिनमें ऋषियों ने दस्युओं, चाण्डालों और म्लेच्छों के विरुद्ध सव आर्यों को संगठित होने के लिए आह्वान किया है। प्राय: दस्युओं से रक्षा के लिए देवताओं से भी प्रार्थना की गई है। हिन्दुओं में साम्राज्य की भावना के संकेतों के रूप में रामायण और महाभारत में पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। महाराज युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ क्या था और जरासिंध की महत्त्वाकांक्षी योजना को आप क्या कहेंगे ?

सचाई यह है कि आर्यों की उच्चता का जो सर्वोत्कृष्ट गौरवपूर्ण काल है वह अभी तक हमारे लिए एक वन्द अध्याय है। वौद्धों से पहले का सारा समय रहस्य से आवृत है।

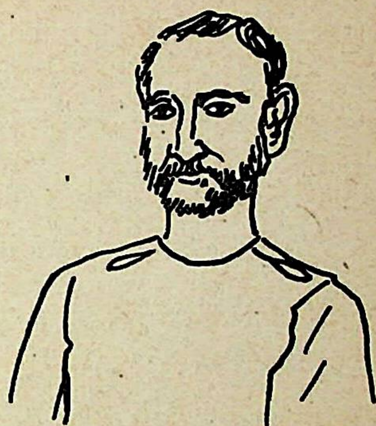
जव से प्राचीन हिन्दुत्व की भावना कर्मकाण्ड और पूजा-पाठ के आडम्वरों के नीचे दव गई, तवसे हिन्दुत्व का अभिशाप शुरू हुआ। परन्तु तव भी राष्ट्रीयता की भावना का लोप नहीं हुआ। आप कह सकते हैं कि हम शहीदों को लगातार पैदा करते रहे हैं और आस्था के बल के बिना कोई शहीद नहीं हो सकता। कोई आस्था-हीन जाति शहीदों को कैसे पैदा कर सकती है ? क्या कोई ऐसा राष्ट्र है जिसने अपने धर्म के प्रति, अपनी अस्मिता के प्रति और अपने पवित्र विधि-विधान के प्रति हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक आस्था का परिचय दिया हो ? अन्यथा अपने धार्मिक विधि-विधानों और अपने रीति-रिवाजों के प्रति दृढ़तापूर्वक चिपके रहने की आप कैसे व्याख्या कर सकते हैं ?

मैंने जानबूझकर धर्म के विधि-विधानों की बात कही है, क्योंकि मनुष्य और राष्ट्रों के जीवन को वदल देने वाला और उसे दिशा देने वाला,

उन्हें ऊंचा उठाने वाला, उच्च आदर्शों के लिए प्रेरित करने वाला और अधिकतम बलिदान की भावना जगाने वाला वास्तविक धर्म चिरकाल से हममें से गायब हो चुका है। सचाई तो यह है कि बुद्ध के बाद के जमाने में वह हृदय के मन्दिर में कभी प्रतिष्ठित हो ही नहीं सका। निस्सन्देह, हम शहीद पैदा करते रहे हैं. लगातार और सदा, और कभी कभी बड़ी संख्या में भी, किन्तु मैं जब हिन्दुओं में आस्था की कमी की शिकायत करता हूं, तब मेरा अभिप्राय किसी व्यक्तिगत आस्था से नहीं होता, बल्कि उस सामाजिक आस्था से होता है जो विजय की जनक होती है, वह आस्था जो जनसमुदायों को उठाकर खड़ा कर देती है; अपनी नियति, अपने मिशन, और अपने महाकाव्यों के मिशन में आस्था, संघर्ष के लिए सम्नद्ध करने वाली आस्था, अपने हृदय में अपने धर्म और भावी प्रगति को ही अपना लक्ष्य मान कर परमात्मा और मानवता के कल्याण की राह में निरशंक और निर्भय होकर आगे बढ़ने को प्रेरणा देने वाली आस्था। महात्मा बुद्ध के बाद से हममें इसी आस्था का अभाव हो गया है और यही वह आस्था है जिसकी हमें आज एक राष्ट्र बनने के लिए ग्रावश्यकता है।



भारत का महत्व हिन्दुत्व के कारण



—भाई परमानन्द—

हिन्दू हमारे लिए एक नाम ही नहीं है इसके साथ तो आरंभ से लेकर हमारी जाति का इतिहास बंधा है। इस नाम की कथा वताने वाले हमारे कवि और अवतार हुए हैं, इसके लिए शास्त्रों और दर्शनों के रचयिता हुए हैं। इसकी मान रक्षा के लिए हमारे वीर और क्षत्रिय युद्ध करते रहे। इसके लिए उन्होंने अपने प्राणों को वार दिया।"

'कुफ्र देता जा—मेरा ईमान लेता जा'

हिन्दू घातक, मुस्लिम पोषक आँधी के समक्ष मै अपनी आत्मा को नहीं दवा सकता। मैं हिन्दू हूं, हिन्दू की सन्तान हूं, आजन्म हिन्दू कहलाऊंगा, हिन्दुस्तानी नहीं।"

गर निशानये हिन्दू कुफर ठहरी
मेरा कुफर देता जा, अपना ईमान लेता जा।

संसार की जातियों में हिन्दू जाति ही एक जाति है जिसकी नींव धर्म पर ही नहीं अपितु राजनीति पर है। हिन्दू शब्द ही एक राजनीतिक शब्द है। हिन्दू का अर्थ वे लोग हैं जो हमारे देश की पृथ्वी के स्वामी हैं, इस देश को पुण्यभूमि मानते हैं। जो व्यक्ति ईसाई या इस्लाम मजहब को सामने रखकर हिन्दू शब्द का लक्षण उसी प्रकार ढूंढना चाहते हैं, वे गलती पर हैं। हिन्दुओं में ऐसे मत भी हैं जो जैन मत के समान ईश्वर का अस्तित्व ही नहीं मानते और ऐसे मत भी हैं जो वेदान्तियों की तरह सब कुछ व्रह्म ही ब्रह्म समझते हैं। जिन नियमों या सिद्धान्तों को वर्तमान धर्म अपनी नींव समझते हैं, हिन्दू उनको दर्शनमात्र समझते हैं और इसके साथ

ही प्रत्येक मनुष्य को इन पर स्वतन्त्रता से विचारने और भिन्न मति रखने का अधिकार देते हैं। अन्य मत हिन्दुओं से परिहास में कहते हैं कि हिन्दू क्या हैं? हम समझते हैं कि हिन्दू जाति को इस बात का अभिमान रहना चाहिये कि इसका मस्तिष्क इतना ऊंचा रहा है कि आरम्भ से ही यह धार्मिक सिद्धान्तों की कैद से मुक्त रही।

इसलिये हम कह सकते हैं कि हिन्दू धर्म एक तरह की राजनीति ही रही है। एक ओर कृष्ण का जीवन एक राजनीतिक नेता का जीवन था। दूसरी ओर धार्मिक नेता का जीवन भी था उनका ईश्वरत्व उनके क्रियात्मक जीवन में था।

आजकल सुधारक णग ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के धर्मों पर वाद-विवाद करने तथा किन्हीं को सच्चा व किन्हीं को झूठा ठहराने में ही आर्य धर्म का पुनर्जीवन समझते हैं। भूले भटके लोग यह नहीं समझते कि ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के वेदों तथा शास्त्रों में वर्णित धर्मों के पाठ मात्र से या व्याख्यानों में वर्णन कर देने से देश में न कोई ब्राह्मण उत्पन्न हो सकता है न कोई क्षत्रिय। प्राचीन धर्म के पुनर्जीवन का अर्थ है कि देश में ब्राह्मण व क्षत्रिय हों। जो लोग राजनीति से डर कर तथा अपने आपको केवल धार्मिक बताकर प्राण बचाना चाहते हैं, उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि वे ईसाइयों या मुसलानों की तरह कोई नया मत बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं, देश के प्राचीन धर्म को पुनर्जीवित नहीं कर रहे। राजनीति हिन्दू धर्म का अटूट अंग है। राष्ट्र की आर्थिक, सांस्कृतिक, शारीरिक उन्नति के सब विषय राजनीति के अंतर्गत है। हिन्दुओं के पतन का सब से बड़ा कारण राजनीति के प्रति उदासीनता रहा है।

हिन्दुओं को यह याद रखना चाहिए कि यदि उनकी सभ्यता या संस्कृति संसार से मिट गई तो उनका अस्तित्व ही मिट जाएगा। धर्म और संस्कृति का त्याग करके न जीना अच्छा है और न मरना। धनधान्य की परवाह न करके प्राणों की रक्षा करनी चाहिए और प्राणों की परवाह न करके धर्म की रक्षा करनी चाहिए। धर्म और सम्मान एक ही हैं।

इस राष्ट्र का लक्ष्य एक ही है कि इसने असंख्य तूफान को झेल कर संसार की सबसे प्राचीन संस्कृति को बचाया है जो किसी और से नहीं हुआ। राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए हमें सब कुछ बलिदान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसका कारण यह है कि गुलामी में जातियां अपनी सत्ता गंवा देती है।

अपनी सत्ता को खोकर यदि स्वतन्त्रता मिले तो वह स्वतन्त्रता किसी काम की नहीं। देश के वर्तमान संघर्ष में हिन्दुओं को सब से बड़ा खतरा है।

भारत के राजनीतिक क्षेत्र में हिंदू जाति और उसकी सभ्यता को बुरी प्रकार से कुचलने का प्रयास किया जा रहा है। उसके जन्मसिद्ध अधिकार उससे छीनकर दसरों के सुपुर्द किये जा रहे हैं। किंतु एक दृष्टि से यह कोई नई समस्या नहीं है, वहुत प्राचीन है। हिंदू जाति के इस महान वृक्ष की जड़ों पर कुठाराघात करने वाले कौन हैं? हमारे वही भाई जिनका पालन-पोषण इसी माता के दुग्ध से हुआ है। इसके विनाश के लिए जो षड्यंत्र किया जा रहा है वह हिन्दुओं के धन से ही तैयार हुआ है। आज वह इस जाति का स्पष्ट विरोध करके परायों से मित्रता गांठने के विचार से कभी हाथ न आने वाली छाया के पीछे भाग रहे हैं। किंतु उन्हें यह ध्यान रखना चाहिए कि जो मनुष्य अपने भाई बंधुओं से पृथक् होकर परकीयों की सहायता करते हैं, उन्हें पृथ्वी भी छोड़ देती है।

सान्त्वना की एक वात है। यदि यह जाति और इसकी संस्कृति इतने युगों के अंदर विभिन्न आंदोलनों से नष्ट नहीं हुई है तो भविष्य के लिए भी हम निराश नहीं हैं। जातियों का उठना गिरना लगा रहता है। यदि किसी राष्ट्र की सभ्यता में ऐसी शक्ति विद्यमान है कि यह उस जाति के अन्दर जिंदगी कायम रख सके तो अत्यंत पतन की अवस्था में ऐसे उस सभ्यता (धर्म) के भी प्रेमी पैदा होते हैं जो अपने जीवन की सम्पूर्ण शक्ति मरती हुई जाति में उंडेल देते हैं और उसे जीवित कर देते हैं। मुसलमानी आक्रमणों के समय हिंदुओं की इतनी मुर्दा हालत थी कि एक पठान सिपाही सैकड़ों हिंदुओं को पकड़कर गुलाम वनाकर ले जाता था या जी में आया तो कत्ल कर देता था। इसका इलाज गुरु गोविंद सिंह ने निकाला। "बड़े यज्ञ" के लिए सिर देने वाले पैदा किये जिनका नाम खालसा रखा। पुराणों में भी यह उपाय वरता गया है। जब वेद धर्म का नाश होने लगा था तो ऐसा ही यज्ञ करके अग्निकुल के राजपूत पैदा किये गये। वह नुस्खा यही है कि आत्मा को मृत्यु के भय से ऊपर उठाओ। मौत का डर दूर हो जाने से मुरदा जीवित हो जाता है। भगवद् गीता में यही ज्ञान अर्जुन को दिया गया है कि इस आत्मा को शस्त्र छेद नहीं सकते, आग जला नहीं सकती, जल गला नहीं सकता तथा आंधी उड़ा नहीं सकती। गुरु हरगोविंद की वाणी में गीता का भरपूर ज्ञान है। उनकी चिता जब हजार मन चंदन डालकर बनाई गई तो उनके दो राजपूत शिष्य दौड़कर चिता में लजने के

लिए कूद पड़े। प्रेम और मृत्यु के प्रति उदासीनता का ऐसा दृश्य जगत् में कम ही दिखाई देता है। इसी नुस्खे को अपना कर बंदा वहादुर पैदा हुआ जिसने मुसलमानों का सामना किया। इन्हीं मुरदा हिंदुओं को बंदा वैरागी ने पंजाव भर में विजेता जाति वना दिया। वे निडर हो गए। फूट के कारण बंदा पकड़ा गया। जिस समय बंदा के वेटे को मुसलमानों ने चीरकर उसका हृदय निकालकर बंदा के मुंह पर फैंका और उसे तपी हुई सलाखों से मारा तव भी भगवान् का नाम उसकी जिह्वा पर रहा।

हमारे वेद-शास्त्र तथा धर्म-रक्षा में आत्माहुति देने वाले वीरों के उदाहरण न केवल हमारे हृदय में आशा का संचार करते हैं वरन् उनसे हमें कर्म की सच्ची प्रेरणा मिलती है। महाराणा प्रताप, महारानी पद्मिनी, गुरु गोविंदसिंह, शिवाजी, बंदा वहादुर के त्यागपूर्ण कार्यों के चिंतन से किसी मृत-प्राय जाति में जीवन शक्ति का संचार होना असंभव नहीं।

भगवद्गीता पढ़ने वाला विरला ही होगा जिसके मन में अपने आपको श्रीकृष्ण के प्रेम में अर्पण करने की इच्छा उत्पन्न न हुई हो। श्री कृष्ण क्या हैं ? वे हिंदू राष्ट्रीयता की आत्मा है। श्रीराम और श्रीकृष्ण ये दो नाम हिंदू जाति के प्राण हैं। हमारी राष्ट्रीयता या जातीयता सबसे बढ़ कर इन दो नामों से वंधी हुई है। यदि ये दो नाम हम से बाहर निकल जाएं तो हमारा राष्ट्र या जाति मृत प्राय हो जाए।

केवल हिंदू जाति है जिसने प्राचीन आर्य सभ्यता को बचाए रखा है। सबसे पहले उसको बौद्धमत का मुकावला करना पड़ा। कुमारिल भट्ट और शंकराचार्य के प्रयत्न से वैदिक धर्म की विजय हुई। ज्यों ही वह इससे निवृत्त हुआ, हिंदू धर्म को इस्लाम का मुकावला करना पड़ा। इस्लाम की लहर अफ्रीका से होकर योरुप को गई और दूसरी मिस्र, ईरान और अफ़गानिस्तान की विजित करती हुई इधर हिन्दुस्तान में आई। यह संघर्ष लगभग आठ सौ वर्ष तक जारी रहा। इसमें पंजाव, महाराष्ट्र और राजपूताना ने धर्म की रक्षा के लिए त्याग और वीरों के वलिदान में विशेष रूप से भाग लिया। राणा प्रताप, गुरु गोविंद सिंह और शिवाजी इत्यादि के विषय में ज्यादा कहना व्यर्थ सा है।

पंजाव में लाहौर नगर सदा के लिए एक यादगार रहेगा जहां चने बेचने वाला वह लड़का पैदा हुआ जिसका वेटा गुरु अर्जुनदेव और पोता हरगोविंद जैसा ज्ञानी वीर था जिसकी सन्तान आगे तेग चलकर बहादुर और गुरुगोविंद हुए।

औरंगजेव का समय था। हिंदू लोग अन्याय से तंग आ गए। कश्मीर में ब्राह्मणों पर अत्याचार और अन्याय की सीमा न रही। वे गुरु तेगवहादुर के पास सहायता के लिए आए। धन्य हैं वे परिवार जिन्होंने सभी कष्ट झेले, किन्तु सारा कश्मीर मुसलमान हो जाने के वावजूद यज्ञोपवीत और तिलक की लाज रखी।

जव जयचन्द के सामने उसकी लड़की ने प्रश्न किया कि आपके इस देश-द्रोह से हिंदू धर्म उठ जाएगा, लाखों गौओं का वध किया जाएगा और मंदिर गिराए जाएंगे, तव जयचन्द ने उत्तर दिया—"कुछ भी हो जाए, मेरी आत्मा तभी प्रसन्न होगी जव मैं पृथ्वीराज का लहू गिरता देखूंगा।" यदि हम वाद के मराठों और सिक्खों का इतिहास ध्यान से पढ़ें तो उनके अन्दर भी हम यही पाएंगे कि भारत से जाति धर्म नष्ट हो गया था। यदि यह जाति धर्म विद्यमान होता तो न भारत में इतनी आंधियां आतीं और न देश का इतना विनाश होता।

भारत का महत्त्व हिन्दुत्व, हिन्दू सभ्यता, संस्कृति तथा हिंदू धर्म के कारण है। महान् हिंदु संस्कृति की बनावटी व असत्य पर आधारित ईसाई व इस्लाम मजहवों से तुलना करना मूर्खता है। विशुद्ध हिंदु संस्कृति को यदि मिटाकर मिली-जुली संस्कृति बनाने का प्रयास किया गया तो यह महान् राष्ट्र नष्ट हो जाएगा।



भविष्य कब उज्ज्वल होगा ?

१. अन्तरजातीय विवाह जब तक अनिवार्य नहीं होगा, तब तक जातीयता को मिटाने का नारा खोखला ही रहेगा। अतः शासन को कानून बनाना चाहिये कि एक ही जाति या वर्ग के वर-वधू का विवाह कानून के द्वारा सम्मत न माना जाये।

२. किसी व्यक्ति के नाम के आगे या पीछे जाति सूचक कोई शब्द न लगाया जाये। इसे कानून से रोका जाये।

३. मन्दिरों में पुजारी का पद ब्राह्मणेतर व्यक्तियों को भी, यदि उनमें योग्यता हो, तो दिया जाये।

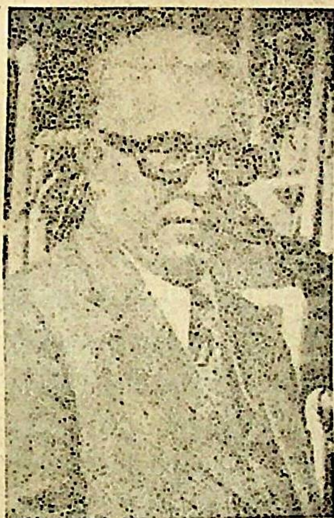
४. राष्ट्र की सामाजिक सुदृढता के लिए देश से आर्थिक विषमता मिटाकर ही एक आधुनिक न्यायोचित समाज का विकास किया जा सकता है।

५. सभी कृषि भूमि को जनता की भूमि बनाना होगा। भूमि का राष्ट्रीयकरण करना होगा। तभी परिश्रम करने वालों को संतोष मिलेगा और भूमि सोना उगलेगी।

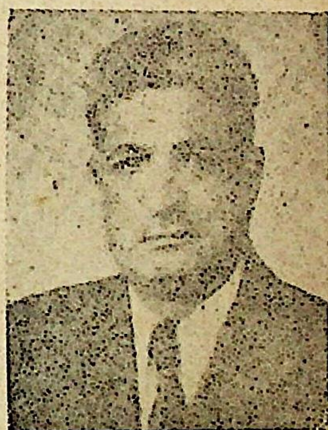
६. सरकारी और गैर-सरकारी नौकरियों में एक परिवार के एक से अधिक व्यक्ति को काम न दिया जाये। प्रत्येक परिवार में कम-से-कम एक व्यक्ति को नौकरी या रोजगार अवश्य हो। तभी राष्ट्र का भविष्य और हिन्दू समाज का भविष्य उज्ज्वल होगा।

—श्री जगजीवनराम

डी० ए० वी० संस्थाओं से अस्पृश्यता के कलंक को मिटाने के लिए कृतसंकल्प



डी० ए० वी० कालेज प्रबंधकर्त्री समिति के प्रशासनाधिकारी श्री दरबारी लाल



आर्य प्रादेशिक सभा के महामंत्री श्री रामनाथ सहगल



हंसराज माडल स्कूल पंजाबी बाग के प्राचार्य श्री तिलकराज गुप्त



पी० जी० डी० ए० वी० कालेज के प्राचार्य श्री मोहन लाल

हिन्दू जाति के अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न

—स्व० श्री स्वामी विद्यानन्द 'विदेह'—

हिन्दू-संगठन का लक्ष्य प्रतिकार, हिंसा वा शोषण न कभी था, न अब है, न कभी होगा। आर्य-युग से लेकर हिन्दू-युग तक का अद्यावधि इतिहास साक्षी है कि आर्य वा हिन्दू के रक्त और संस्कार में अन्याय, पक्षपात, अत्याचार का लेश भी नहीं है। हिन्दू जाति ने धर्म, सम्प्रदाय वा मजहब के नाम पर कभी शस्त्र नहीं उठाए; यदि उठाए तो वह राष्ट्र, देश वा राज्य की सीमाओं की रक्षा के लिए। सिख गुरुओं तथा छत्रपति शिवा ने जो हथियार संभाले वे हिन्दुओं के बलात् विधर्मी बनाए जाने के विरुद्ध संभाले थे, किसी को बलात् हिन्दू बनाने के लिए नहीं। हिन्दुस्थान के हिन्दुराज्यों में अहिन्दुओं को किसी भी प्रकार कभी बाधित, अपमानित व पीड़ित नहीं किया गया। कोई हिन्दू-राज्य ऐसा न था जिसमें अहिन्दुओं को अपने धार्मिक वा सामाजिक अधिकारों के लिए आन्दोलन, संघर्ष वा सत्याग्रह करना पड़ा हो। तद्विपरीत, कोई नवाबी [मुस्लिम राज्य] ऐसी न थी जिससे हिन्दुओं को अपने धार्मिक और सामाजिक अधिकारों के लिए आन्दोलन न करना पड़ा हो। नवाबियों में ही नहीं, गोवा के ईसाई राज्य में भी हिन्दुओं के धार्मिक तथा सामाजिक अधिकारों की लेशमात्र छूट न थी। मैं सदा से सारी पृथिवी को अपना एक अभिन्न गृह और पृथिवीस्थ समग्र मानवप्रजा को अपना एक अभिन्न परिवार समझता रहा हूं और समझता रहूंगा,—क्योंकि उन सबको मुझे वेदविचार और वेदाचार से युक्त करना है। हिन्दू-संगठन की मेरी धारणा में हिन्दुस्तान का सर्वोदय और विश्व का कल्याण निहित है।

हिन्दूसंगठन की दिशा में प्रथम पग देश के नामकरण का है। देश के विधान की रचना के क्रम में जब नाम का प्रश्न आया तो विधान-निर्मात्री सभा में सम्बन्धित धारा प्रस्तुत करने से पूर्व श्री भीमराव अम्बे-

कर, श्री जवाहरलाल नेहरू तथा मौलाना अबुल कलाम आजाद ने निजी-तौर से उस पर परस्पर विचार किया था। आर्यसमाजी विचारधारा के कतिपय विधान-सभाइयों ने श्री नेहरू को मौलिक तथा लिखित सुझाव दिया था कि विधान में देश का नाम 'आर्यावर्त' रखा जाए। स्वयं श्री अम्बेदकर देश का नाम 'हिन्दुस्तान अंकित करना चाहते थे। मौ० आजाद की राय थी कि देश का नाम 'हिन्दुस्तान' अथवा 'आर्यावर्त' रखने से हिन्दुओं के मानस में अवांछनीय अहंकार के संस्कार जमेंगे और अहिन्दुओं की भावनाओं को ठेस लगेगी। इस द्विधा में श्री नेहरू ने भारत नाम की पेशकश की, जिसे मौ० आजाद ने सहर्ष और अम्बेडकर ने अनिच्छापूर्वक स्वीकार किया। विधाननिर्मात्री सभा ने जव इस नाम को पास कर दिया तो हिन्दुओं में हर्ष की लहर दौड़ गयी और अहिन्दू प्रजा ने भी उस पर सन्तोष प्रकट किया। आज मैं अनुभव करता हूं कि यह अच्छा नहीं हुआ। मुसलमानों और अंग्रेजों के शासन में इस देश का नाम 'हिन्दुस्थान' रहा तो हिन्दुओं के मानस में सदैव यह भावना रही कि 'यह हिन्दुओं का देश' है। भारत नाम से वह भावना विलीन होकर अनार्यजुष्ट सेक्यूलेरिज्म [धर्मनिरपेक्षता] का वोल-वाला हो रहा है और देशनिष्ठा क्षीण होती जा रही है। अतः मैं अव चाहता हूं कि इस देश का नाम हिन्दुस्थान ही वना रहे। इंग्लिशमैनों के देश का नाम इंग्लैण्ड और रशियनों के देश का नाम रशिया रह सकता है, यद्यपि उनमें विभिन्न जातियों के नागरिक निवास करते हैं, तो प्रमुखतया हिन्दुओं तथा विभिन्न जातियों के इस देश का नाम हिन्दुस्थान रहने पर किसी को आपत्ति क्यों होनी चाहिए ? कवि-वर इकबाल ने तो गर्व के साथ गाया था—

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा।
हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलिस्तां हमारा॥
मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर करना।
हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्तां हमारा॥

हिन्दी शब्द प्रत्यक्षतः हिन्दु शब्द का पर्यायवाची है। हिन्दोस्तान तथा हिन्दुस्तान, ये दोनों शब्द हिन्दुस्थानशब्द के अपभ्रंश है पथभ्रष्टशब्दों को पुनः शुद्ध रूप में प्रस्थापित करने से, कोई हानि न होकर, लाभ ही होता है। राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी हिन्दुस्थान नाम अतिशय कारगर सिद्ध होगा। उस अवस्था में धर्म से ईसाई वा मुसलमान होने पर भी इस देश के ईसाइयों और मुसलमानों को राष्ट्रीयता से हिन्दू माने जाने में गर्व

ही होना चाहिए क्योंकि वे हिन्दुस्थान के निवासी हिन्दुरक्त हैं। रूस के मुसलमान अपने को रूसी, चीन के मुसलमान अपने को चीनी, जापान के मुसलमान अपने को जापानी कहते हैं। फिर हिन्दुस्थान के ईसाई-मुसलमान अपने को हिन्दुस्थानी, वा संक्षेप में हिन्दू कहेंगे और मानेंगे तो राष्ट्रीय एकता अपने वास्तविक स्वरूप में अवस्थित होगी। हिन्दुस्थान नाम से हिन्दुओं के मानस में देश के प्रति आत्मनिजता के संस्कार समेकित होंगे और अहिन्दुओं के मानस में हिन्दुओं के प्रति आत्मीयता उमड़ेगी। वह कैसा सुहावना वातावरण होगा! देश के प्रत्येक नागरिक को आत्मनिष्ठा के साथ अपने इस प्रिय देश को हिन्दुस्थान और अपने इस प्रिय राष्ट्र को हिन्दूराष्ट्र कहना चाहिए। अहिन्दु नागरिक ऐसा करके अपने देशप्रेम और राष्ट्रप्रेम का परिचय दे रहे होंगे।

हिन्दू शब्द पर पुर्नविचार

हिन्दू और हिन्दुस्थान—ये दोनों नाम एक हजार वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं। भाषा-विशारदों ने हिन्दू शब्द की व्युत्पत्ति जहां सिन्धु नदी के नाम के साथ जोड़ी है वहां वेद के कतिपय विद्वान् इसे वेद के इन्दु शब्द का वर्धित रूप मानते हैं। ये दोनों ही मान्यताएं मुझे अपील नहीं करती हैं।

हिन्दू नाम कितना पुराना है, यह एक नितान्त गौण प्रश्न है। मुख्य प्रश्न यह है कि यह नाम किसकी देन है और वह किस अर्थ में दिया गया था। हिन्दुस्थान में मुस्लिम वादशाहों के जीवन-चरितों तथा शाहनामों में हिन्दू और हिन्दुस्थान नामों का कहीं भी गर्हित अर्थों में प्रयोग नहीं हुआ है।

भारत पर सर्वप्रथम मुस्लिम आक्रमण आज से नौ सौ वर्षों पूर्व सुवक्तगीन ने किया था। उससे पूर्व तथा पश्चात् अरब, ईरान और काबुल के जितने पर्यटक तथा साहित्यकार हमारे देश में आए, उन पर्यटकों के विवरणों और उन साहित्यकारों की रचनाओं में कहीं एक शब्द भी इस मान्यता का पोषक नहीं है कि हिन्दू तथा हिन्दुस्थान नाम आक्रान्ता मुस्लिमों की देन हैं और वह भी गन्दे अर्थों में। उन विवरणों तथा रचनाओं से यह भी प्रकट होता है कि सुवक्तगीन के आक्रमण से पूर्व भी यह जाति हिन्दू और यह देश हिन्दोस्तान के नाम से उल्लिखित होता था। इन दोनों नामों का प्रयोग उनमें अहतराम [सम्मान] के साथ किया गया है। किसी-किसी ने तो इस देश को 'पाक सर.जमीने हिन्दू' लिखा है। अहदे सुवक्तगीन में दोनों नाम आदर के साथ लिये गये हैं।

यदि हिन्दू शब्द मेरुतन्त्र के अतिरिक्त अन्य किसी पुराने ग्रन्थ में उल्लिखित नहीं है तो यह संस्कृत के साहित्यकारों की बौद्धिक कुण्ठा का सबूत है। एक हजार वर्ष से पूर्व के संस्कृत-ग्रन्थों में इस शब्द का न होना स्वाभाविक है। संस्कृत इस देश की अपनी ही भाषा है और उसमें देश तथा जाति के सहस्राब्द से प्रचलित नामों का उल्लेख न होना गौरव का नहीं, लज्जा का विषय है। एक ओर अंग्रेजी है जो संसार के लाखों शब्दों को पचा चुकी है और अपने शब्दभंडार में प्रतिवर्ष बीस हजार शब्द पचा लेती है। दूसरी ओर संस्कृत है जो स्वदेश के दो व्यापक शब्दों को न पचा सकी, जबकि उसकी धातुओं तथा व्याकरणों में इतनी क्षमता है कि विश्व की किसी भी भाषा के किसी भी शब्द को वह सहजतया अपने रूप से निरूपित कर सकती है।

जिस प्रकार डेढ़-दो सौ वर्षों के अंग्रेजी राज्य में हमने विदेशी शासकों द्वारा प्रदत्त 'इण्डिया' तथा 'इण्डियन' शब्दों को स्वीकार कर लिया वैसे ही मुस्लिम शासकों द्वारा प्रदत्त हिन्दू और हिन्दुस्थान नामों को हमने स्वीकारा होगा—यह तर्क टिकाऊ नहीं है। इण्डिया तथा इण्डियन नामों को इस देश की, संम्पूर्ण तो क्या, अधिकांश जनता ने भी स्वीकार नहीं किया है। इन नामों का प्रचलन देश के उन कुछ सहस्र अथवा लाख व्यक्तियों तक ही सीमित है जो अपना सब काम-काज अंग्रेजी में ही करने के अभ्यस्त हैं। साथ ही, यह बात भी है कि इन दोनों नामों के अर्थ किसी भी प्रकार से हेय नहीं किये जाते हैं। फिर, ये शब्द भी हिन्दू के ही तो रूपान्तर हैं।

विचारणीय मूल प्रश्न यह है कि विश्व के इतिहास में क्या कहीं कोई एक भी उदाहरण ऐसा है कि किसी देश ने विदेशियों द्वारा प्रदत्त, जाति और देश के गर्हित अर्थ वाले नामों को एक दिन के लिये भी स्वीकार किया हो ? निश्चय ही इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट और निश्चित नहीं है। हिन्दू शब्द कब, कैसे, किस प्रकार प्रचलित हुआ और संस्कृत-व्याकरण की दृष्टि से उसकी व्युत्पत्ति तथा अर्थ क्या क्या है, यह खोज का विषय हो सकता है। मैं मानता हूं कि हमारा आदि नाम आर्य है और आर्य शब्द हिन्दू शब्द की अपेक्षा कहीं अधिक प्रेरक तथा व्यापक है। यह भी निश्चय है कि अन्ततः यह देश आर्यावर्त ही कहलाएगा और यह जाति आर्य जाति ही कहलाएगी। पर वस्तुस्थिति यह है कि इस जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिये जिस सुसंगठन की आवश्यकता है वह आज हिन्दू नाम से ही सिद्ध होगा, अन्यथा नहीं। आर्यजनों से मैं कहूंगा कि वे गौण बातों को पीछे करके मुख्य समस्याओं पर अपने विचारों को केन्द्रित करें।

मैं पुनः दोहराता हूं कि हिन्दू नाम के बुरे अर्थ होते तो विदेशियों से निरन्तर लोहा लेने वाले, आर्यवीर अपने आपको हिन्दू और अपने देश को हिन्दुस्थान कहलाना कदापि स्वीकार न करते। फिर, जिस नाम को जाति-की-जाति स्वीकार कर चुकी है उसके विषय में अपावन भावनाओं का द्योतन जातीयता की दृष्टि से किसी भी प्रकार हितकर न होगा।

राष्ट्रनिष्ठा की आवश्यकता

इस पृथिवी के सम्पूर्ण इतिहास में हम ही वे बेगैरत हैं जिन्होंने स्वयं अपनी स्वीकृति से, अपनी आंखों के सामने, विना किसी प्रतिकार के, अपनी मातृभूमि के टुकड़े-टुकड़े होने दिए, जिन्होंने देश के विभाजन पर जल्से किए और जश्न मनाए, जिन्होंने, विभाजन की पीड़ा से सिसकती हुई मातृभूमि की छाती पर शराव पी-पीकर नृत्य किए, जिन्होंने मातृभूमि के घावों पर खुशी से दीप जलाए।

सव व्याधियों की एकमात्र चिकित्सा है हिन्दुस्थान के जन-जन में देशप्रेम तथा राष्ट्रनिष्ठा की भावना का संचार। यदि स्वतन्त्रता की प्राप्ति के क्षण से ही शासन और शासित इस दिशा में कुछ कारगर कदम उठाते तो आज यह दुरवस्था न होती। मुझे इस दिशा में आशा की एक कोर भी दिखाई नहीं देती कि यहां का अहिन्दू-वर्ग सामूहिक रूप से निकट भविष्य में देशभक्त और राष्ट्रनिष्ठ वन सकेगा। अहिन्दू-वर्ग में अपवाद-रूपेण इने-गिने व्यक्ति देशभक्त और राष्ट्रनिष्ठ हुए हैं, आज भी हैं और कल भी होंगे। मेरी मान्यता तो यह है कि हिन्दू हों वा मुसलमान, ईसाई हों वा पारसी, कोई भी क्यों न हों, जिन्हें देश को वेश-भूषा, भाषा तथा जीवन-पद्धति से लगाव और प्यार नहीं है, जिन्हें देश की मिट्टी, नदी-नालों, वन-पर्वतों तथा पूर्वजों में निजता को अनुभूति नहीं है उनसे देशप्रेम और राष्ट्रनिष्ठा की आशा करना आशा का उपहास करना है। जिन्हें वन्दे मातरम् गान तथा झण्डाभिवादन में तो बुतपरस्ती को बू आती है, किन्तु जो कब्रपरस्ती को बुतपरस्ती नहीं समझते, उनमें देशभक्ति तथा राष्ट्रनिष्ठा कैसे स्थापित होगी, यह एक विकट समस्या है। अंगरेजी भाषा तथा वेश-भूषा की ऐंठ में जो अपने देशवासियों को हेयता के साथ हिन्दीवाला और धोती-पायजामा-वाला कहकर पुकारते हैं उन्हें कैसे देशप्रेम तथा राष्ट्रनिष्ठा से अलंकृत किया जाए, यह एक पहेली है। करोड़ों हिन्दू जो पेट भरने और धन वटोरने के लिए रात-दिन भ्रष्टाचार और अनाचार में लथ-पथ हैं, उन्हें देशप्रेम

तथा राष्ट्रनिष्ठा से कैसे दीक्षित किया जाए, यह गहन चिंतन का विषय है। देश की जिन राजनीतिक पार्टियों का एकमात्र धन्धा वा लक्ष्य अशान्ति फैलाना, वोट बटोरना और शासन हथियाना है, उनके सभ्य-सभ्याओं को कैसे देश का दीवाना और राष्ट्र का पर्वाना वनाया जाए, वह एक कठोर प्रश्न है। और सर्वातिशय गर्हित प्रश्न तो यह है कि हिन्दुस्थान में रहकर जो यहां पाकिस्तान की हुकूमत कायम करने के षड्यंत्र रच रहे हैं उनके मानस को कैसे पलटा जाए।

जब मैं यह हिसाव लगाने लगता हूं कि मेरी मातृभूमि के करोड़ों पुत्र-पुत्रियों में से कितने हैं जिन्हें वास्तव में देशभक्त और राष्ट्रनिष्ठ कहा जा सकता है, तो मेरी आंखों के सामने अंधेरा-सा छाने लगता है। तथापि समस्या का समाधान तो खोजना ही होगा।

हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्थान

हताश होने से काम न चलेगा। विश्व के इतिहास में ऐसे असंख्य प्रसंग हैं जहां जातियों ने सव कुछ खोकर फिर सब कुछ प्राप्त किया है और विनाशों की भस्म पर स्वर्णिम निर्माण किए हैं। विश्वेतिहास के अध्यायों में ऐसा ही एक नया अध्याय हमें जटित करना है।

निश्चय ही, यह दोहराने की आवश्यकता नहीं कि हिन्दी, हिन्दुस्थान, हिन्दू—इस त्रित के आश्रय से हिन्दू जाति में देशभक्ति और राष्ट्रनिष्ठा की अविलम्ब स्थापना की जा सकती है। और यह प्रत्यक्ष है कि हिन्दू जाति के सुसंगठित होकर देशभक्त और राष्ट्रनिष्ठ वन जाने पर यह जाति अजेय और अदम्य वन जायेगी। यह स्पष्ट ही है कि हिन्दू जाति के अजेय और अदम्य वन जाने पर ही इस देश में निवास करने वाले हिन्दू रक्त मुसलमान तथा ईसाई हिन्दू जाति के तनू में उसी प्रकार विलीन हो जाएंगे जिस प्रकार नदियां समुद्र में विलीन हो जाती है।

इतिहास के इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि महाभारत के बाद के गत पांच हजार वर्षों के इतिहास में दयानन्द महान् प्रथम व्यक्ति था जिसने इस देश में स्वराज्य की उद्घोषणा की थी और आर्यसमाज प्रथम संस्था थी जिसने समूचे हिन्दुस्थान में स्वतन्त्रता की भावना की संव्याप्ति की थी। यह भी एक ऐतिहासिक, अकाट्य सत्य है कि आर्यसमाज के नितान्त शिथिल हो जाने पर ही ब्रह्मर्षि पं० मदनमोहन मालवीय तथा

देवतास्वरूप भाई परमानन्द को हिन्दु महासभा की स्थापना तथा प्रसाधना करनी पड़ी थी।

हिन्दु जाति को सुसंगठित करके राष्ट्रीयता के सूत्र में पिरोने का सुकार्य देश की किसी राजनैतिक पार्टी द्वारा कदापि न किया जा सकेगा। यह कार्य तो हिन्दुओं की सामाजिक तथा धार्मिक संस्थाओं द्वारा ही किया जाएगा। नवोदित विश्व-हिन्दू-परिषद् एक ऐसी संस्था है जिसमें हिन्दुओं के सभी वर्गों तथा सम्प्रदायों के व्यक्तियों का सहयोगात्मक समावेश है। सभी को उक्त परिषद् की शक्ति तथा आर्थिक स्थिति को समर्थ बनाने की दिशा में सक्रिय पग उठाने चाहिएं।

हिन्दू राष्ट्रवाद की व्याप्ति के लिए हिन्दूसंगठन की दिशा में व्यापक पग उठाना चाहिए। हिन्दुओं की समस्त धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाओं का सहकार अथवा सहचार इस सुसाधन का मूलाधार होगा। हिन्दुओं की किसी भी संस्था के स्वस्थ और निरापद कार्यक्रमों में सभी जातियों, वर्गों तथा मान्यताओं के हिन्दुओं को हृदय के सम्पूर्ण सौहार्द और मस्तिष्क के सम्पूर्ण औदार्य के साथ सम्मिलित होना चाहिए। संकीर्णता ने हमें विगठित और जीर्ण-शीर्ण कर दिया है।

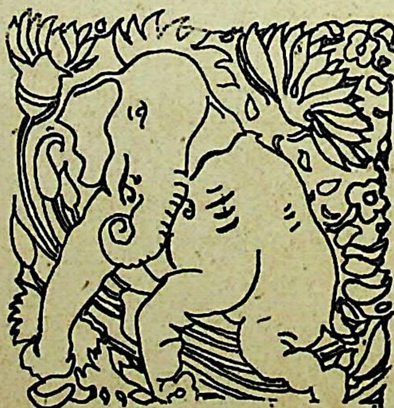


अपरंपार बल

स्व० रामधारी सिंह दिनकर

सिंधु सा उद्दाम, अपरंपार
मेरा वल कहाँ है
गूंजता जिस शक्ति का—
सर्वत्र जय जय कार—
उस अटल संकल्प का संबल कहाँ है ?
यह शिला सा वक्ष, ये चट्टान सी मेरी भुजायें।
सूर्य के आलोक से दीपित सम्मुन्नत भाल।
मेरे प्राण का सागर अगम उत्ताल उच्छल है।
सामने टिकते नहीं गजराज, पर्वत डोलते हैं—
कांपता है कुंडली मारे समय का व्याल -
मेरी बांह में मारुत गरुड़ गजराज का बल है।

—'उर्वशी से'



वन्दे मातरम्

सुजलां सुफलां मलयजशीतलां
शस्यश्यामलां मातरम्
शुभ्र ज्योत्स्नां पुलकितयामिनीं
फुल्ल-कुसुमित-द्रुमदल शोभिनीं
सुहासिनीं सुमधुरभाषिणीं
सुखदां वरदां मातरम् ॥ वन्दे० ॥

त्रिंश कोटि कंठ कलकल निनाद कराले !
द्विंत्रिंश कोटि भुजैर्धृत खर-करवाले !
के बोले, मां तुमि अबले !
बहुबलधारिणीं रिपुदलवारिणीं
नमामि तारिणीं मातरम् ॥ वन्दे० ॥

तुमि विद्या, तुमि धर्म, हृदये तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे
बाहु ते तुमि मां शक्ति !
हृदये तुमि मां भक्ति !
तोमार प्रतिमा गड़ी
मन्दिरे मन्दिरे मातरम् ॥ वन्दे० ॥

त्वं हि दुर्गा दश प्रहरणधारिणी,
कमला कमल दल विहारिणी
वारिणी विद्यादायिनी नमामि त्वाम् ।
नमामि कमलां अमलां अतुलां
सुजलां सुफलां मातरम् ॥ वन्दे० ॥

श्यामलां सरलां सुस्मिताम् भूषितां
धरणीं भरणीं मातरम् ।
वन्दे मातरम् ॥

यू० १०३/८१ लाइसेंस टु पोस्ट विदाउट प्रीपेमेन्ट
रजिस्ट्रेशन नं० आर० एन० आई० ११६३/७२
डी०सी० (४०६)
१८ अक्तूबर १९८१

हिन्दुत्व की ज्योति

"मैं कट्टर हिन्दू हूं। हमारी विचार धारा, हमारी दृष्टि और हमारे शरीर भी इतने विकृत हो गए हैं कि हम आज हिन्दुत्व से ही इन्कार करने लगे हैं। सत्य की सतत खोज करते रहना ही तो हिन्दुत्व है और अगर आज हिन्दुत्व निष्प्राण, निष्क्रिय और अवरुद्ध है तो उसका मात्र कारण यही है कि हम अशक्त और शिथिल हो गए हैं। और ज्यों ही हमारे अन्दर शक्ति का संचार होगा उसी क्षण हिन्दुत्व की अभूतपूर्व ज्योति संसार पर छिटक जाएगा। हिन्दुत्व में ईसाई, मुसलमान और यहूदी को भी आश्रय प्रदान करने की क्षमता है।

भारत के अधिकांश मुसलमान वे हैं; जिन्होंने परिस्थितियों से विवश होकर हिन्दू धर्म छोड़कर इस्लाम धर्म को कबूल किया था। वे आज भी अनेक बातों में हिन्दू ही हैं और स्वतन्त्र, समृद्ध एवं प्रगतिशील भारत में यदि वे अपने प्राचीन धर्म एवं जीवन-पद्धति को पुनः अपना लें तो यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया ही होगी।

—महात्मा गांधी

